मानवी
वर्ष 2 अंक 2
त्रैमासिक साहित्यिक ई पत्रिका
अप्रैल - जून 2022

# दादाजी का बैग

कविता सिंह...✍️

किया प्रणाम छूआ लैग
दादा जी का खोला बैग

सोचा जिसमे होगा लड्डू
निकला उसमें मकई का सत्तू

खोला जैसे ही पैकेट दूजा
उसमें निकला चने का भुंजा

खाना था हमको बर्गर पिज्जा
बाबा लेकर आये भरवा मिच्चा

बोलो दादी क्या क्या दीं
बोले दादी भेजीं देशी घी

सेहत का बच्चों करो विचार
अच्छा है आंवले का अचार

लक्खठा,नमकीन में है स्वाद
दादा जी की बातें रखो याद।

सम्पादक -राजेश कुमार सिंह
********
उप- सम्पादक -कविता सिंह
********
परामर्शमण्डल -डॉ राधेश्याम तिवारी
********
आवरण -चित्र -तेजस सिंह
********
ई मेल -
manvipatrika@gmail.com
********
वेब -
http://www.manvipatrika.co.in/
********
संरक्षक
श्रीमती जानकी किशोरी देवी एवं
श्री राम चन्द्र सिंह
********
पता -कार्यकारी -बी -701 ,स्वाति फ्लोरेंस ,
निकट सोबो सेंटर ,साउथ बोपल ,अहमदाबाद - 380058

स्थायी - 274/x ,शक्ति णगर कालोनी ,आरोग्य मंदिर ,गोरखपुर -273003
मोब -9833775798



मानवी पत्रिका में प्रकाशित लेख /काव्य आदि रचनाकारों के अपने विचार है ,जिनसे प्रकाशक/ संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है । सभी विवादों का न्याय क्षेत्र गोरखपुर रहेगा । रचना की मौलिकता का दायित्व रचनाकार का है पत्रिका से जुड़े सभी पद अवैतनिक है ।

*पत्रिका आप सभी मित्रों से रचनात्मक सहयोग के अलावा अर्थ-सहयोग का भी निवेदन करती है, यह स्वैच्छिक है आप पेटिएम नं -9833775798 पर स्वेच्छा से यथासंभव धनराशि सहयोग के रुप में अंतरित कर सकते हैं।*



**वर्ष –2 ,अंक –2 (अप्रैल - जून , 2022 )**

**त्रैमासिक ई -पत्रिका**


## इस अंक में —


**4- संपादक की कलम से**

**5- काव्य धरोहर**

**लेख /आलेख -**

6- प्रो.आमलपुरे सूर्यकांत विश्वनाथ,
9- डॉ लोकेन्द्रसिंह कोट ,
11- राजकुमार इन्द्रेश,
13- डा. रश्मि तिवारी,
15-शराफत आली खान ,
17- विनय बंसल,
19- कृष्ण कुमार यादव,
22- अर्चना रॉय,
23-सुरेखा शर्मा,
25-अनुपमा अनुश्री

**व्यंग्य -**

26-भारती यादव ' मेधा'

**कहानी -**

28-मनीष कुमार सिंह,
31- अमित कुमार मल्ल,
33- हीरा सिंह,
34-अर्चना त्यागी,
36- संगीता कुमारी
38- राकेश कुमार तगाला,
40- मीनाक्षी शुक्ला,

**लघुकथा**

8-स्वीटी सिंघल' सखी,'
14- अंकुर रंजन,
18- डॉ दलजीत कौर ,
18-भगवती सक्सेना गौड़,
30- बीना शुक्ला अवस्थी,
37- हेमलता शर्मा' भोली बेन',
37- संजय श्रीवास्तव,
39 -कुमकुम कुमारी" काव्याकृति, "
43-श्वेत कुमार सिन्हा",

**काव्य /हाइकु /ग़ज़ल**

02- कविता सिंह
21-अमलेन्दु शुक्ल,
27- हमीद कानपुरी ,
27- कैलाश मनहर,
35- डॉ. संध्या शुक्ल' मृदुल,'
42-डॉ उमेश चंद्र शुक्ल ,
44-नलिन खोईवाल,
45-बलविन्दर'बालम' ,
45-नेतलाल यादव,
46-सारिका भूषण,
47-शीतल शैलेन्द्र" देवयानी,"
47-रेखा शाह आरबी,
47-मीरा सिंह" मीरा"
48-अर्चना तिवारी ,
48-डा .नीना छिब्बर ,
48-श्वेता दूहन देशवाल,
49-डॉ.लक्ष्मीकांत शर्मा,
49-रवींद्र कुमार शर्मा,
50-प्रोमिला भारद्वाज ,
50-रंजना फतेपुरकर
51-डॉ अरुण तिवारी गोपाल ,
52- समीर उपाध्याय ,
52-पंकज मिश्र' अटल ',
52-राजेश बनारसी बाबू,
54-सुनीता तिवारी,
54-सरिता प्रजापति ,
62- शलभ गुप्ता ,
62- नागेन्द्र नाथ गुप्ता,
64-विज्ञान व्रत,
64-सोनिया सैनी,
64-मनीषा' सुमन, '
66-सरिता सिंह

**पुस्तक समीक्षा -**

55- डॉ. कान्ति लाल यादव
56- राजेश सिंह
58- राजेश सिंह
60- मुक्तेश्वर मुकेश,
63-प्रीति शर्मा असीम

**बाल कहानी**

53 - डॉ० कुसुम रानी नैथानी,

**बाल गीत**

54 - डॉ. सुरेन्द्र दत्त सेमल्टी

**साहित्य समाचार**

65- रवि शंकर सिंह ,
67-सुनीता धीमान

**69 -** चित्रकला -तेजसी सिंह

**69 -रचनाकारों से ...**

# संपादक की कलम से ...

**"युद्ध किसी समस्या का हल नहीं है, यह स्वयं एक समस्या है।"** भले ही युद्ध की वजह राष्ट्राध्यक्षों की सनक होती है पर इसके परिणाम तो आम जनता स्त्रियां गरीब और बच्चे ही भुगतते हैं। युद्ध एक न एक दिन खत्म हो जाता है ,लेकिन उसके निशान सदियों तक बने रहते है । उसकी अमानवीयता, बर्बरता सदियों तक लोगों का दिल दहलाती रहती है। कोई न कोई एक देश युद्ध जीत भी जाए ,तो उन लोगों का क्या जो बेघर हो गए ,उन माओं का क्या जिनकी गोदें उजड़ गई ,उन पत्नियों का क्या जिनका सुहाग उजड़ गया , उन बच्चों का क्या जिनसे सर से माँ बाप का हाथ उठ गया ।

विकास के इस उच्च स्तर पर पहुंच कर , क़बीलाई संस्कृति सा बर्ताव , कहीं न कहीं यह सोचने पर मजबूर करता है, कि हम किस दिशा की ओर अग्रसर है। हम किस तरह की वैश्विक संस्कृति को बढ़ावा दे रहें है । हम अपने आने वाले भविष्य को किस तरह का संसार सौंपने जा रहें है। नैतिकता, संवेदनशीलता नहीं रहने पर दाढ़ी बनाने वाला उस्तरा ,गला रेतने पर आमादा है।

1914 और 1939 के बाद भी हमारी आँखें नहीं खुल रहीं हैं। हम पुनः चाहते न चाहते हुए भी युद्ध की तरफ बढ़ रहें है। विश्व में और मुसीबतें कम है क्या कि , हम एक नई समस्या को आमंत्रित कर रहें है, यह जानते हुए भी के युद्ध से हमेशा विनाश ही हुआ है ,और युद्ध के बाद अराजकता ही फैली है।

इन दिनों देश का ध्रुवीकरण बड़ी तेजी से हो रहा है। उकसाना प्रायोजित है, इस पर किसी का ध्यान नहीं है। कुछ लोग अपने फायदे के लिए उकसाते हैं और भोली जनता उकस कर नारे लगाने लगती है , जुलूस निकाल कर अपनी ताकत दिखाने लगती है। जो भी हो , धर्म जब अधरमियों के हाथ में आता है तब आक्रामकता दिखने लगती हैं। धर्म को अपने हिसाब से लोग पारिभाषित करते हैं। वहीं लोग धर्म के ठेकेदार बन जाते हैं, जिन्हें धर्म का क... ख... ग.... कुछ भी नहीं मालूम। यह और कुछ नहीं जाहिल होने की पराकाष्ठा है,मानव चिंतन और मानसिक विकास पर ,सोची समझी रणनीति का करारा प्रहार और उसे वापस स्टोन एज में ले जाने की साज़िश है।
लोगों को अपनी समझ का परिचय देते हुए इन सबसे बचना चाहिए। ऐसे समय ज्यादातर मीडिया आग में घी का तड़का लगा रही होती है, तो साहित्यकारों की जिम्मेदारी बनती है कि जनता को सच्चाई से अवगत करायें ,मानवता का पाठ पढायें।

आजकल बहुत सारे लोग , बहुत कुछ लिख रहें हैं। बहुत छप भी रहें हैं। तमाम तरह के पुरुस्कारों की झड़ी लगी हुई है । पर इन सब के बीच साहित्य की गुणवत्ता नदारद हैं। साहित्य में भेंड़चाल दिखाई देती है। हर तीसरा व्यक्ति अपने को लेखक ,कवि कहने और कहलवाने पर उतारू है। बातें भी ऐसी कि साहित्य का अगला नोबल पुरस्कार उन्हीं को मिलने वाला है। अगर नहीं मिल रहा है तो जरुर संस्था में खोट है। स्वयंभू लेखक , कवियों से आग्रह है, महान लेखकों , कवियों को पढ़ें , उन्हें जाने समझें ,और उनके जैसी सोच और गहराई विकसित करें। उसके बाद साहित्य सृजन करें ,यही साहित्य की सच्ची सेवा होगी।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे संतु निरामया: इन्ही सुभकामनाओं के साथ .....

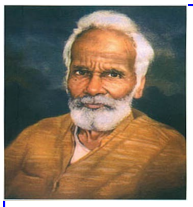

नागार्जुन

## "गुपचुप  हजम करोगे"

कच्ची हजम करोगे
पक्की हजम करोगे
चूल्हा हजम करोगे
चक्की हजम करोगे

बोफ़ोर्स की दलाली
गुपचुप हजम करोगे
नित राजघाट जाकर
बापू-भजन करोगे

वरदान भी मिलेगा
जयगान भी मिलेगा
चाटोगे फैक्स फेयर
दिल के कमल खिलेंग

फोटे के हित उधारी
मुस्कान रोज दोगे
सौ गालियाँ सुनोगे
तब एक भोज दोगे

फिर संसदें जुड़ेंगी
फिर से करोगे वादे
दीखोगे नित नए तुम
उजली हँसी में सादे

बोफ़ोर्स की दलाली
गुपचुप हजम करोगे
नित राजघाट जाकर
बापू-भजन करोगे

कुँअर बेचैन

## "दिन बहुत गर्म हैं आजकल के"

रोज़ आते हैं चेहरे बदल के।

दिन बहुत गर्म हैं आजकल के।

धूप अंगार बरसा रही है

छाँव हर बार तरसा रही है

भोर आतंक की सहचरी है

साँझ भी आज कितनी डरी है

हैं सितारे ये, छींटे गरल के।

दिन बहुत गर्म हैं आजकल के।

इस क़दर धूल उड़ने लगी है

अब कहाँ फूल पर ताज़गी है

सिर्फ़ काँटे बड़े हो रहे हैं

हर क़दम पर खड़े हो रहे हैं

फूल तो हैं यहाँ एक पल के।
दिन बहुत गर्म हैं आजकल के।

**प्रो.आमलपुरे सूर्यकांत विश्वनाथ**
(हिंदी विभाग अध्यक्ष )
डॉ श्री .नानासाहेब धर्माधिकारी कालेज कोलाड, तहसील -रोहा जिला -रायगड ,
महाराष्ट्र पिन -४०२३०४,

**लेख**

# विश्व में हिंदी का स्थान

**प्रस्तावना :-**

**दैवी वाचमजयंत देआस्था**
**विश्वरूपा पशच्वों बदनती ।।**
**ऋग्वेद -८ / १००-११**

अर्थात देवों द्वारा उत्पन्न वाणी आज समग्र प्राणी जगत में व्याप्त हुई है । समग्र देश में जिसका अधिकतम प्रयोग हो रहा है यह भाषा हिंदी है। विश्व की सर्वथा प्राचीन भाषा संस्कृत रही है। हिंदी संस्कृत भाषा की कन्या है । हिंदी में विश्व की समस्त भाषाओं को आत्मसात कर लेने की अद्भुत क्षमता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिंदी को राजभाषा का दर्जा प्राप्त हुआ। विशाल शब्दकोश है , विपुल साहित्य सामग्री भी है, तकनीकी एवं इंटरनेट में भी हिंदी का प्रयोग हो रहा है ,फिर भी राष्ट्रभाषा का दर्जा नहीं मिला है। विश्व भाषा के रूप में यदि हमें हिंदी को प्रतिष्ठित करना है तो हमें अपनी भाषा को बलवान बनाना होगा। हिंदी भाषा के कार्यों का विस्तार करना होगा । हर नए अविष्कार ,हर नए उपक्रम ,हर एक नई सोच से हिंदी को जोड़ना होगा। हमारी शिक्षा प्रणाली में हिंदी को महत्वपूर्ण एवं सम्माननीय स्थान देना होगा। हिंदी को राष्ट्र की ठोस आवश्यकता बनानी होगी। खास करके हिंदी पढ़ने लिखने वालों को हिंदी रूपी धरोहर की सुरक्षा करनी होगी। जिससे हिंदी को राष्ट्र के साथ-साथ अंतरराष्ट्रीय मंच पर भी समृद्धि के साथ अंतरराष्ट्रीय मंच प्राप्त हो सके।

हिंदी के उपयोग और प्रचार प्रसार के लिए आवश्यक प्रौद्योगिकी उपलब्ध है। विश्व में अब वही भाषा लोकप्रिय होगी जिसका व्याकरण विज्ञान संगत होगा , जिसकी लिपिक कंप्यूटर की लिपि होगी ।इस दृष्टि से हिंदी काफी समृद्ध रही है। कोई भी भाषा हमारे भावों की अभिव्यक्ति ही होती है। हर देश की पहचान उसकी भाषा होती है। उसी भाषा से उस देश की संस्कृति इतिहास का ज्ञान होता है । भाषा विद विलियम जॉन्स के अनुसार - "हिंदी की जननी संस्कृत भाषा का शब्द भंडार विलियम जोंस लैटिन से भी कहीं ज्यादा व्यापक और परिष्कृत है । अगर भाषा का इतिहास देखें तो पता चलता है कि संस्कृत लेटिन भाषा से भी ज्यादा प्राचीन है । लैटिन भाषा की उत्पत्ति 700 ईसा पूर्व मानी है। " - १

हिंदी विश्व की सबसे ज्यादा समर्थ धनी और वैज्ञानिक भाषा है जिसमें जो हवा से निकले जा सकने वाली हर संभव ध्वनि उच्चारण के लिए स्वर और व्यंजन से सुसज्जित शब्द है । इसका विशालतम मगर सुगम व्याकरण हिंदी को बेहद सरल सुगठित और आसानी से सीखने योग्य बनाता है । बोलने वालों की संख्या से आजसंयुक्त राष्ट्र अमेरिका में 8.63 प्रतिशत मॉरिशस में 685170 लोग बोलते , साउथ अफ्रीका में 854205 यमन में 30027 युगांडा में 14700 सिंगापुर में 5000 नेपाल जर्मनी जापान में बहुत है सबसे ज्यादा न्यूजीलैंड देश में हिंदी भाषा समुदाय हिंदी भाषा बोलते हैं।

21वीं सदी में विश्व भर में भारत और चीन का दबदबा बढ़ता रहा है । ई-कॉमर्स, ई बुक का निर्माण करना चाहिए यहां तक कि सोशल नेटवर्क साइट ट्विटर की तरह हिंदी बोलने समझने वालों के लिए भारत में मूषक नामक सोशल नेटवर्किंग साइट अपने भारत में ही बनाई गई है। देश - विदेशों में 25 से अधिक पत्र-पत्रिकाओं का हिंदी में प्रकाशन हो गया है। बहुत से विदेशी भाषा का अनुवाद हिंदी भाषा में हुआ है विश्व के 150 से भी ज्याद विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्ययन अध्यापन तथा शोध कार्य चल रहा है ।

आज सर्वाधिक शक्तिशाली भाषाओं में हिंदी को शामिल किया गया है । विश्व में हिंदी की एक अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में स्थापित करने और विश्व हिंदी सम्मेलन को आयोजित किए जाने के लिए 11 फरवरी 2008 को विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना की गई है और 2018 से संयुक्त राष्ट्र संघ ने एक साप्ताहिक हिंदी न्यूज़ बुलेटिन प्रारंभ कर विश्व में हिंदी की महत्ता को बढ़ावा दिया है । आज के इस वैश्विक दौर में हिंदी गांव की गलियों से निकलकर आकाश की ऊंचाइयों को छू रही है। जिसका इंतजार हम सभी भारतीयों को था महात्मा गांधी ने इसका प्रारंभ किया है वे कहते हैं - "राष्ट्रभाषा के बिना देश गूंगा है।"कवि बंकिम चंद्र चटर्जी ने कहा था - ' हिंदी एक दिन भारत की राष्ट्रभाषा होकर रहेगी। हिंदी भाषा की सहायता से भारत के विभिन्न प्रदेशों में जो एक के बंधन जो एक के बंधन स्थापित करेगा वहीं भारत बंधु कहलाने योग्य होगा। '

भारत अंत: विश्व भाषा के रूप में जब हिंदी की बात आती है तो यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि, हिंदी में विश्व

भाषा बनने की पूर्ण क्षमता है । आज जब विश्व पटल पर भारत एक आर्थिक शक्ति और राजनीतिकशक्ति के रूप में उभर रहा है।तब अन्य देशों द्वारा उसकी भाषा को चाह कर भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। विश्व भाषा के रूप में हिंदी कोई सपना नहीं बल्कि नए विश्व की एक मांग है। परिणाम स्वरूप हिंदी एक राष्ट्र की भाषा ना रह कर विश्व भर की भाषा बन गई है । जन संचार के विभिन्न माध्यमों ने हिंदी को विश्व स्तर पर एक नई पहचान दी है । आज हिंदी धर्म ,साहित्य ,अध्यात्म ,मातृभाषा ही नहीं रही अपितु शिक्षा ,सूचना , प्रौद्योगिकी , मनोरंजन, व्यवसाय उपार्जन तथा रोजगार की भाषा भी बन चुकी है । संसार के एक कोने से दूसरे कोने तक हिंदी के प्रचार और प्रसार में जनसंचार माध्यमों की अहम भूमिका है । इस समय संचार का ऐसा कोई माध्यम नहीं है जिस पर हिंदी का प्रभाव ना हो । अर्पण कुमार कहते हैं - "आज पूरे विश्व में विभिन्न माध्यमों से पूरी अपनी धाक जमा रही है। कहने की जरूरत नहीं की भाषा और साहित्य के प्रचार प्रसार के पीछे लेखकों की राष्ट्रीयता सक्रियता प्रकाश को का उत्साह और इन सबसे बढ़कर पाठकों के जुनून की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, जिस तरह देवकीनंदन खत्री रचित चंद्रकांता कोपढ़ने के लिए भारत में गैर हिंदी भाषियों ने हिंदी सीखना शुरू किया।इसी तरह हिंदी के विभिन्न मनभावन साहित्य को पढ़ने समझने के लिए अलग-अलग कालों में लोग हिंदी को सीखने की कोशिश करते हैं।

हिंदी आज सिर्फ साहित्य की भाषा नहीं बल्कि बाजार की भाषा बन गई है। वैश्विक परिदृश्य में हिंदी अपनी जगह बना रही है भूमंडलीकरण के इस दौर में हिंदी की भूमिका संपर्क संप्रेषण और सानिध्य की है तथा जिसे हिंदी बखूबी निभा रही है। यूरोपीय देशों में कुछ विद्वानों ने हिंदी भाषा के प्रचार - प्रसार में अति महत्वपूर्ण कार्य किया है। फ्रांस में 1975 आधुनिक विश्व पूर्वी भाषा का संस्थान स्थापित किया गया था। हिंदी भाषा और साहित्य ने वैश्विक संदर्भ में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है । हिंदी का विकास शोध के क्षेत्र में भी लगातार हो रहा है। हिंदी कहानी के उद्भव और विकास के इतिहास को मॉरीशस और भारत के कुछ इतिहास लेखक को तथा मॉरीशस के कथा साहित्य पर शोध करने वाले विद्वानों ने रेखांकित करने का प्रयास किया है ।

अभी हाल ही में महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा द्वारा हिंदी माध्यम में एम.बी.ए.का पाठ्यक्रम आरंभ किया है। हिंदी का वैश्विक स्तर व्यापक होने के कारण सबसे बड़ा असर शिक्षा पर हुआ है। मूलतः हिंदी साहित्य का सृजन दुनिया के जिन जगहों पर हो रहा है उनमें हमें कुछ खास वर्ग नजर आते हैं। जैसे -

१)जहां प्रवासी भारतीय विपुल संख्या में होते हैं - मॉरीशस , फिजी , सुरीनाम , गुयाना, त्रिनिदाद, दक्षिण अफ्रीका आदि।

२) हिंदुस्तान के पड़ोसी देश - पाकिस्तान , भूतान , नेपाल, बांग्लादेश श्रीलंका, आदि ।

३) भारतीय संस्कृति से प्रभावित देश - मलेशिया इंडोनेशिया थाईलैंड चीन जापान आदि ।

४) आधुनिक भाषा के रूप में -अमेरिका , कनाडा, ऑस्ट्रेलिया , इंग्लैंडआदि।

५) अरब तथा इस्लामी देश -अफगानिस्तान , मिश्र , उज़्बेकिस्तान , कजाकिस्तान , संयुक्त अरब आदि।

26 सितंबर २०१५ को देश के प्रधानमंत्री मोदी जी ने अमेरिकी कंपनियों के मुख्य कार्यकारी अधिकारियों को संबोधित करते हुए कहा था कहा था - " सोशल मीडिया दुनिया को बदल दिया है। गूगल फेसबुक ट्विटर इंस्टाग्राम हमारे पड़ोसी है। दूर - दराज के लोगों को भी फायदा पहुंचाया है। "- ३

हिंदी विश्व की प्रथम भाषा बनने का सरल अर्थ है कि हमारे प्रधानमंत्री मोदी के द्वारा किए गए प्रयासों से स्पष्ट होता है कि व्यापार जगत की भाषा में हिंदी का विशेष ध्यान रहे इसके लिए हिंदी को अधिक सक्षम बनाना होगा ।इसका सीधा अर्थ है हमारे देश को समृद्ध बनाना होगा । आज मीडिया में भी हिंदी का प्रयोग हो रहा है यह निश्चय ही सराहनीय है। विश्व स्तर पर हिंदी की व्याप्ति मूलतः तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। आज हिंदी पूरे विश्व की भाषा बन गई है यह कहे तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।दो हजार वर्ष का हिंदी साहित्य आज विदेशों में बसे विदेशी हिंदी रचनाकारों की अपनी भाषा बन गई है ,जिसमें प्रमुख रचनाकारों में - दिव्या माथुर , तजेंद्र शर्मा ,सुषमा बेदी , नीनापोर्न ,सुधा ओम ढींगरा ,तुसीया तानकाजी, तान दिनेश चंद्र ,हरिलाल ,जय प्रकाश शर्मा , केशवदास , देवदत्त शर्मा , बृजेंद्र भगत आदि सैकड़ों रचनाकार का महत्व अधिक है।

**विश्व में हिंदी साहित्य**

विश्व स्तर पर हिंदी साहित्य का बोलबाला अधिक रहा है । साहित्यकारों ने अपने स्थान पर वहां कहानी, उपन्यास, नाटक ,कविता लिखे हैं। जितने भी प्रवासी साहित्यकार है तथा विदेश में रहते हैं उन सभी रचनाकारों ने हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। तभी पूरे विश्व में यह हिंदी साहित्य की गूँज हमें दिखाई देती है । मॉरीशस में कविताएँ ,कहानी, उपन्यास ,नाटक भी हिंदी में लिखे गए हैं । इसमें अहम भूमिका है अभिमन्यु अनत , बलवंत सिंह , सुमति संधू , जय नारायण राय , देवदत्त शर्मा आदि । हिंदी साहित्य को बढ़ावा देने का कार्य कमला प्रसाद मिश्र, काशीराम कुमुद, शिव प्रसाद ,सरस्वती देवी ,नेतराम शर्मा ,अमरजीत कौर, ईश्वरी प्रसाद चौधरी आदि ने किया है।जापान मेंतोशिया तानाकाजी , सुषमा बेदी , दिव्या माथुर , सुधा ओम ढींगरा, तजेंद्र शर्मा आदि ने किया है । अमेरिका में अंजना संधीर, भानुमति। नादान, पूजाबेन सेन, सुनीता आदि ने कार्य किया है । इटली में ज्योतिषी तोरी ,ठाकुर दत्त आदि साहित्यकारों ने किया है । इसीलिए विश्व स्तर पर यह हिंदी साहित्य बढ़ रहा है।अनुवाद नेआज अभिव्यक्ति की सीमाओं का विस्तार किया है। इसके बारे में स्वप्ना समेल लिखती है - " विश्व पटल पर अरूणिम आभा ,

विश्व - धरा पर विश्व गगन में,
उदित मुदित हिंदी की छवि अब,
सबके मन में और मनन में!
दुनिया के अधरोंपर हिंदी,
शोभित हिंदी सृष्टिनयन में। " -४

**निष्कर्ष :-**

निष्कर्ष रुप से हम कह सकते हैं कि आज हिंदीभाषा केवल भारत मेंही नहीं बल्कि विश्व के विराटफलक पर अपने अस्तित्व को आकार दे रही हैं।आज हिंदी भाषा विश्व भाषा के रुप में मान्यता प्राप्त करने की ओर अग्रेसर हैं। हिंदी भाषा का प्रचार प्रसार तेजी से बढ़ रहा है।विश्व के लग भग सभी देशों में इस भाषा की गूँज दिखाई देती हैं।

अंत में मै कहता हूँ - धरती गूँजे, आकाश गूँजे
गूँजे सारा जहां
विश्व में पंचम लहराती है,
हमारी हिंदीभाषा।

**संदर्भग्रंथ :-**

१)विलियमजोनस-विश्वस्नेहसमाज इलाहाबादमार्च२०२१ ,पृ.८
२)अर्पन कुमार -वैशविकहिंदीसाहित्य, पत्रिका - अभिव्यक्ति - से
३)नयी दुनिया(समाचारपत्र) विलासपुर २८सितंबर २०१५-से
४) स्वप्ना समेल - लेख - 'हिंदी को विश्व भाषा बनाने में वैज्ञानिक संसाधनोंएवं फिलमोकी भूमिका '- हिंदी का वैशविकसंदर्भपृ. २४६

*********

## लघुकथा

स्वीटी सिंघल 'सखी'
,बेंगलुरुकर्नाटक

### "दामाद"

आधी रात फ़ोन की घंटी बजी तो सीमा हड़बड़ाकर उठ बैठी।

"बेटा, तेरे पिताजी की तबीयत बिगड़ रही है, लगता है अभी अस्पताल ले जाना पड़ेगा।" माँ की काँपती आवाज़ ने सीमा की सारी नींद उड़ा दी। "तुम घबराओ मत माँ। हम अभी आते हैं।" सीमा ने फ़ोन रखा और तुरन्त पति रमेश को जगाकर सारी बात बताई। दोनों जल्दी से तैयार हुए और घर से निकल गए।

सुबह के चार बजे लौटकर रमेश ने धीरे से दरवाजा खोला तो देखा माँ सोफ़े पर ही बैठीं थीं। "अरे माँ तुम कब उठीं?"

"बेटा मैं तो तभी उठ गयी थी जब सीमा का फ़ोन बजा था। मुझे सब पता है। पर तुम दोनों के जाने के बाद अतीत की यादों ने मुझे सोने ही नहीं दिया। आज से पाँच साल पहले तुम्हारे बाबूजी ऐसी ही एक रात हम सब को छोड़कर चले गए थे। तुम होस्टल में थे और तुम्हारी बड़ी बहन रेखा की शादी को कुछ ही महीने हुए थे। उस रात उनकी तबियत बिगड़ी तो मैं ने रेखा को फ़ोन किया पर उसकी सास ने उन दोनों को आने से रोक दिया, ये कहकर कि बहु बनने के बाद लड़की की ज़िम्मेदारी ससुराल की तरफ़ होती है। वक़्त बेवक्त मायके भागना अच्छी बात नहीं। तुम्हारे बाबूजी ने मदद के इंतज़ार में घर में ही दम तोड़ दिया। रेखा बेचारी आज तक खुद को बाबूजी की मौत का ज़िम्मेदार समझती है। पर उसकी तो कुछ ग़लती नहीं थी।" कहते कहते माँ का गला रुँध गया।

बाबूजी की मौत का ज़िम्मेदार समझती है। पर उसकी तो कुछ ग़लती नहीं थी।" कहते कहते माँ का गला रुँध गया।

"हाँ माँ, ग़लती रेखा दीदी की नहीं है। ग़लती तो हमारे समाज की है जो बेटी-बहु और बेटा-
दामाद में फ़र्क़ करता है। और फिर केवल लड़कियों से ही क्यूँ ये उम्मीद की जाती है कि वो पति के परिवार को अपना परिवार समझें। लड़कों को भी तो अपनी पत्नी के परिवार को उसी तरह अपनाना चाहिए। ख़ैर अब तुम आराम करो माँ। मुझे सुबह जल्दी तैयार होकर अस्पताल जाना है, सीमा अकेली हैं वहाँ।" रमेश ने अपने कमरे का तरफ़ बढ़ते हुए कहा।

माँ अभी भी वहीं खड़ी सोच रही थी, अगर हर दामाद रमेश की तरह सोचता तो शायद आज बाबूजी ज़िन्दा होते।

**डॉ लोकेन्द्रसिंह कोट**

उज्जैन, मध्यप्रदेश।,

संप्रति- शासकीय चिकित्सा महाविद्यालय, रतलाम में अध्यापन

**लेख**

# "तुम भी क्या किस्सा ले बैठे, ये तो सदियों का रोना है"

कहा जाता है कि सृष्टि का उद्गम शब्द था। प्रमाण भले ही हो या न हो परन्तु हम तथ्य को नहीं नकार सकते कि शब्द ही जीवन की प्रतिष्ठा है, अभिव्यक्ति का माध्यम है और अस्तित्व की हुंकार। अनुभूतियों के विभिन्न रंगों को, कल्पना की प्रत्येक उड़ान को और भावनाओं के अथाह सागर के आंदोलन को चित्रित करने में सक्षम है शब्द। इन्हीं शब्दों को यदि दृश्य व उसके माध्यमों से जोड़ दिया जाए तो इनका प्रभाव निश्चित ही द्विगुणित हो जाएगा। ऐसा मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि मानवीय मन पर सर्वाधिक प्रभाव दृश्य व श्रृव्य माध्यमों का ही पड़ता है। वस्तुतः यह सही भी है क्योंकि हम अपने आम जीवन में यत्र-तत्र इसके प्रभाव देखते हैं, महसूस करते हैं। बच्चे, युवा और वृद्ध कोई भी इससे अछूता नहीं है। दूरदर्शन या सिनेमा में कही-सुनी बातें हमें अधिक अच्छी तरह से व काफी लंबे समय तक याद रहती हैं। इतनी याद रहती है कि वह हमारे संस्कृति, संस्कार का हिस्सा भी धीमे-धीमे बनती जाती है। एक ऐसा माध्यम जो हमारे मन-मस्तिष्क को सर्वाधिक प्रभावित करता है उसकी संवेदनशीलता पर हमारा ध्यान अवश्य होना चाहिये।

सिनेमा से याद आया कि यँू तो कहने को हम बहुत खुद्दारी दिखाते हैं और किसी भी गाली के षब्द के लिए तुरंत न्यूटन के गति के तीसरे नियम का पालन करते हैं, अर्थात प्रत्येक क्रिया की प्रतिक्रिया होती है के तहत तुरंत जवाब....। लेकिन हमारी सबसे बड़ी कमजोरी उजागर तब होती है जब हमें वही गाली का शब्द मखमल के रूमाल में लपेट कर कुछ अगंे्रजीनुमा भाषा में बोले तो हम उसे सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं। अभी भी हमारे उपर गुलामी के जीन्स हावी हैं। कहीं न कहीं हम आज भी एक गुलामी से दूसरी गुलामी की ओर बढ़ रहे हैं। हमारे उपर शाब्दिक और मानसिक गुलामी के दंश लग चुके हैं। चाहे वह विदेशी सहायता का लालीपाॅप हो या विश्व बैंक के उपकृत करने वाले ऋण हो। हम इनदिनों अपनी दासता अभिजात्य बन कर स्वीकार कर रहे हैं। अब इसमें यदि भुनाने की बात आती है तो हम भी कुछ नहीं छोड़ते हैं। गांधी, संस्कृति, संस्कार, उमंग, भावनाएॅं, गरीबी, खेती-किसानी, आदिवासी, रिश्ते-नाते, खान-पीन आदि-आदि धीरे-धीरे हमारे लिए विष्व स्तर पर बजाने के झुनझुने बनते जा रहे हैं। जब जैसी जरूरत होती है तब उसे बजा देते हैं और चंद एक लोग वाह-वाही लूट लेते हैं। जैसे हम और बातों के लिए पष्चिम की ओर मुॅंह उठाए देखते हैं वैसे ही सिनेमा के लिए भी हम उन्ही की ओर देखते हैं।

विदेशों की संस्कृति में हमारा समायोजन सहजता से इसलिए नहीं हो सकता क्योंकि हमारा जीवन दर्शन भिन्न है। हम विविधताओं से भरे अनुपम और विशिष्ट शैली से घड़े हुए हैं। विदेशी ज्यूरी को क्या हमारे संस्कृति, संस्कारों से गहरा नाता है जो वे हमारी सोच को समझ सकें? जब आपको किसी को समझना होता है तो उसके लिए एक जन्म भी कम रहता है। हमारे लिए जो रोटी का महत्व है वह उनके लिए ब्रेड के महत्व से अलग है।

पश्चिमी सभ्यता में चमक-दमक, धन-दौलत, आडम्बर सब कुछ है परंतु महत्वपूर्ण जगहों पर खालीपन है। उन्हौने सब कुछ बेचना सीख लिया है और अब हमारी बारी है। हमने अपनी संस्कृति को इस ढ़ंग से बढ़ाया है कि कविवर रामधारी सिंह 'दिनकर' की संस्कृति की परिभाषा से स्पष्ट हो जाता है - 'असल में संस्कृति जीवन का तरीका है और यह तरीका सदियों से जमा होकर उस समाज में छाया रहता है जिसमें हम जन्म लेते हैं...अपने जीवन में हम जो संस्कार जमा करते है, वह भी हमारी संस्कृति का अंग बन जाता है और मरने के बाद हम अन्य वस्तुओं के साथ-साथ अपनी संस्कृति की विरासत भी अपनी संतानों के लिए छोड़ जाते हैं। इसलिए संस्कृति वह चीज मानी जाती है जो हमारे सारे जीवन में समाई हुई है तथा जिसकी रचना एवं विकास में अनेक सदियों के अनुभवों का हाथ है। यही नहीं, संस्कृति हमारा पीछा जन्म-जन्मान्नतरों तक करती है।' अपने यहां एक कहावत है - जिसका जैसा संस्कार होता है वैसा ही उसका पुर्नजन्म होता है.....संस्कार या संस्कृति वास्तव में शरीर का नहीं, आत्मा का गुण है। इनदिनों हम अपनी आत्मा के साथ समझौता करने पर तुले हुए हैं। जब हमारे आवरण पर आस्कर पाने और प्रत्येक वस्तु को भुनाने की बातों को तरजीह दी जावेगी तो हमारी संस्कृति में खास तौर पर यह हस्तक्षेप होगा। यह सही है कि बदलाव हरेक निर्माण का अनिवार्य पहलू है अब वह चाहे संस्कृति, संस्कार ही क्यों न हो, लेकिन भुनाने और बेचने के बलबूते पर कोई भी गलत परम्परा को हम प्रश्रय नहीं दे सकते हैं। जब हमारे संस्कारों में यह आ जाएगा कि गाली खाकर, गरीबी दिखाकर, भावनाएँ बेचकर पुरस्कार मिलते हैं तो नई पीढ़ी किस ओर कदम रखेगी यह कहना जरूरी नहीं है। हो सकता है कोई नौनिहाल अपने पिता से यह कहता पाया जाय कि 'पापा में बड़ा होकर झोपड़पट्टी का गरीब बनू गा।

वास्तव में हमारे यहाँ कोई गरीब है तो उसका भी अपना चिंतन होता है। उसे उसमें तृप्ति मिलती है। देश के किसी भी गांव में चले जाईये किसी को करोड़पति बनने का यदि

चस्का लगा हो तो....। जीवन को चलाने की जद्दोजहद में वह कितना मशगुल है कि उसे उसी में संतोष है जिसमें वह जी रहा है। करोड़ों की बात करते हुए हम अभिजात्य गरीबी को बढ़ावा देने पर तुले हुए हैं। यह ठीक वैसा ही है जब स्कूल में कोई बच्चा फैंसी ड्रेस प्रतियोगिता में एक गरीब का रोल करे और प्रथम पुरस्कार ले जावे। अब जब हमने आस्कर को देवता मान ही लिया है तो फिर हमारा रखवाला कोई नहीं हो सकता है।

पिछले दो दशकों में दृश्य-श्रृव्य माध्यम के बढ़ने के साथ हमारे जीवन स्तर में भी खासा परिवर्तन आ गया है। इसका गवाह है हमारा वर्तमान का संपूर्ण इंफ्रास्ट्रक्चर (अधोसंरचना) जो कि ग्रास रूट स्तर से लेकर ऊपर तक विचारगत व शैलीगत रूप में बदला है। इस माध्यम से समाज में अच्छे-बुरे दोनों प्रभाव पड़े है, परन्तु यह कहना अधिक उचित होगा कि इसके बुरे प्रभाव (आंतरिक रूप से विशेषकर) कहीं ज्यादा परिलक्षित हो रहे हैं। (वास्तव में इसके पीछे माध्यमों को नहीं वरन् हमारी मानसिकता का ही दोष है) बच्चों व युवाओं जो कि अपेक्षाकृत कम अनुभव व अपरिपक्वता की श्रेणी में आते हैं, उनमें इसका बुरा असर तेजाब की तरह समाता जा रहा है। सत्यजीत रे से लेकर आज पचास-साठ साल बाद भी हमारी स्थिति में अंतर सिर्फ इतना आया है कि हमारी गरीबी चमकीली और चटख हो गई है। गालियां हमारे जीवन का अविभाज्य हिस्सा बनता जा रहा है।

कुल मिलाकर इन माध्यमों के द्वारा अफसानों, कल्पनाओं व ग्लैमर (चमक-धमक) का जो मायवी सप्तरंगी संसार मनोरंजन के तहत रचा गया है व दुगनी मात्रा में रखा जा रहा है उससे आम आदमी न केवल दिग्भ्रमित हुआ है वरन् हकीकत की दुनिया से भी कटता जा रहा है। वह अपने वास्तविक जीवन में भी कहानी व अफसानेनुमा, सब कुछ आसान व अच्छा चाहता है। वास्तव में यही इल्यूसन (भ्रम) एक सीमा तक मुख्य कारण है आज के मानव से अमानव बनने का। और तो और इन सबका निर्माण भी परिपक्व दिमाग ही कर रहा है। इसे एक विडंबना ही कहना चाहिए। बकौल शायर,

"हम को नसीहत करने वाले खुद भी यही कुछ करते है,
तुम भी क्या किस्सा ले बैठे, ये तो सदियों का रोना है।"

इससे भारतीय संस्कृति पर गहराता हुआ संकट एक बहुत बड़े प्रश्नचिंह के रूप में उपस्थित है। (वस्तुतः वर्तमान में तो फिर भी ठीक है परन्तु भविष्य में यह प्रश्न और भी गहराई व नासूर के रूप में उभरेगा)। किसी ने ठीक ही कहा है कि किसी भी देश को नष्ट करना हो तो केवल उसकी संस्कृति की जड़े काट दो, वह देश स्वतः ही समाप्त हो जायेगा। अतः संस्कृति की किसी देश के लिये कितनी महत्ता हो सकती है इससे स्पष्ट है।

इससे साफ तौर पर अब जाहिर हो जाता है कि इन्हीं माध्यमों से कुछ हद तक किसी भी देश का सांस्कृतिक रूप से सामाजिक उत्थान व पतन दोनों निर्भर करते हैं । दूरसंचार के दो माध्यम ऐसे संवेदनशील माध्यम है जैसे पेट्रोल के लिये एक जलती तीली। जिस तरह पैट्रोल को ऊर्जा के लिये जब तक इस्तेमाल किया जाता है तब तक तो ठीक पर जैसे ही इसका दुरुपयोग किया तो विस्फोट तो निश्चित है। परन्तु टीस उभरने वाली वात तो यह है कि इसकी व्यापकता, संवेदनशीलता व इसके मनोवैज्ञानिक प्रभावों को इन माध्यमों को चलाने वाले कर्ता-धर्ता, चाहे वे फिल्म के हों या दूरदर्शन के नहीं समझ पा रहे है। बढ़ती होड़ व स्वस्थ मनोरंजन के नाम पर महज अपनी आर्थिक स्वार्थपूर्ति हेतु मात्र चंद व्यक्तियों की सोच को करोड़ों जनता के सामने न जाने क्या-क्या (बताने की शायद आवश्यता नहीं है) परोसा जा रहा है। इस बात को सदैव (जो कि मुख्य व मूल है) भुला दिया जाता है कि इसका समाज पर क्या असर पड़ेगा।

माना कि व्यवसायिकता आज की आवश्यकता है परन्तु इसकी कीमत सामाजिक विकृति हो यह हमारे दृश्य-श्रृव्य माध्यमों में बताई जाने वाली आदर्शवादिता, देश-प्रेम आदि का विरोधाभास ही तो है जो कथनी व करनी के अंतर को स्पष्ट करता है। अपने आपको सामाजिक दायित्व व कलागत उद्देश्यों से हटाकर वस्त्र उतारने की प्रतिस्पर्धा करना और ऐसे मुद्दों को भुनाना जो हमारे वजूद का हेतु है, सचमुच भयावह है।

हम मानसिक गुलामी के उस अंधे दौर से गुजर रहे हैं जबकि हमें सिर्फ यह सीखना भर मिल रहा है कि 'पैसा ही भगवान है।' हम अग्रेजों के समय की दासता में दंभ भरते थे कि हम उनके पैरों की जूतियां नहीं हैं और स्वाभिमान के लिए सिर भी कटवा सकते हैं। कहाँ गया हमारा स्वाभिमान जब हम करोड़ों के खर्च वाले आस्कर पुरस्कार के कार्यक्रम में अपनी गरीबी को नंगा कर खुषियां मना रहे थे और एक दूसरे को बधाईयां दे रहे थे। समझ में यह नहीं आता है कि हम अपनी सीमाएं क्यों तय नहीं कर पाते हैं। फिल्म एक ऐसा माध्यम है जो सीमाओं से परे तो है परंतु उसकी अपनी सांस्कृतिक विषेषताओं के चलते सिफ उस संस्कृति से परिचय रखने वाले लोग ही उसके निर्णायक हो सकते हैं। क्या वजह है कि सौ करोड़ से ज्यादा लोगों के समर्थन के पुरस्कार के बजाय हम लालायित रहते हैं विदेषी पुरस्कारों के। इसकी पड़ताल करना ना केवल जरूरी है बल्कि इसके पीछे छुपे मानसिक गुलामी के खतरों को भी पहचानना आवष्यक है। वरना वह दिन दूर नहीं जब हम संस्कृति, संस्कार की कब्र पर बनी फिल्म पर आस्कर के लिए लाईन में खड़े होंगे।

**राजकुमार इन्द्रेश**
प्रधानाचार्य / साहित्यकार/विचारक
G - 2, प्लॉट नंबर 14-15, विनायक एन्क्लेव - lशंकर विहार विस्तार -A मुरलीपुरा जयपुर राजस्थान। पिन 302039

**आलेख**

# " उत्साह का महत्व "

मनुष्य के लिए उत्साह वह अग्नि है,जो उसके शरीर रूपी इंजन के लिए भाप तैयार करती है। मनुष्य का उत्साह व उसकी उमंग ही उसको सफलता के शिखर पर पहुंचाती है। मनुष्य के सत्कार्य ही उसके जीवन की सफलता के सार होते है। मानव के चरित्र में अनेक विकृतियां स्वयंकृत अथवा समाज के प्रदूषण से उत्पन्न होती है। मानव यदि विकृतियों से बचा रहता है तभी वह सफलता एवं सुख का अनुभव कर पाएगा। व्यक्ति की किसी भी वस्तु के प्रति आसक्ति उस वस्तु को प्राप्त करने की लालसा उत्पन्न करती है और वह क्रियाशील हो जाता है। मनुष्य का आत्मसंयमित होना आवश्यक है अन्यथा उसे अनेक बुराइयां दबा लेंगी, और वह असफलता के दलदल में धंस जाएगा। यदि संयम के साथ क्रियाशील रहेगा तो आत्मविश्वास सबल रहेगा और उत्साह के साथ अपने कर्म में सफलता प्राप्त कर सकेगा।

कौटिल्य ने भी कहा है कि - " जिनमें उत्साह नहीं होता, मित्र भी उनके दुश्मन हो जाते हैं. जिनमें उत्साह हो, शत्रु भी उनकी मित्रता स्वीकार करते हैं। "

उत्साह जहां संयमशीलता से किए कर्म के साथ होता है वहीं इसके विपरीत उत्तेजना होती है। उत्तेजना में उत्साह जैसा जोश तो होता है, पर वह क्षणिक उद्वेग पर आधारित होता है। उत्साह सकारात्मक होने के कारण कार्य के प्रति आशा का संचार करता है, जबकि उत्तेजना पैदा होने पर नकारात्मक वृत्तियां बढ़ने लगती है और कार्य की गति असफलता की ओर बढ़त होने लगती है। उत्साह से कार्मिक की क्षमता का विकास होता है, जबकि नकारात्मक सोच क्रोध को जन्म देती है। हमारे मन एवं उसकी वृत्तियों का शरीर, बुद्धि व आत्मा पर प्रभाव पड़ता है।

उत्साह की विशेषताएँ :-

1.उत्साह व्यक्ति को जिंदादिल बना कर रखता है।
2.उत्साही व्यक्ति में धैर्य, संयम और सहनशीलता के गुण पाये जाते हैं।
3.उत्साह से व्यक्ति अपने क्रोध पर नियंत्रण रख सकता है।
4.उत्साह व्यक्ति को संघर्षशील बनाता है।
5.उत्साह से व्यक्ति का साहस बढ़ता है।
6.उत्साह व्यक्ति को प्रगतिशील बनाता है।
7.उत्साह व्यक्ति को कर्तव्यपरायण बनाता है।
8.उत्साह व्यक्ति को सार्थक कर्म में लीन रखता है।
9.उत्साह के लिए उम्र कोई मायने नहीं रखती है।

उत्साह का कैसे बढ़ाया जाये :-

जैसे कमल कीचड में और गुलाब काँटों में रहकर भी दुनिया को महकाते हैं,और मुरझा कर भी अपनी खुशबु नहीं त्यागते। उसी प्रकार व्यक्ति को भी कठिन राहों पर चलकर अपने संघर्ष के बलबूते अपने लक्ष्य तक पहुंचना चाहिए। अतः उत्साही व्यक्ति को जीवन में रोजमर्रा की छोटी-छोटी बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

- उत्साही व्यक्ति को नये संकल्पों के साथ दिन की शुरुआत करनी चाहिए।
-प्रातः काल उठते ही अपने सभी प्रियजनों का मुस्कुराते हुए अभिवादन करना चाहिए।
- प्रातः कालीन भ्रमण पर जाना चाहिए।
-अपनी दिनचर्या को सुव्यवस्थित तरीके से सम्पन्न करनी चाहिए।
- जरूरी कार्यों को प्राथमिकता के अनुरूप पूरा करना चाहिए।
- अपने चहरे पर हमेशा मुस्कान रखते हुए नीरसता से दूर रहना चाहिए।
- व्यक्ति का ड्रेस कोड सटीक होना चाहिए।
- व्यक्ति को अपनी रूचि के अनुरूप काम चुनना चाहिए और उसे पूरी तन्मयता से पूर्ण करना चाहिए।
- अनुभवी लोगों से सदैव मार्गदर्शन लेते रहना चाहिए

- अपने कार्यालय में या वर्कशॉप पर अपने अधीनस्थों, साथियों व कर्मचारियों से जोश के साथ मिलना चाहिए स्नेह पूर्वक बातें करनी चाहिए व समय समय पर मीटिंग करनी चाहिए। अपने कर्मचारियों की बातों को ध्यान से सुनकर विचार करना चाहिए।
- अच्छी बात के लिए दिल से प्रशंसा करनी चाहिए
- कोई काम बिगड भी जाये तो उसे नये उत्साह के साथ पुनः नये सिरे से प्रारम्भ करना चाहिए.
- थक जायें तो आराम कर पुनः नये जोश के साथ शेष काम को पूर्ण करें।
- खान-पान में संयम बरतना चाहिए, जिससे स्वस्थ रहें और काम में रुकावट न आये।
- समय समय पर मनोरंजन भी करें, जिससे काम में उत्साह आये।
- सदैव आशान्वित बने रहें।
- रोज अच्छा साहित्य पढ़ें, जिससे सकारात्मक ऊर्जा बनी रहे।
- आराम के समय में भी घर का छोटाn-मोटा काम करते रहें। बिल्कुल ही निठल्ले होकर आराम न करें, जिससे उत्साह बना रहेगा।
- रोज अपने आस-पास की प्रकृति को निहारे, पक्षियों को देखें। प्रकृति जीवन को गति देती है इसलिए उसके सौंदर्य को रोज निहारें। प्रकृति का कभी उल्लंघन न करें, उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करें।

उत्साह में यदि कोई सबसे बड़ी बाधा है तो वह है क्रोध। क्रोध का मूल है इच्छापूर्ति में अवरोध होना। जहां क्रोध आया वहीं विवेक नष्ट हुआ। विवेक मनुष्य की बुद्धि का वह श्रेष्ठतम भाग है जो नीर-क्षीर की पहचान करता है। मनुष्य के मन में जब अंतर्द्वन्द, तनाव एवं असंतोष का भाव जागृत होता है तो समझो क्रोध की स्थिति प्रारंभ हो गई है। क्रोध दूर होने पर जब होश आता है तब अपने कृत्य के लिए पश्चाताप के अलावा कुछ शेष नहीं रह जाता। क्रोध का जन्म ही हीनता की भावना होने पर होता है। अत: क्रोध से बचने के लिए उत्तेजना के क्षणिक आवेश में नहीं आना चाहिए। ईर्ष्या-द्वेष, अहंकार, मोह, लोभ से बचना चाहिए। नैतिक मूल्यों का पालन करते हुए संयमित जीवन के साथ उत्साहपूर्वक कर्म करने में प्रवृत रहना चाहिए।

अलफांसो ने लिखा है की, " अधिकांश अवसरों पर साहस को परीक्षा द्वारा जीवित रखना होता है. संतुलित उत्साह सफलता की कुंजी है।"

सारांश :- उत्साह में कभी भी उम्र आड़े नहीं आती है। इसके लिए जीवन की प्रत्येक अवस्था एक समान होती है। युवा अवस्था में जैसे सभी उत्साहित रहते हैं वैसे ही उत्साही व्यक्ति उम्रदराज अवस्था में भी रहता है। उदाहरण स्वरूप हम न्यूटन को देख सकते हैं, उन्होंने 83 वर्ष की उम्र में अपनी पुस्तक ' प्रिंसिपिया ' लिखी थी। प्लेटो की 81 वर्ष की उम्र में लिखते हुए मृत्यु हुई थी। तुलसीदास ने 72 वर्ष की उम्र में " रामचरित्रमानस "लिखना प्रारम्भ किया था।

अतः यदि व्यक्ति केन में उत्साह है तो वह कभी बूढ़ा नहीं होता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने उत्साह निबंध में लिखा है कि " भय का जो स्थान दुःख वर्ग में है, उत्साह का वही स्थान आनन्द वर्ग में है। "

स्वामी विवेकानंद ने भी लिखा है कि " संसार में आधें से अधिक लोग तो इसलिए असफ़ल हो जाते हैं कि समय पर उनमें उत्साह का संचार नहीं हो पाता और वे भयभीत हो उठते हैं। "

मेरे स्वयं की पंक्तिया हैं कि -

तू चलता रह, रुक मत
तुझे तेरा लक्ष्य मिलेगा।

उम्मीद रख, हार मत
आज नहीं तो कल मिलेगा।

तू चलता रह, रुक मत
तुझे तेरा लक्ष्य मिलेगा।

लगा निशाना अर्जुन सा
तेरा लक्षित फल मिलेगा।

तू चलता रह, रुक मत
तुझे तेरा लक्ष्य मिलेगा।

उत्साह जुटा हिम्मत जोड़
पर्वत से भी जल निकलेगा।

तू चलता रह, रुक मत
तुझे तेरा लक्ष्य मिलेगा।

कोशिश कर, कर गुजरने की
रुका हुआ भी चल निकलेगा।

तू चलता रह, रुक मत
तुझे तेरा लक्ष्य मिलेगा।

**डा. रश्मि तिवारी**
वनस्पति विज्ञान प्रवक्ता
लखनऊ,यू. पी.

**आलेख**

# "प्रेमचंद: एक संदर्भ"

बीसवीं शताब्दी में एक प्रगतिशील विचारधारा का उदय हुआ, जिसमें आदर्शवाद एवं यथार्थवाद का समन्वय था जिसे आदर्शोन्मुख यथार्थवाद नाम से जाना जाता है । आदर्शवाद में सत्य की अवहेलना या उस पर विजय प्राप्त कर के नैतिक मूल्यों की स्थापना की जाती है, जबकि यथार्थवाद में सत्य, बिना किसी आवरण के, प्रस्तुत किया जाता है । आदर्शोन्मुख यथार्थवाद में सत्य स्थापन के साथ ही साथ आदर्श का स्वाभाविक चित्रण होता है । प्रेमचंद इसी मार्ग के समर्थक थे । वे कला के क्षेत्र मे यथार्थवादी होते हुए भी भाव पक्ष से आदर्शवादी थे । इस सम्वेदनशील लेखक का अतुलनीय योगदान रहा है हिन्दी को सामजिक, सामयिक संस्कारों और प्रगतिशील मूल्यों के साथ आगे बढ़ाने में, जिसमें यशपाल से लेकर मुक्तिबोध तक सभी शामिल है।

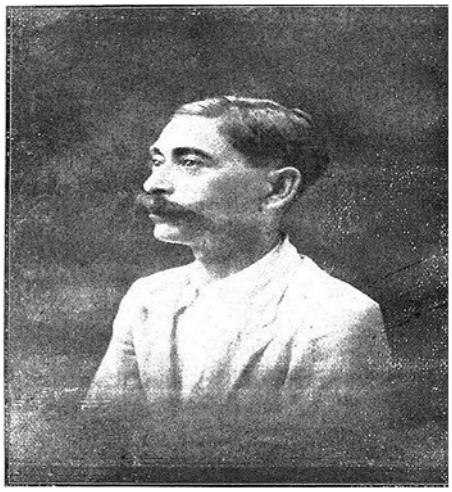

आधुनिक हिन्दी के चेतना स्वरूप लेखक हैं प्रेमचंद, जब औपनिवेशिक भारत में पूँजीवादी औधोगिक क्रान्ति ने ज़ोर पकड़ा उनके बेबाक लेखन ने भारतीय सामाज को एक नया आयाम दिया । विस्तृत विविधता भरे कथा साहित्य में आज भी उनका विकल्प नहीं है, कारण उन्होंने जाति, धर्म, संप्रदाय जनित भेद-भाव के बिना भारतीय समाज की बहुलता एवं सहभागिता को अपने कैनवास पर उकेरा । स्वाधीन भारत का आशय उनके अनुसार भारतीय परिवेश की सच्चाइयों से उपजा है । बलिदान, त्याग, प्रेम जैसे उच्च आदर्श प्रेमचंद के लेखन की विशेषता है । मात्र सत्ता परिवर्तन विकास का मापदंड नहीं है, जब तक कि सामान्य जन की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक स्थिति का उत्सर्ग न हो । उनके कथानकों में किसान, स्त्री एवं दलित समाज को सामंती पूँजीवादी व्यवस्था से मुक्त कराने का संघर्ष था। शोषण के खिलाफ आवाज थी । हिंदू-मुस्लिम भाईचारे और उनके सहअस्तिव की सतत संभावनाएँ थीं ।

प्रेमचंद की अत्यंत साधारण कहानियां भावनात्मक सौंदर्य से परिपूर्ण हैं । **'पंच परमेश्वर', 'दो बैलों की कथा'**, **'ईदगाह'** और **'नमक का दारोगा'** अनेकानेक मानसिक द्वंदों से भरी सामाजिक कहानियां हैं । **'पंच परमेश्वर'** में प्रेमचंद अपने पाठक का परिचय अलग-अलग धर्म के मित्रों से कराते हैं, जो नैतिकता और न्याय से विजय की कामना करते हैं । **'ईदगाह'** में एक छोटे से बच्चे **हामिद** का अपनी दादी **अमीना** के प्रति त्याग कितना स्वाभाविक और प्रेरणादायक है । दलित वर्ग पर लिखा गया उपन्यास **'गोदान'**, कहानी **'ठाकुर का कुआँ'** एवं **'सद्गति'** सामाजिक असमानता, वर्ग एवं जातिगत संघर्ष उजागर करती है । स्त्री अस्मिता के अनेक प्रश्न उस समय के सामाजिक एवं धार्मिक सुधार के प्रमुख विषय थे । **'सेवा सदन'** और **'निर्मला'** उपन्यास, **'बूढ़ी काकी', 'बड़े घर की बेटी'**, आदि कहानियों के द्वारा प्रेमचंद ने स्त्री जीवन से जुड़ी समस्याओं का रचनात्मक निरूपण किया है ।

स्वंतंत्रता आन्दोलन और नवजागरण काल के विविध आयामों का धाराप्रवाह निर्वहन हुआ है उनके लेखन में । प्रेमचंद के समय में ब्रिटिश साम्राज्यवाद था, आज के संदर्भ में नव उपनिवेशवाद एवं भूमंडलीकरण की चुनौतियां अदृश्य रूप में व्याप्त हैं । किसानों की आत्महत्या, मज़दूर और गरीब आज भी जीविका के लिए जूझ रहा है । वर्तमान समय मे भी, **'गोदान'** का नायक **'होरी'** हमारे ग्रामीण परिवेश में बसता है । भारतीय अर्थव्यवस्था के स्तम्भ किसानों के सामाजिक सरोकार और आर्थिक भागेदारी से वे संज्ञान थे । **'प्रेमाश्रम', 'कर्मभूमि', 'गोदान'** फिर **'पूस की रात'** के **'हल्कू'** का संघर्ष कितना वेदनामय था यदि मानव मूल्यों की बात करें । उसके सामने गरीबी, उधार और सर्द रातों की नींद पर खेती के प्रति उसका आदर एवं समर्पण भाव ? यह आदर्शोन्मुख सत्य उसे मज़दूर बनने से रोकता है । आज भी तो ऐसा ही हो रहा है। *"हल्कू कहता है--जो दस रुपए महीने का नौकर है, वह भी हमसे अच्छा खाता-पहनता है । लेकिन खेती को छोड़ा भी तो नहीं जाता...खेती में जो मरजाद है, वो मजूरी में तो नहीं है।"* पूस की उस सर्द रात का दर्द इतना कठिन है, कि मरजाद का विचार अर्थहीन लगता है । कहानी का अन्त नाटकीय है क्योंकि अब **हल्कू** किसानी छोड़ने को राज़ी है ।

प्रेमचंद किसी वाद से नहीं बंधे, प्रगतिशील होने के कारण सामंतवाद, साम्राज्यवाद, पूंजीवाद और शोषण के खिलाफ थे । **'कफ़न'** कहानी में किसान और जमींदार के मध्य, परिस्थितिजन्य ही नहीं वरन् परम्परागत संघर्ष का अत्यंत मार्मिक चित्रण किया गया है । **'रंगभूमि'** मे औधोगीकरण की समस्या, **'कर्मभूमि'** में प्रेमचंद ने धार्मिक पाखंड का रहस्योद्घाटन किया।

राजनैतिक विकृतियों को लेकर लिखा गया प्रेमचंद का कथा साहित्य आज भी वर्तमान है। **'सत्याग्रह'** कहानी में **मोटराम शास्त्री** को रुपया देकर सत्याग्रह के लिए तैयार किया जाता है, वे पकवान खाकर अनशन के लिये बेठते हैं। **'कुत्सा'** में ऐसे व्यक्तियों का चित्रण है जो चंदे के पैसों पर ऐश कर रहे हैं।

आज़ाद देश में गरीब एवं पीड़ित वर्ग को न्याय और अधिकार दिलवाने का प्रयास, हिंदू-मुस्लिम सद्भाव, किसानों का संघर्ष जैसे विषय आज भी उतने ही ज्वलंत हैं जितने प्रेमचन्द के समय में थे। विविध आयामों के बीच वे एक युगप्रवर्तक कथाकार थे। स्वयं आभावों एवं संघर्षमय जीवन के मध्य वे निष्ठा, प्रतिबद्धता और न्याय के सच्चे साधक बन गए।

मानव के शाश्वत मनोभावों जैसे - क्रोध, प्रेम, ईर्ष्या, घृणा, स्वार्थ, लालच और उनसे जुड़े सहज सम्बन्धों का ताना-बाना ही तो है प्रेमचंद के साहित्यिक सफ़र में जो सदैव प्रासंगिक है। वस्तुतः मानवतावादी लेखक का साहित्य यथार्थ के ठोस धरातल पर आधारित होते हुए भी आदर्श के सुनहरे कलेवर में दिखाई देता है। सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिवेश में संचरित प्रेमचंद का कथाजगत कालातीत बन गया।

**अंकुर रंजन**
चाँद चौरा, गया

## लघुकथा

# "सच यही है"

कल मोहल्ले के सज्जन से शाम को बात हो रही थी। इसी महीने की अंतिम तारीख तो सेवानिर्वित होने वाले हैं। अपनी ज़िंदगी की बड़ी बड़ी उपलब्धियां गिनवा रहे थे मुझे। मैंने वो किया , ये किया, अब नौकरी के अंतिम पड़ाव पर हूँ तो सोच रहा गाँव जाऊँ अपने। वहीं रहूँगा अपने पुराने लोगों के बीच। चूंकि मैं उन्हे पिछले 18 सालों से जानता हूँ और अक्सर उनके घर भी जाता रहता था इसलिए उनके ज़िंदगी के कुछ पहलू से मैं उनसे भी अच्छी तरह वाकिफ हूँ। चलिये , आपको मैं उनके ज़िंदगी का किस्सा सुनाता हूँ।

नौकरी लगी 21 में। इसके बाद अपने 23 वर्ष के उम्र में ही इनके घरवालों नें इनका विवाह करवा दिया (सरकारी सेवक थे इसलिए घरवालों को चूल ज़ोरों की मची थी)। अपनी पुरुषसत्तावादी सोच के कारण महोदय ने अपनी पत्नी को नौकरी करने से वंचित कर दिया। अब इसके बाद 27 होते होते इनके 2 बच्चे हो गए। चूंकि महोदय की तनख्वा उतनी नहीं थी जिससे वे वैसी ज़िंदगी जी सकें जैसा उन्हे अपने नौकरी के पहले सोचा थां (जैसे पार्टी, लॉन्ग ड्राइव, 7 डेज़ वेकेशन)।

अब महोदय काफी किफ़ायती ज़िंदगी जीना शुरू कर देते हैं। अपनी पत्नी के खर्चे , बच्चों के खर्चे , हर जगह शोर करते फिरते हैं "मैंने शौख मार दिया अपना" अब परिवार ही मेरा सबकुछ है, कहीं जाना हो तो 1 2 रुपये जोड़ते हैं, जूते फटे ही पहनते हैं मगर बच्चो को अच्छा पहनाते हैं और इसके बाद कहते भी हैं मैं अपने बच्चो को अपनी कटौती कर के अच्छी परवरिश दे रहा हूँ।

फिर होता ये है जब वो 30 40 साल के हो जाते हैं तो उनके बच्चे अब कॉलेज जाने लायक हो जाते हैं। अब वो एडुकेशन लोन लेकर बच्चो को पढ़ाते हैं और फिर ईएमआई के लिए पैसे जोड़ना शुरू कर देते हैं। अब 45 48 होते होते उनके बच्चे सेटल हो जाते हैं और फिर वो मोहल्ले में कहते फिरते हैं मेरी सारी देयता अब खत्म हो गयी। अब मैं अपना घर बनाऊँगा।

अब महोदय घर बनाना शुरू करते हैं। फिर महोदय अब होम लोन लेते हैं और 54 55 आते आते महोदय घर बनवा लेते हैं और अब उसमे रहना शुरू करते हैं। चूंकि नौकरी के 4 5 साल ही बचे हैं इसलिए अब वो असल ज़िंदगी जीना शुरू करते हैं। अब वो अपने पुराने मित्रों को खोजना शुरू करते हैं जिसको उन्होने कब का पीछे छोड़ दिया था। अब वो उन्हे अपने नए घर में आने के लिए बार बार आमंत्रण देते फिर रहे हैं , मगर अपने पुराने मित्रों का उन्हे मोबाइल नंबर नहीं मिल पा रहा है।

60 आते आते वो 21 साल का नौजवान जिसने कई सपने देखे थे, दुनिया को बदलने के, अमीर बनने के, आवाज़ उठाने के , आज उसके पास पैसे तो थे, समय भी था, कोई देयता भी नहीं था मगर उसकी अंतरात्मा उसे कुछ करने नहीं दे रही थी और यही बार बार बोल रही थी "अब सब अगले जन्म में "।

कल उनके बच्चे (जो की मेरा सहपाठी भी रह चूका है) मुझे व्हाट्सअप करके पूछ रहे थे "वो शहर वाला जो मेरे पिताजी का मकान है 10 साल बाद उसका कितना पैसा मिल जाएगा।

मैंने पूछा बेच रहे हो क्या?

उसने कहाँ "नहीं अगर पापा का 10 साल बाद death हो गया तो कितना पैसा मिलेगा उसका वही जोड़ रहा"

**शराफत आली खान**
343,फाइक इन्क्लेव, फेज-2,पो.रूहेलखंड
विश्वविद्यालय, बरेली-243 006(उ.प्र.)

**आलेख**

**8 मार्च विशेष**

# "नारी! तुम केवल श्रृद्धा नहीं हो"

महाकवि जयशंकर प्रसाद ने अपने प्रसिद्ध महाकाव्य "कामायनी" के लज्जा सर्ग में" नारी ,तुम केवल श्रद्धा हो..." लिखकर लज्जा नामक चरित्र से श्रृद्धा नामक स्त्री पात्र को संबोधित करते हुए कहा है कि" हे नारी, तुम केवल श्रद्धा की मूर्ति हो। तुम्हें दूसरों पर श्रद्धा रखना ही आता है। पुरुष चाहे स्त्री को कितना ही कष्ट क्यों ना दे, उसे कितना ही क्यों ना रुलाए, किंतु वह सदैव पुरुष के कल्याण के लिए ही प्रार्थना करती है।"

प्रसाद जी ने नारी भावना का जो रूप व्यक्त किया है, वह एकांगी और रूढ़िवादी है ।यह सच है कि भारतीय नारी सदियों से पुरुष के अत्याचारों को सहन करती आई है ।लेकिन इस व्यवस्था को जो विषमता और अत्याचार को जन्म देती है, आदर्श नहीं बताया जा सकता ।इस व्यवस्था का विरोध होना चाहिए। आधुनिक भारतीय विचारकों में इस संबंध में विभिन्न स्वस्थ मत रहे हैं।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के मतानुसार "स्त्री पुरुष की सहचरी है ,उसकी मानसिक शक्तियां पुरुष से कहीं भी कम नहीं हैं। उसे पुरुष के हर एक काम में हाथ बंटाने का हक है और आजादी का उसे उतना ही अधिकार है जितना पुरुष को ।अपने क्षेत्र में उसकी सर्वोच्चता उसी प्रकार स्वीकार की जानी चाहिए, जिस प्रकार पुरुष की उसके क्षेत्र में।"

परंपरा से धर्म ने स्त्री को या तो पुरुष से ऊपर की जगह दी है या नीचे की जगह दी है। या तो वह देवी है या फिर संपत्ति ।एक तरफ धर्म कहता है" यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता:।यत्रैतास्तु न पूज्यंते, सर्वास्तत्राफल: क्रिया:।"अर्थात जहां स्त्रियों की पूजा होती है, वहां देवता रमते हैं अर्थात प्रसन्न होते हैं ।जहां उनकी पूजा नहीं होती वहां सारी क्रियाएं निष्फल होती हैं। यह मनु वचन है, उसी मनुस्मृति में यह भी कहा गया है की" पिता रक्षित कौमार्य, भर्ता रक्षति यौवने। पुत्री रक्षति वर्धाक्ये , न स्त्री स्वतंत्रतयमर्हति।"अर्थात जब तक स्त्री कुमारी है तब तक पिता उसे संभालेगा। युवती होने पर पति संभालेगा तथा वृद्धावस्था में पुत्र। इस प्रकार पुरुष के लिए स्त्री पूजा का विषय है यह संभालने की चीज। पुराण मतवलम्बियों की दृष्टि से स्त्री स्वतंत्रता के लिए पात्र नहीं है।

शंकराचार्य का वाक्य है कुपुत्रो जायते हु वास द पी कुमाता न भवति कोई को पत्र पैदा हो सकता है लेकिन माता कभी कुमाता नहीं हो सकती।

विनोबा जी ने स्त्री की महिमा और शक्ति पर काफी लिखा है वह कहते हैं " स्त्री "शब्द "स्तृ" धातु से बना है।"स्तृ" का अर्थ होता है विस्तार करना, फैलाना, यह स्त्री का कार्य है। स्त्री का कार्य उस शब्द में ही सूचित किया गया है ,तो प्रेम की व्यापकता स्त्रियों के द्वारा होगी।स्त्री की इतनी शक्ति होने पर भी स्त्री की तरफ लोग देखते हैं कामनी के तौर पर। वह काम- साधना का एक विषय ही माना गया है। यह मातृशक्ति का सबसे ज्यादा अपमान है।

**स्त्री विद्रोह करे**

विनोबा जी कहते हैं" यदि मैं स्त्री होता तो न जाने कितनी बगावत करता ।मैं तो चाहता हूं कि स्त्रियों की तरफ से बगावत हो ।लेकिन बगावत या विद्रोह तो वह स्त्री करेगी जो बैराग्य की मूर्ति होगी ।वैराग्य प्रवृत्ति प्रकट होगी तभी तो मातृत्व सिद्ध होगा। स्त्रियां स्वतंत्रता चाहती हैं तो उन्हें वासना के बहाव में नहीं बहना चाहिए।

बगावत करने की वृत्ति और विनयशीलता में कोई विरोध नहीं है। विनयशीलता से तो बगावत बलवान होती है। समझ बूझ कर और उचित समझ कर किसी उचित आज्ञा को मानना विनयशीलता है ।अनुचित आज्ञा को न मानना बगावत है और विनय पूर्वक वह हो सकती है, उसी में स्वतंत्रता है।

जहां एक और महात्मा गांधी, आचार्य विनोबा भावे और आदि शंकराचार्य ने नारी को सम्मानीय स्थिति पर पहुंचाने का भरसक प्रयत्न किया ।वहीं भारतीय आदि ग्रंथों में नारी को जमकर कोसा गया है।

नारी झूठी और नारकी महात्मा बुद्ध की " जातक कथा "में कहा गया है कि समुद्र, राजा, ब्राह्मण और औरत लंबी अवधि से भूखे रहे हैं ,उनकी इच्छाओं का कभी अंत नहीं होता।

इसी प्रकार तेत्तरीय संहिता और जैमिनी ब्राह्मण में भी स्त्री की कड़ी निंदा की गई है उसे संकटों का द्वार बताया गया है और यज्ञ में भाग लेने के अधिकार से वंचित किया गया है।

मैत्रयणी संहिता में तो उसे झूठ बोलने वाली और मृत्यु के देवता से संबंध रखने वाली बताया गया है। शतपथ ब्राह्मण में तो उसे "अनृत" झूठा कहा गया है और काठक संहिता में तो उसे भावनाओं में दबी हुई और नारकी बताया गया है।

ऋग्वेद में कहा गया है "स्त्री के दिल पर काबू नहीं पाया जा सकता है ।शतपथ के ऋषियों ने यहां तक ऐलान किया है कि" स्त्री से दोस्ती नहीं हो सकती उसके पास लकड़बग्घे का दिल होता है ।"यह कथन उर्वशी ने पूर्व को संबोधित करके कहा है। इसके अतिरिक्त शतपथ ब्राह्मण में ही कहा गया है कि" नारी, शूद्र ,कुत्ता और कौवा झूठ ,पाप और अंधकार के प्रतीक हैं।"

महाभारत तो स्त्री की आलोचना करने से जैसे अघाता नहीं है" स्त्री असत्य की प्रतिमूर्ति है है ।उस से बढ़कर

बदकारऔर कोई नहीं हो सकता ।वह चाकू की धार के समान है और विष, सूर्य और आग का संग्रह है। हजारों में कोई एक औरत पवित्र हो सकती है, अधिकांश चरित्रहीन हैं। वह वास्तव में नियंत्रण के बाहर हैं। वे पतियों का सम्मान केवल इसलिए करती है कि उन्हें कोई चाहने वाला नहीं है।"

मनु तो स्त्री की निंदा करने में दो कदम आगे बढ़ गए हैं, मनु ने स्त्री को आराम तलब,अस्थिर दिमाग वाली, प्रेम से दूर अपने पति से प्रेम न कर पराए मर्द से संबंध जोड़ने वाली कहकर निंदा की है ।एक अन्य स्थान पर मनु ने कहा है कि "मर्दों को अपनी ओर आकर्षित करना औरतों की आदत है ।अतः बुद्धिमान पुरुष को युवा स्त्री से सावधान होकर बात करनी चाहिए क्योंकि वह ज्ञानी -अज्ञानी किसी भी पुरुष को बहका कर गलत मार्ग पर ले जा सकती है।

सिंधु की सभ्यता में वास्तव में स्त्री वर्चस्व पर आधारित थी ।सिंधु के इलाक़े से प्राप्त होने वाली स्त्रियों की मूर्तियां देवी की उपासना का महत्व और प्राचीन भारत एवं भूमध्य सागरीय क्षेत्र पर स्त्री वर्चस्व की व्यवस्था ,इस विचार की पुष्टि करता है।

तमिल भाषा के कुछ शब्द भी द्रविड़ समाज में स्त्री वर्चस्व की व्यवस्था की पुष्टि करते हैं ।प्राचीन तमिल भाषा का शब्द "हलाल" (जिसका अर्थ है परिवार की देखभाल करने वाली रानी)। स्त्रीलिंग है ।और अर्थ के समांतर पुरुष बोधक शब्द का न पाया जाना द्रविड़ों के परिवारिक जीवन में औरतों की प्राकृतिक हैसियत की तरफ संकेत करता है।

मालाबार के तट पर बसने वाले केरल की कुछ जातियां और सिंध के इलाकों में बसने वाली प्राचीन कोहूल जातियों में स्त्री वर्चस्व की व्यवस्था अब भी प्रचलित है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था प्रारंभ में स्त्री वर्चस्व पर आधारित थी। लेकिन इसके अंतिम काल तक आते-आते औरत के इस वर्चस्व का खात्मा हो जाता है और इसकी जगह मर्दों का वर्चस्व स्थान ले लेता है ,जो आज तक लगभग उसी रूप में विद्यमान है।

शायद धार्मिक और आर्थिक दृष्टि से कमजोर होने के फलस्वरूप स्त्री की स्थिति पुरुषों की तुलना में कम थी।

एतदेय ब्राह्मण और कुछ ग्रंथों को आधार बनाकर कुछ विद्वानों ने इस विचार को प्रकट किया है कि वैदिक काल में लड़कियों को मार डालने की प्रथा आम थी। बाद में सामाजिक चिंतकों की भरपूर कोशिश से अब तक घृणित और उपेक्षित की हुई और एक प्रकार से अपराधिनी लड़की के पक्ष में अपनी आवाज उठाई और इस आंदोलन से उन्हें बहुत हद तक सफलता भी प्राप्त हुई।

**ऋग्वेद और स्त्री**

स्त्री और शूद्र को एक श्रेणी में रखकर उन्हें वेदों के अध्ययन से वंचित रखने की कोशिश बाद की अवधि में की गई ।जबकि पूर्व काल में महिला विदुषियों ने बहुत सी श्रृचाएं लिखकर उन्हें आम किया था। इन्हें वैदिक संहिताओं में स्थान दिया गया था। पारंपरिक विचारों के अनुसार ऋग्वेद के मंत्रों की रचना कई श्रृषियों के अलावा कम से कम 20 महिला विदुषियों का भी योगदान था। लोपा ,मुक्ता ,घोषा,इन्द्राणी, सची,वातायनी, मैत्रेई ,प्राची और गार्गी, ये कुछ ऐसी महिला विदुषी थीं।

किन्तु स्त्रियों की शिक्षा की यह स्थिति अधिक बरकरार न रह सकी। तीसरी सदी ईस्वी पूर्व तक आते-आते समाज की यह तस्वीर बिल्कुल बदल गई थी। कम उम्र में विवाह का रिवाज जोर पकड़ने के कारण लड़की की उचित शिक्षा की ओर से उपेक्षा बरती जाने लगी ।यह सही है कि इस अवधि में कहीं-कहीं दो,-चार विदुषी महिलाएं पैदा हुई ।किंतु सामान्यतः अब स्त्री की शिक्षा से दूर रखने का जोर बढ़ता गया और वैदिक काल की स्त्री प्रतिष्ठा शनेः-शनेःसमाप्त होने लगी।

अब स्त्री के संबंध में पतित विचारों का प्रचलन बढ़ने लगा ।अब पत्नी धर्मपत्नी नहीं "भार्या" और "जाया" शब्द से पुकारी जाने लगी ।बाद की संहिताओं और ब्राह्मण ग्रंथों में जहां कहीं भी स्त्री प्रसंग पर विचार किया गया बहुधा उसकी आलोचना ही की गई और कालांतर में समाज में उसका स्थान निम्नतर होता चला गया।

किंतु अब स्थिति धीरे-धीरे फिर बदलने लगी है ।धरती से लेकर अंतरिक्ष तक में भारतीय स्त्री की भूमिका अग्रणी होती जा रही है ।जीवन के हर क्षेत्र में स्त्री आज सीना ताने खड़ी है ।शायद इसलिए इस सदी की अपने देश से निर्वासित एवं विद्रोही लेखिका सुश्री तस्लीमा नसरीन स्त्री की भावनाओं को उद्वेलित करती हुई कहती है "नारी तुम उठो! अपनी रीढ़ की हड्डी सीधी करके एक बार खड़ी हो जाओ ।तुम चलो, यह रास्ता तुम्हारा है ।यह मैदान तुम्हारा है। सरसों खेत तुम्हारे हैं। रोशनी का पथ तुम्हारा है ।दिगन्त तक तुम्हें जितना कुछ दिखाई देता है वह सब तुम्हारा है। मैं स्त्री हूं ,इसलिए अपने खून की हर एक बूंद को शुद्ध समझती हूँ। मैं स्त्री हूं ,इसलिए आज मुझे अहंकार होता है। मैं स्त्री हूं, इसलिए शरीर के एक एक रोमकूप को पवित्र समझती हूं ।अगर तुम मनुष्य हो तो एक बार जंजीर तोड़ कर खड़ी हो जाओ ।दोनों हाथों से बंधन तोड़ दो।ये हाथ तुम्हारे हैं ।दोनों आंखों से जीवन को देखो,ये आंखे तुम्हारी हैं। तुम हो --हो करके हंसो ।ये होंठ और गाल तुम्हारे हैं। तुम सिर से पांव तक अपनी हो। नारी, यह दुनिया तुम्हारी है ।इस दुनिया में तुम अपनी इच्छा से जियो ।यह दुनिया यदि एक नदी है तो तुम पूरी नदी में तैरती रहो।यह दुनिया यदि एक आकाश है तो तुम पूरे आकाश में विचरण करती फिरो।

जीवन यदि तुम्हारा है, तो दरअसल तुम्हारा ही है।तो यह.जीवन तुम जैसी इच्छा हो,जिओ।नारी, तुम अपना हक़ खुद हासिल करो।

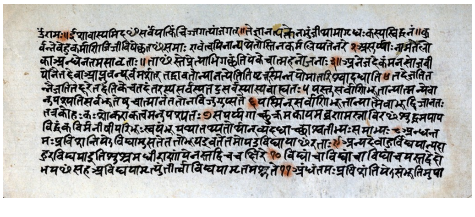

**विनय बंसल,**
आगरा

**आलेख**

**8 मार्च विशेष**

# "भारतीय नारी--कल, आज और कल"

वैदिक काल में भारतीय महिलाओं की स्थिति समाज में काफी ऊंची थी। उन्हें हर कार्य क्षेत्र में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी। महिलाएं न केवल शिक्षित थीं, अपितु धार्मिक क्रियाओं में भी सहभागिता करती थीं। वे यज्ञ, अनुष्ठान के कार्य भी करती-कराती थीं। उस काल में पुत्र और पुत्री के पालन-पोषण में भेदभाव नहीं किया जाता था। अस्पृश्यता, सती प्रथा, पर्दा प्रथा, बाल विवाह, भ्रूण हत्या, तलाक प्रथा, बहु-विवाह जैसी कुप्रथाओं का प्रचलन नहीं था। शिक्षा, संपत्ति, धर्म आदि मामलों में महिलाओं को पुरुष के समान ही अधिकार प्राप्त थे। यदि यह कहा जाए कि वैदिक काल भारतीय नारी के लिए स्वर्ण काल था, तो अनुपयुक्त नहीं होगा।

हमारे पौराणिक ग्रंथों में नारी को पूज्य एवं देवी-तुल्य माना गया है। हमारी धारणा रही है कि देव शक्तियां वहीं पर निवास करती हैं, जहां पर समस्त नारी जाति को प्रतिष्ठा व सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। भारत के सबसे प्राचीन ग्रंथ मनुस्मृति में नारी पर कहा गया है कि---

*यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमंते तत्र देवता*

अर्थात, जहां नारियों की पूजा होती है वहां देवता निवास करते हैं।

जीवन का बड़े से बड़ा धार्मिक कृत्य नारी के अभाव में अपूर्ण समझा जाता था। धार्मिक व सामाजिक कार्यों में ही नहीं रण क्षेत्र में भी वे अपने पति को सहयोग देती थीं। देवासुर संग्राम में कैकई ने अपने अद्वितीय कौशल से महाराज दशरथ को चकित कर दिया था। अपनी योग्यता, विद्वता और विवेकपूर्ण बुद्धि के बल पर ही द्रौपदी अपने पतियों को युद्ध एवं वनवास काल में भी सत्परामर्श देती थी। मैत्रेई, शकुंतला, सीता, अनुसुइया, दमयंती, सावित्री आदि भारतीय नारियों ने अपना विशिष्ट स्थान सिद्ध किया है।

प्राचीन काल में धीरे-धीरे महिलाओं की स्थिति में बदलाव आने लगा। नारी को अधिकारों, शिक्षा, धार्मिक अनुष्ठानों आदि से वंचित किया जाने लगा। उस समय में लोगों का मानना था कि नारी को बचपन में पिता के संरक्षण में, यौवनावस्था में पति के संरक्षण में तथा पति की मृत्यु के बाद पुत्र के संरक्षण में रहना चाहिए। चारदीवारी में ही रहना जैसी बंदिशें नारी के ऊपर लगने लगीं। उन्हें केवल संतान पैदा करने की मशीन के रूप में माना जाने लगा। नारियों को निर्देश दिए गए कि वे पतिव्रत धर्म का पालन करें और पति को परमेश्वर का रूप मानें। अशिक्षित और अल्प शिक्षित तथा निम्न वर्ग की महिलाओं की स्थिति में गिरावट आने लगी। मध्यकाल में देश पर हुए अनेक आक्रमणों के पश्चात भारतीय नारी का समाज में स्थान हीन होता चला गया।

आक्रांताओं ने हिंदू स्त्रियों को जबरदस्ती धर्म परिवर्तन कराया और उनके साथ ज्यादतियों शुरू कर दीं। हिंदू स्त्रियों के लिए अनेक प्रतिबंधात्मक निर्देश जारी किए। उन्हें घर में गुलाम की तरह रखा गया। उन्हें शिक्षा से वंचित रखा गया। पर्दा प्रथा और बाल विवाह पर जोर दिया जाने लगा। जन्म से लेकर मृत्यु तक पुरुष के अधीन रखा जाने लगा। नारियों को वेश्यालयों में बेचा जाने लगा।

कालांतर में ब्रिटिश शासन काल के आते-आते भारतीय नारी की दशा अत्यंत दयनीय एवं चिंतनीय हो गई। उसे अबला की संज्ञा दी जाने लगी तथा दिन प्रतिदिन उसे उपेक्षा एवं तिरस्कार का सामना करना पड़ा। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने अपने काल में बड़े ही संवेदनशील भावों से नारी की स्थिति का वर्णन किया है-- *अबला जीवन हाय, तुम्हारी यही कहानी।*

*आंचल में है दूध और आंखों में पानी।*

विदेशी आक्रमण और अत्याचारों के अतिरिक्त भारतीय समाज में आई सामाजिक कुरीतियों, व्यभिचार, परंपरागत रूढ़िवादिता ने भी भारतीय नारी को दीन हीन, कमजोर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

नारी के अधिकारों का हनन करते हुए उसे पुरुष पर आश्रित बना दिया गया। दहेज, बाल विवाह, सती प्रथा आदि कुरीतियां पनपने लगी।

यद्यपि ब्रिटिश शासनकाल में ही अहिल्याबाई, भीमाबाई, लक्ष्मीबाई, चांदबीबी आदि नारियों ने परंपराओं से ऊपर उठकर स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर के इतिहास के पन्नों पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है, तथापि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात अनेक समाज सुधारकों, समाजसेवियों तथा हमारी सरकारों ने नारी उत्थान की ओर विशेष ध्यान दिया है। सती प्रथा कानून, बाल विवाह कानून, तलाक कानून, भ्रूण हत्या कानून, दहेज कानून, बहु-विवाह कानून, वेश्यावृत्ति कानून, घरेलू हिंसा कानून, बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ अभियान, सर्व शिक्षा अभियान, नारी सशक्तिकरण अभियान आदि नारियों की स्थिति में सुधार करने तथा उन्हें पुरुषों के समान अधिकार प्रदान करने के लिए उठाए गए उपाय हैं। सरकार द्वारा महिलाओं के लिए आत्म- जागरूकता के विभिन्न कार्यक्रम शुरू किए जाने के कारण आज महिलाएं सशक्त हैं और हर क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर रही हैं। आज की नारी संस्कृति, सेवा क्षेत्र, विज्ञान व प्रौद्योगिकी आदि सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों में प्रगति के पथ पर अग्रसर है। आज नारी पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही है। आज नारी ने यह सिद्ध कर दिखाया है कि शक्ति अथवा क्षमता की दृष्टि से वह किसी भी क्षेत्र में

पुरुष से कम नहीं है। कई मामलों में तो नारियां पुरुषों से भी आगे हैं। वे घर के साथ-साथ अपना कार्यक्षेत्र भी सही तरीके से संभाल रही हैं।

किसी भी देश के विकास के लिए स्त्री और पुरुष का समान रूप से योगदान देना जरूरी है अन्यथा देश का विकास अवरुद्ध होता है। नि:संदेह नारी की वर्तमान दशा में निरंतर सुधार राष्ट्र की प्रगति का मानदंड है, लेकिन राष्ट्र सच्चे अर्थों में प्रगति तभी कर सकेगा जब पुरुष-समाज नारी के प्रति भेदभाव और हीन भाव का त्याग करेगा। नारियों को भी चाहिए कि वे पश्चिमी संस्कृति के रंग में रंगने की बजाय अपने परिवार के कर्तव्यों का भली-भांति निर्वहन करें। नारियों को चाहिए कि वे फैशन, सिनेमा, मॉडलिंग की चकाचौंध से आकर्षित न हों। उन्हें चाहिए कि वे भड़कीले वस्त्र धारण न करें बल्कि भारतीय संस्कृति के सिद्धांतों का अनुसरण करें और बच्चों में अच्छे संस्कार पैदा करें।

## लघुकथा

### डॉ दलजीत कौर

## "कुर्सी"

कल सुबह -सुबह मित्र का फ़ोन आया ।उसने पूछा -"तुम्हें याद है ?
हम बचपन में म्यूज़िकल चेयर खेलते थे ।"
मैंने कहा -"

हाँ ! कितना धक्का -मुक्की करते थे हम ,कुर्सी के लिए ।
"वह बोला -" हाँ !बब्लू ने तो एक बार कुर्सी ही तोड़ दी थी ।"
मैंने हंस कर कहा -"और हनी !वह कुर्सी उठाकर घर ले गया था ।"
अब उसका स्वर गम्भीर था ।बुझी हुई आवाज़ में बोला -"कल सदन में नेताओं ने भी ऐसा ही किया ।धक्का -मुक्की ,गाली-गलौज ,तोड़ -फोड़।
यार! इनका बचपना कब जाएगा ,"
कल से मैं उदास हूँ ।मुझे समझ नहीं आ रहा कि यह बचपना है ,मूर्खता है ,द्वेष है या कमीनापन ।

## "डॉक्टर "

वह डॉक्टर था ।पर अंत समय बिना इलाज के मर गया ।आजीवन उसने बस पैसे कमाए ।करोड़ों रुपए ,ज़मीन -जायदाद ,घर -दुकानें ।न मित्र ,न रिश्तेदार ,न बच्चों को वक़्त दिया ।किसी शादी -ब्याह में नहीं गया ।कहीं घूमने नहीं गया ।बाहर खाना नहीं खाया ।बेटी का ब्याह किया ।कभी उसके घर नहीं गया ।बेटे को पैसे का महत्त्व बताया पर इंसान और इंसानियत का नहीं ।

इसीलिए बेटा मर रहे पिता को बैंकों में ले गया ।कोट-कचहरी में ले गया ।ताकि सारी धन -सम्पत्ति उसके नाम हो सके ।
मगर अस्पताल नहीं ले गया कि पिता चैन से मर सके ।वह डॉक्टर था ।पर अंत समय बिना इलाज के मर गया ।

### भगवती सक्सेना गौड़

बैंगलोर

## "पार्टी"

आईटी प्रोफेशन की अंतहीन मीटिंग्स पूरे सप्ताह झेलते हुए अमन और उसके चारों दोस्त शुक्रवार आते ही दोस्तो के साथ पार्टी जश्न मनाने की पृष्ठभूमि तैयार करने लगते। महानगर के 15वे फ्लोर में फ्लैट में चारो रहते थे। शहर के पांच और दोस्तो को पार्टी के लिए निमंत्रित किया।

शनिवार की शाम से उनका घर गुलजार था, रात 9 बजे से ही म्यूजिक की आवाज़ दूर तक शोर मचा रही थी। ये सारे के सारे अमीर खानदान के सुपुत्र ही थे और कमाई भी शानदार थी। फिर किस बात की कमी न खाने की और न ही पीने की, ऑनलाइन खाना भी आर्डर हुआ, कुछ कुक ने भी बना दिया। स्टार्टर्स के साथ ही बोतले खुलने लगी, डांस और गाने भी वातावरण को रंगीन बनाने लगे। जम के पार्टी मनाने का दौर सुबह 4 बजे तक चलता रहा। फिर जिसको जहां जगह मिली, नींद ने दबोच लिया।

अचानक सुबह नौ बजे इण्टरकॉम की घंटी बजने लगी। अमन बंद आंखों से ही फ़ोन उठाकर बोला, "कौन है"
"आवाज़ आयी, हम नीचे के फ्लैट से बोल रहे, आपके घर मे आग लगी है, किचन की खिड़की से धुआं निकल रहा।"
कूदकर अमन किचन का दरवाजा खोलकर वहां पहुँचा तो देखकर चकित रह गया, धुआं ही धुआं, बीच मे कोई लेटा हुआ सा लगा। घबराहट में यही सोचा, कोई दोस्त स्वाहा हुआ। भागकर कमरे में आकर सबको गिना, तो सब पूरे थे।
फिर सबको उठाया, सबने बाल्टियों से पानी डाला, पता चला, बीन बैग में कोई ने जलती सिगरेट छोड़ दिया था, और वो ऐसे जला कि देखने मे कोई मनुष्य पड़ा हो।
किसी तरह आग ठंडी हुई, थोड़ी देर और होती तो सिलिंडर जो उससे एक फुट की दूरी पर था, कुछ और तमाशा दिखाता।
अब सबकी आंखे और दिमाग दोनो खुल चुका था, पार्टी समाप्त हो चुकी थी।

**कृष्ण कुमार यादव**

पोस्टमास्टर जनरल, वाराणसी परिक्षेत्र, वाराणसी-221002

विभिन्न विधाओं में अब तक कुल 7 पुस्तकें प्रकाशित ,उ.प्र. के मुख्यमंत्री द्वारा "अवध सम्मान", पश्चिम बंगाल के राज्यपाल द्वारा "साहित्य-सम्मान", छत्तीसगढ़ के राज्यपाल द्वारा "विज्ञान परिषद शताब्दी सम्मान" ,विक्रमशिला हिन्दी विद्यापीठ, भागलपुर, बिहार द्वारा डॉक्टरेट (विद्यावाचस्पति) की मानद उपाधि, राष्ट्रीय राजभाषा पीठ इलाहाबाद द्वारा "भारती रत्न"

**आलेख**

**रवींद्रनाथ टैगोर जी की जयन्ती (7 मई) पर**

# "कवींद्र-रवींद्र और उनके विमर्श"

भारतीय संस्कृति के शलाका पुरूषों में रवींद्रनाथ टैगोर का नाम प्रतिष्ठापरक रूप में अंकित है। वे एक ऐसे व्यक्तित्व थे, जो जीती-जागती किंवदंती बन गए। साहित्यकार-संगीतकार-लेखक-कवि-नाटककार-संस्कृतिकर्मी एवं भारतीय उपमहाद्वीप में साहित्य के एकमात्र नोबेल पुरस्कार विजेता के अलावा उनकी छवि एक प्रयोगधर्मी और मानवतावादी की भी है। तभी तो शब्द और संगीत के इस विलक्षण साधक के लिए पं0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा कि -"बड़ा आदमी वह होता है जिसके संपर्क में आने वाले का अपना देवत्व जाग उठता है। रवींद्रनाथ ऐसे ही महान पुरूष थे। वे उन महापुरूषों में थे जिनकी वाणी किसी विशेष देश या संप्रदाय के लिए नहीं होती, बल्कि जो समूची मनुष्यता के उत्कर्ष के लिए सबको मार्ग बताती हुई दीपक की भाँति जलती रहती है।" वाकई रवींद्रनाथ टैगोर को शब्दों में नहीं बाँधा जा सकता। उनकी रचनाधर्मिता का क्षितिज इतना विस्तृत है कि आज भी उनकी प्रासंगिकता जस-की-तस बरकरार है। कोई भी विधा उनकी लेखनी से अछूती नहीं रही। विभिन्न विधाओं में उन्होंने 141 पुस्तकें लिखीं, जो 27 खंडों में प्रकाशित हुईं ।

इनमें 15 काव्य-संकलन (12,000 कविताएं), 11 गीत-संग्रह (2000 गीत), 47 नाटक, 34 लेख-निबंध-अलोचना संग्रह, 13 उपन्यास, 12 कहानी-संग्रह, 6 यात्रा-वृतांत व 3 खण्डों में आत्मकथा शामिल हैं। रवींद्रनाथ की अधिकतर काव्य-रचनाएं 'गीत-वितान' व 'संचयिता' में संग्रहित हैं। यह एक अजीब संयोग है कि सभी विधाओं में समान अधिकार रखने वाले टैगोर को नोबेल पुरस्कार उनकी काव्य-कृति 'गीतांजलि' पर मिला और आज भी साहित्य का नोबेल पुरस्कार पाने वाले वे भारतीय उपमहाद्वीप के इकलौते साहित्यकार हैं।

रवींद्रनाथ टैगोर का जन्म 7 मई 1861 को बंगाल के जोरा सांको में हुआ। मनीषी द्वारकानाथ ठाकुर और माता शारदा देवी की 14वीं संतान के रूप में रवींद्रनाथ का जन्म हुआ।

रवींद्रनाथ ने एक ऐसे परिवार में जन्म लिया जहाँ परंपराएं व संस्कार थे तो आधुनिकता भी थी। भौतिकता की चकाचैंध थी तो अध्यात्म का परिवेश था, तभी तो उनकी आठवीं तक की शिक्षा घर पर ही हुई और आगे की शिक्षा के लिए वे इंग्लैण्ड भेजे गए। प्राचीन वैदिक साहित्य के साथ ही पाश्चात्य दर्शन का प्रभाव भी उनके खून में था। संगीत-कला-साहित्य की अनुगूंज वातावरण में सर्वत्र विद्यमान थी, यूँ ही सात वर्ष की अल्पायु में ही उन्होंने जीवन की पहली कविता नहीं रच डाली। स्वयं रवींद्रनाथ टैगोर ने लिखा है कि-श्मेरा परिवार हिन्दू सभ्यता, मुस्लिम सभ्यता एवं ब्रिटिश सभ्यता की त्रिवेणी था।

रवींद्रनाथ टैगोर पर अपने परिवार की सामासिक संस्कृति का बचपन से ही गहरा प्रभाव पड़ा। सांवले चेहरे के बीच उनकी आँखें मानो हर पल कुछ ढूँढना चाहती थी। कुछ आत्म, कुछ परमात्म और इससे भी परे जीवन की विसंगतियों को देखकर विचलित होने का भाव। यही कारण है कि उनका विलक्षण व्यक्तित्व एकांगी नहीं बल्कि बहुआयामी रहा। एक साथ ही उन्होंने साहित्य, संगीत, चित्रकला, नाट्य, शिक्षा सभी में महारत हासिल की। रवीन्द्र सिर्फ विधाओं के ही यायावर नहीं थे बल्कि जीवन में भी यायावर थे। उन्होंने 13 बार विश्व भ्रमण किया। 'रवीन्द्र-संगीत ' की गणना आज भी बंगाल की लोकप्रिय संगीत-शैलियों में होती है। रवींद्रनाथ के गीतों के अनुवाद जर्मनी, फ्रांस, जापान, इटली आदि में किए गए हैं। इटली के कुछेक चित्रकारों ने तो उनके गीतों के आधार पर चित्र रचना तक की है। तभी तो कहते हैं कि रवींद्रनाथ जितना पढ़े गए हैं, उससे कहीं ज्यादा सुने गए हैं। आज भी टैगोर की रचनाओं के पुनर्वेषण के स्वत: स्फूर्त प्रयास निरंतर चल रहे हैं। उनकी रचनाएं कल भी मनुष्य को झकझोरती थीं और आज भी झकझोर रही हैं। सत्यजीत रे जैसे दिग्गज फिल्मकार ने उनकी रचनाओं पर चारूलता, घरे बाहिरे व तीन कन्या जैसी शानदार फिल्में बनाई तो राजा, रक्तकरबी, विसर्जन, डाकघर जैसी नाट्यकृतियों का मंचन आज भी उतना ही प्रासंगिक दिखाई देता है। यहाँ तक कि अपने रंग-जीवन के अंतिम वर्षों में हबीब तनवीर जैसे विख्यात निर्देशक ने भी 'राजरक्त' नाम से टैगोर के नाटक 'विसर्जन' की मंच प्रस्तुत की और उसे आरंभिक प्रदर्शन के बाद मांजते रहे। वा कई पीढ़ियों के अंतराल के बाद भी रवींद्रनाथ टैगोर की कृतियोंका मंचनसंचयन यही दर्शाता है कि उनकी कृतियों की नई व्याख्याओं की गुंजाइश सदैव बनी रहेगी और वे अपनी प्रासंगिकता कभी नहीं खोएंगी। ऐसे में जो लोग

रवींद्रनाथ टैगोर की प्रासंगिकता पर प्रश्नचिन्ह लगाते है, उन्हें भी रवींद्रनाथ के पक्ष में बहने वाली बयार चकित-विस्मित करती रहती हैं। अगर आज भी रवींद्रनाथ के गीतों-कविताओं को गायक-गायिकाएं सजा-सँवार रहे हैं, उनके नाटक नए सिरे से खेले जा रहे हैं, 'काबुली वाला' और अन्य कहानियाँ लोगों के मर्म को छू रही हैं,'गोरा' जैसे उपन्यास नए विमर्श और पाठ के लिए उकसाते हैं,उनकाबालसाहित्य बहुतों का मन मोहता है, उनकी कृतियोंकोलेकरडाकटिकट जारी हो रहे हैं तो यह मानना पड़ेगा कि टैगोर आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं एवं वे हर समय हमारे सम्मुख नित नए रूपों में अवतरित होते रहते हैं। यहाँ टैगोरकेबालसाहित्य पर लिखे डब्लयू बी. यीट्स के शब्द गौर करने लायक हैं

वस्तुतः जब वह बच्चों के विषय में बातें करते हैं तो निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि वह संतों के विषय में भी बात नहीं कर रहे हैं।"

एक जमींदार परिवार से होते हुए भी रवींद्रनाथ उदार दृष्टि के थे। उनका कविमन जीवन की सहजता में विश्वास करता था। वे लोगों से घुलनेमिलने और उनकी जीवनसंस्कृति को समझने की कोशिश करते थे। फिर वह चाहे मुंडा आदिवासियों के मध्य रहकर उनकी संस्कृति को समझना हो, ग्राम हितैषी सभा के माध्यम से गाँवों में स्कूल, अस्पताल आदि की स्थापना हो, ग्राम संसद के तहत पंचायती राज को मूर्त रुप देना हो या नोबेल पुरस्कार में प्राप्त धन को शांतिनिकेतन को दान देकर उससे भारत के प्रथम कृषि बैंक की स्थापना हो। रवींद्रनाथ एक भविष्यदृष्टा थे। रवींद्रनाथ ने नारीसशक्तीकरण, नारी शिक्षा, विधवा विवाह, दहेज प्रथा, बालविवाह, देवदासी इत्यादि को लेकर प्रखरता से कलम चलाई। रक्तकरबी, गोरा, श्यामा, चंडालिका, चोखेरबाली, पुजारिनी, घरे बाइरे इत्यादि उनकी चर्चित रचनाओं को इसी क्रम में देखा जा सकता है। टैगोर की संवेदनाएं सिर्फ साहित्य-कला संगीत तक ही सीमित नहीं थीं, वे उसे वास्तविकता के धरातल पर देखना चाहते थे। इसी कारण मानवीय गरिमा और और सम्मान के कवि रूप में वह सकल विश्व में विख्यात हैं। विज्ञान में वे विश्वास करते थे पर नैतिकता की कीमत पर नहीं।

रवींद्रनाथ टैगोर का स्वतंत्रताआंदोलन में भी अप्रतिम योगदान रहा। आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में वे प्राध्यापक रहे, अंग्रेजियत के तानेबाने को काफी नजदीक से महसूस किया पर देशप्रेम की उत्कट अभिलाषा उनके अंदर व्याप्त थी। जहाँ कांग्रेस के नेता व अन्य भाषणों द्वारा लोगों में देशभक्ति की भावना को उभार रहे थे, वहीं उनके क्रांतिधर्मी गीत लोगों की रगों में आजादी का जोश भर देते थे। उन्होंने गीत के माध्यम से आह्नान किया था "जोदी तोर डाक शुने केउ ना आशे, तबे ऐकला चलो रे। "1905 के 'बंगभंग' आंदोलन के दौरान हिन्दूमुसलमानों द्वारा एक दूजे को राखी बाँधकर एकता का प्रदर्शन उनकी ही सोच थी। वे एक साथ ही क्रांतिकारी थे और उदारवादी भी। जलियांवाला बाग हत्याकांड के विरोध में नाइट हुड के तौर पर दी गई 'सर' उपाधि को लौटाने में उन्होंने कोई देरी न दिखाई। सरदार भगत सिंह जैसे क्रांतिकारी भी टैगोर की रचनाओं से प्रेरणा पाते थे। भगत सिंह ने अपनी जेल डायरी में टैगोर का एक लेख 'पूंजीवाद और उपभोक्तावाद' अपने हाथों से लिख रखा था। यही नहीं टैगोर की इस उक्ति को भी भगत सिंह ने दर्ज किया था कि "जो न्यायधीश अपनी तजवीज की हुई सजा के दर्द को नहीं जानता, उसे सजा देने का हक नहीं।

" यह अनायास ही नहीं था कि काकोरी कांड में सजा काट रहे रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाकउल्ला खां, रोशन लाल इत्यादि क्रांतिकारी 'सरफरोशी की तमन्ना' के साथ-साथ रवींद्रनाथ टैगोर व काजी नजरूल इस्लाम के क्रांतिधर्मी गीतों को गाकर वातावरण में देशभक्ति का उन्माद फैलाते रहते। इतिहास गवाह है कि रवींद्रनाथ टैगोर ने बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित राष्ट्रगीत 'वन्दे मातरम' की धुन तैयार की और स्वयं 1896 के कांग्रेस अधिवेशन में इसे पहली बार गाया। राष्ट्रगान 'जनगणमन' के रचयिता भी टैगोर ही हैं। टैगोर को यह सौभाग्य प्राप्त है कि वे भारत और बांग्लादेश दो राष्ट्रों के राष्ट्रगान के रचयिता हैं।

रवींद्रनाथ टैगोर की मातृभाषा बांग्ला थी, पर हिन्दी साहित्य से भी उनका लगाव था। किशोरवय से ही वे वाल्मीकिकालिदास समेत भारतीय काव्यधारा की विशद परंपरा के साथसाथ जयदेव, विद्यापति, कबीर और नानक की परंपरा से जुड़े। अपने समकालीन तमाम हिन्दीसाहित्यकारों से भी टैगोर का संपर्क बना रहा। वे खुद कहते थे कि "मैं हिन्दी भाषी लोगों के निकट संपर्क में आने हेतु बेहद उत्सुक हूँ। यहाँ हम लोग संस्कृतिसाहित्य प्रचार के लिए जो भी कुछ कर सकते हैं, कर रहे हैं। हमारी दिलीइच्छा है कि हिंदी भाषी लोग भी यहाँ आएँ, हमारे अनुभव में हिस्सा बटाएँ तथा अपने अनुभव से हमें भी लाभान्वित करें।

" आचार्य क्षितिमोहन सेन, पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी जैसे साहित्यकारों से उनका निरंतर संपर्क रहा और इनके माध्यम से उन्होंने हिन्दी साहित्य के मर्म को समझा। अज्ञेय व टैगोर की मुलाकात पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ही कराई थी। आचार्य क्षितिमोहन सेन, पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी, अज्ञेय के साथसाथ वे माखनलाल चतुर्वेदी व जैनेन्द्र से भी मुलाकात किए। टैगोर हिन्दी गद्य को समझने के लिए प्रेमचंद से मिलने को काफी उत्सुक थे, पर दोनों के मिलन का कोई संयोग अंत तक नहीं बन सका। इसे साहित्य की एक विडम्बना के रूप में ही माना जाएगा। उनकी दिली इच्छा थी कि साहित्य की भाषा कुछ भी हो, पर यदि वह लोगों की संवेदनाओं को झंकृत करता है तो अन्य भाषाओं में भी उसका अनुवाद होना चाहिए, ताकि लोग उससे लाभान्वित हो सके। रवींद्रनाथ ने स्वयं कबीर, मीरा विद्यापति का बांग्ला में अनुवाद किया। कबीर की वाणी से तो वे इतने प्रभावित हुए कि उनकी रचनाओं का 'हंड्रेड पोएम्स ऑफ कबीर' शीर्षक से अंग्रेजी अनुवाद भी किया।

साहित्य की विभिन्न विधाओं में हिन्दी की गौरवमयी परंपरा को टैगोर समग्र देश ही नहीं विश्व के सामने भी लाना चाहते थे। एक तरफ वे कबीरवाणी को अंग्रेजी में अनुदित करते हैं तो दूसरी तरफ उन्हें बघेलखंड के कवि ज्ञानदास के पद भी प्रभावित करते हैं। टैगोर ने स्वयं लिखा कि "ज्ञानदास की रचनाएं सुनकर मुझे अनुभव हुआ कि आजकल की आधुनिक कविता का परिचय इनकी कविताओं में मिलता है और ये कविताएं सर्वदा के लिए आधुनिक ही हैं। " गीतविधा पर टैगोर की जबरदस्त पकड़ थी। वे अन्य भाषाओं में रचित गीतों की संजीदगी से प्रभावित भी होते थे। हिन्दी साहित्य में गीतों की परंपरा पर उनका कथन उद्धृत करना उचित होगा "इसमें कोई संशय नहीं है कि एक समय हिन्दी भाषा में गीत साहित्य का आविर्भाव हुआ है, उसके गले में अमरसभा का वारमल्य है।

" पर इसके साथ ही वे सचेत भी करते हैं कि "आज वह अनादर के कारण बहुत कुछ ढका हुआ है। इसका उद्धार अतिआवश्यक है, जिससे भारतवर्ष के अहिन्दी लोग भी भारत के इस चिरंतन साहित्य के उत्तराधिकार के गौरव के भागीदार हों। " साहित्य की जीवंतता के लिए उसमें प्रवाह व सहजता का होना बेहद जरुरी है। यदि साहित्य में लचीलापन न हो तो उसके चटकने में देरी नहीं लगती। इसी प्रकार अलंकारों से परिपूर्ण साहित्य वर्गविशेष तक ही सीमित रह जाता है, जनसरोकारों से वह कट जाता है। रवींद्रनाथ टैगोर भी साहित्य में अलंकारों की इस कृत्रिमता के पक्षधर नहीं थे। एक बार उन्होंने बिहारी की रचनाओं के बारे में कहा कि "कुछ भी क्यों हो, बिहारी सतसई जैसे ग्रंथ मेरे लिए रुचिकर सिद्ध नहीं हुए, विशेषकर किसीकिसी दोहे के चारचार, पाँच पाँच अर्थों के विषय में वादविवाह मुझे कुछ जंचा नहीं। " वस्तुतः टैगोर कवित्व को साधना रुप में देखते थे। वह कहते थे कि मैं गीत गाने वाली चिड़िया जैसा हूँ, मेरा गीत कहीं बाहर नहीं बल्कि पत्तों के परदे में है, जहाँ बैठकर चिड़िया अनायास ही गाने लगती हैं। वे मानवतावादी विचारधारा के प्रबल पोषक थे। हिन्दी साहित्य के छायावाद युग पर टैगोर का प्रभाव देखा जा सकता है। स्वयं महादेवी वर्मा ने अपने ग्रंथ ' पथ के साथी में टैगोर को स्मरण करते हुए उनके प्रति अपने उद्गार व्यक्त किए हैं।

रवींद्रनाथ टैगोर (7 मई 1861...8 अगस्त 1941) की प्रतिभा किसी देशकाल की मोहताज नहीं थी। उन्होंने भारतीय साहित्य की समृद्ध परंपरा को इसकी उँचाईयों तक पहुँचाया और अंग्रेजी भारत में रहते हुए भी साहित्य का प्रतिष्ठित नोबेल पुरस्कार प्राप्त कर न सिर्फ स्वतंत्रचेतना का उद्गार किया बल्कि पराधीन भारत के आहत स्वाभिमान को एक बार फिर गर्व से अपना सिर उठाने का अवसर दिया। यह सोचने वाली बात है कि अगर बीसवीं शताब्दी के शुरू में बांग्ला जैसी प्रांतीय भाषा में एक ऐसा विश्वस्तरीय साहित्यकार हो सकता था जिसने साहित्य का सर्वोच्च सम्मान अर्जित कर नए प्रतिमान गढ़ें हों, तो यह भारत की भाषिक बहुलता और भारतीय भाषाओं की जीवंत ऊर्जा को रेखांकित करता है। एक तरफ वे प्रकृति और उसके रहस्य का गीत गाते हैं तो वहीं उनके साहित्य में मानव जीवन की बुनियादी चिंतायें भी है। अनेक मामलों में उनकी समझ अपने युग के सभी विचारकों, आलोचकों, रचनाकारों और कला मनीषियों के विचारों की सीमाओं को भेदती हुई मनुष्यत्व के मर्म तक गयी है। धर्म, शिक्षा, राष्ट्र, अध्यात्म, मानवतावाद, सार्वभौम मनुष्य इत्यादि को लेकर उनके विचारों की आज देशदुनिया में विशेष प्रासंगिकता है और बदलते परिप्रेक्ष्य में भी उन पर व्यापक पुनर्विचार और उसके प्रचार की आवश्यकता है। यदि टैगोर को नोबेल पुरस्कार मिलने के एक सदी के पश्चात भी भारतीय उपमहाद्वीप में किसी साहित्यकार को यह खिताब नहीं मिला तो यह स्वयं में टैगोर की प्रासंगिकता को कायम रखती है।

**काव्य**

**अमलेन्दु शुक्ल**
सिद्धार्थनगर उ०प्र०

## "कुरुकुल की तू रानी"

कुरुकुल की तू रानी,तेरा अच्छा न यूँ आना।
आकर कुरुभूमि में तेरा राधेय को यहाँ जगाना।
तू तो पाण्डुप्रिया है सुत तेरे बड़े धनुर्धर,
तुझसे ही है शोभित कुरुकुल का राजघराना।

तुम खुद चलकर आई हो या डर कोई ले आया।
किस हेतु आज यह वैभव पास मेरे है आया।
साथ हैं जिसके केशव डर उसे नहीं छू सकता,
फिर कौन सी ऐसी माया जो यह दिन है दिखलाया।

जो है अर्जुन की माँ वह मेरी न हो सकती।
क्या माँ भी कभी कहीं कोई निज सुत से छल है करती।
निज पौरुष के बल पर मैं जब ब्रह्मांड जीत सकता हूँ,
नौ माह पालने वाली क्यों मुझको तब सुत कहती?

मैं तो सुत राधा का हूँ मुझे दर्द नहीं अब देना।
कुछ कर्जों का बोझ उतारूँ और मुझे क्या लेना।
कोई हारे कोई जीते मुझे नहीं कुछ मिलना,
तब क्यों महल सौंपती वो जिसने न दिया बिछौना।

फिर भी माँग रही हो रानी तो लेते तुम जाना।
पाँच रहेंगे सुत तेरे तू तनिक न शोक मनाना।
लौट जा तू महलों में अब तेरा वहीं ठिकाना,
कुरुकुल की तू रानी,तेरा अच्छा न यूँ आना।

**अर्चना रॉय**
शिक्षाविद एवं साहित्यकार ,मुम्बई

**आलेख**

मातृ दिवस विशेष -22 मई

# "मां तहज़ीब की पाठशाला"

कहते हैं "जिस घर में तालीम और नेक मां हो वह घर तहज़ीब और इंसानियत की यूनिवर्सिटी होता है" सच ही तो है जिस घर में शांत, सरल,संस्कारी मां होती है उस घर के बच्चों में विनम्रता सरलता स्वत: स्फूर्त आ जाती है। शिशु उदर से ही अपनी मां से गर्भनाल से जुड़ा होता है तभी तो बूढ़े बुजुर्ग कहते हैं कि गर्भावस्था में अच्छी बातें अच्छे खान पान और धार्मिक और सुंदर सीख वाली किताबें हर होने वाली माता को पढ़नी चाहिए ताकि होनेवाले बच्चे पर भी इसका सकारात्मक असर पड़े ।

महाभारत काल में अभिमन्यु की कथा हम सबको स्मरण होगा कि वो जब अपनी मां सुभद्रा के गर्भ में था तब अर्जुन सुभद्रा को चक्रव्यूह रचना के बारे में बता रहे थे मगर सुभद्रा आरम्भ की बातें सुनकर ही निद्रा में चली जाती है जिसके फलस्वरूप अभिमन्यु को जन्म के बाद चक्रव्यूह में प्रवेश करना तो आ गया मगर निकलना नहीं आया।

हम सभी ने ये सुना है और देखते भी आए हैं कि बच्चा सबसे पहले मां ही बोलता है और उसकी धुरी भी मां ही होती है क्योंकि कोई भी बच्चा सबसे ज्यादा वक़्त मां के पास ही होता है अतः मां की हर गतिविधियों और व्यवहार पर उसकी पैनी नजर होती है यहां तक कि वो अपनी मां की अच्छी नकल भी करने लग जाता है।

हर माता का कर्तव्य होता है कि केवल जनम देना ही महत्वपूर्ण ना माने बल्कि अपने बच्चे में अच्छे गुणों,सद्विचार,नेकनियती की सीख भरे वो ना केवल लाड़ प्यार ही करे वरन् जरूरत पड़ने पर समुचित डांट फटकार भी करे ताकि बच्चे में अत्यधिक ज़िद और लापरवाही ना पनपे और वो हर व्यवहार से परिचित हो उद्वेलित ना हो।

हर माता का फ़र्ज़ है कि वो अपने बच्चे को अनुकूलता प्रतिकूलता ,सुख दुख की बाते बताए और हर परिस्थिति के लिए तैयार करें ताकि वो हर स्तिथि में समान और सम भाव में रहे और मजबूत रहे । बच्चों की धैर्य, अनुशासन, परिश्रम और धर्म की पहली पाठशाला मां ही होती है इसमें कहीं कोई शक नहीं है।

मैंने कई मांओं को देखा है जो अपने बच्चे को इतना लाड़ प्यार देती हैं,उसकी हर अच्छी बुरी इच्छाओं को, फरमाइशों को बिना समय लगाए पूरी करती है जिससे उनके बच्चों को अभाव और कमी की परिभाषा ही नहीं मालूम हो पाता है इसका असर उनके भविष्य पर प्रतिकूल पड़ सकता है क्योंकि हर वक़्त एक जैसा नहीं होता उन्हें अभाव और प्रभाव का अंतर नहीं मालूम पड़ता और ना ही धैर्य होता है कि वो अपनी प्रतिकूल परिस्थितयों का डटकर सामना कर सके।चाहे वो खान पान हो, रहन सहन हो, पहनावा ओढ़ावा हो सबकी जिम्मेदार उस घर की मां की होती है, तभी तो ऐसा कहते हैं कि "जैसी मां वैसे बच्चे " पूर्णतः सहमत हूं इस जुमले से।

मां हमें चलना,बोलना,खाना ,पढ़ना हर चीज सिखाती हैं,अब निर्भर करता है इस बात पर कि किस तरह सिखाती है और क्या सिखाती है।

यदि बीज उर्वर ,नीव मजबूत हो तो पेड़ की जड़ें हमेशा मजबूत,फलदार और हरा भरा होता है !माना मां की ममता की, त्याग की कोई दूसरी उपमा नहीं हो सकती है मगर हमे अपनी ममता और त्याग को कब उपयोग करना है कितना उपयोग करना है ये मां को ही तय करना होगा क्योंकि कभी - कभी मां की ममता बच्चे की कमजोरी बन जाती है और बच्चे की भविष्य को ही ग्रहण लगा देती है इसलिए ममत्व के साथ कठोरता का भी पुट होना जरूरी है इसका उदाहरण हमे इतिहास से अनगिनत मिल जाएंगी! महान शिवाजी महाराज की माता जीजाबाई स्वयं वीरांगना थीं जिसका असर उनके बेटे पर पड़ा,रामायण की पात्र माता कौशल्या और सुमित्रा की त्याग को कैसे कोई भूल सकता है जो अपने फूल से नाजुक बेटों को दारुण जंगल में पति के वचन के लिए भेज देती हैं, ऐसे कई उदाहरण हैं जो वर्तमान की माओं को प्रेरणा देती हैं ।

कहने का तात्पर्य यही है कि घर की हर मां में ईश्वरीय शक्ति निहित है जो अपनी औलाद को संस्कारी, धैर्यवान,मजबूत बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

***नास्ति मातृसमा छाया***
***नास्ति मातृसमा गति:***
***नास्ति मातृसमं त्राण***
***नास्ति मातृसमा प्रपा ।***

अर्थात माता के समान कोई छाया नहीं,माता के समान कोई आश्रय नहीं,माता के समान कोई सुरक्षा नहीं,माता के समान कोई जीवनदाता नहीं।

**सुरेखा शर्मा**
पूर्व हिन्दी सलाहकार सदस्या नीति आयोग नई दिल्ली भारत सरकार
हिन्दी सलाहकार सदस्या हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी दिल्ली
गुरुग्राम-122001

**आलेख**

# 'ढ़ाई आखर प्रेम के ••••'

**प्रेम न बाड़ी उपजै, प्रेम न हाट बिकाई।**
**राजा प्रजा जेहि रूचै, सीस देई ले जाई।।**

प्रेम के कई रूप हैं। प्रेम शब्द ढ़ाई आखर का होते हुए भी अपने अंदर विशाल गहनता समेटे हुए है । यह एक ऐसा भाव है,जो स्वतः ही प्रस्फुटित होता है। इसे करना जितना मुश्किल है उतना ही मुश्किल है निभा पाना , इस पर कुछ कहना व लिखना।प्रेम जीवन को सुखद और जीने योग्य बनाता है। हर काल,हर भाषा और हर समाज का साहित्य इस अद्भुत भाव से भरा पड़ा है । प्रेम के विभिन्न रूप हैं। प्रेम कोई वस्तु नही है जिसे किसी से मांगा जाए या छीन कर लिया जाए ।यह न तो किसी को उपहार में दिया जा सकता है न भीख में। यह किसी की जागीर भी नहीं जिसे बांट लिया जाए। यह प्रकृति की अनुपम देन है। प्रेम को किसी सीमा या सिद्धांत में नहीं बांधा जा सकता । प्रेम शाश्वत भाव है जिसको पाने के लिए विचारों में प्रेम -भाव मुख्य हैं। इसमें पवित्रता और सत्यता जरूरी है । जहां प्रेम होता है वहां का परिवेश सकारात्मक ऊर्जा लिए हुए होता है और सम्पूर्ण वातावरण प्रेम मय हो जाता है। अतः हम यहां जिस प्रेम की बात कर रहे हैं वह है ---फरवरी मास में चहूं ओर प्रेम की सुवास से सुगंधित करने वाला ,सराबोर करने वाला , मन को प्रफुल्लित करने वाला प्रेम अर्थात् 'ऋतुराज बसंत' यानि 'प्रेम का महीना।'

देखा जाए तो हमारा भारत देश ऋतुओं व त्योहारों का देश कहलाता है ।इसमें कोई अतिशयोक्ति भी नहीं है। हर मास कोई न कोई पर्व आता ही रहता है।मन में जब भावनाओं की कोपलें फूटने लगें तो समझो वसंत आ गया।इसी क्रम में वसंत ऋतु का विशेष पर्व वसंत पंचमी भी आता है। ऋतुराज वसंत जब आता है तो प्रकृति भी अपने यौवन पर होती है। प्राचीन काल से ही भारतवर्ष में वसंत ऋतु को "वसंतोत्सव "के रूप में पूरे उत्साह से मनाने की परंपरा रही है।शीतल, सुखद वासंती समीर जब तन-मन को स्फुरित करने लगे ,खेतों में पीली सरसों लहराने लगे, फूलों पर मधुरस पान करने के लिए मधुकर मंडराने लगे तो समझो मधुऋतु अर्थात् कामदेव की ऋतु का आगमन हो चुका है ।संस्कृत ग्रंथों में बसंत को कामदेव की मधुऋतु कहा गया है। सच भी है वसंत ऋतु है ही उल्लास,उमंग और मस्ती की ऋतु ।

पर आज वसंत उत्सव का रूप बदल गया है ।पश्चिमी देशों की तर्ज पर इसके रूप को प्रेम उत्सव, प्रेम - दिवस अर्थात् 'वेलेंटाइन डे ' ने ले ली है। समय के साथ-साथ इश्क, प्रेम इजहार करने के अंदाज ही बदल गए हैं । प्रेम आज ऑनलाइन हो गया है ।प्रेम अब छिपाने की नही बल्कि दिखाने की चीज बन गई है । देखा जाए तो इसमें कोई बुराई भी नहीं है। प्रेम एक गहरी संवेदना है।इसी संवेदना की मूल भावना प्रेम को अभिव्यक्त करने के लिए 'वेलेंटाइन डे' को अपनाया गया है ।14 फरवरी को मनाए जाने वाले इस 'वेलेंटाइन डे' का इंतजार छोटे बड़े शहरों तक के युवाओं को रहता है। धड़कते युवा दिल अपने साथी से अपने प्रेम का इजहार करने के लिए इस दिन का बेसब्री से इंतजार करते हैं।आज इसका नशा प्रायः हर युवा पर छाया हुआ है । वास्तविकता तो यह है कि 'वेलेंटाइन डे ' का संदर्भ 'संत वेलेंटाइन' नामक व्यक्ति से जुड़ा हुआ है । जो प्यार का इजहार करने के रूप में मनाया जाता है और वह प्यार का नैतिक रूप होता है । वेलेंटाइन डे दोस्तों ,परिचितों को मिलजुल कर रहने की प्रेरणा भी देता है।लेकिन स्वार्थपूर्ति के लिए लोगों ने 'वेलेंटाइन डे ' के प्रतिरूप को बदल कर रख दिया है ।

'वेलेन्टाइन डे' का विरोध हर वर्ष भारत में बहुत जोर-शोर से किया जाता है, क्या इसलिए कि यह 'प्रेम दिवस' है ? जो कि अनुचित है।प्रेम के स्वरूप की अभिव्यक्ति जो भारतवर्ष में है वह विश्व के किसी भी कोने में नहीं है।हमारे धर्मशास्त्रों में जो पुरुषार्थ -चतुष्ट्य बताया गया है - धर्म ,अर्थ, काम और मोक्ष ।उनमें काम स्वयंसिद्ध है ।काम ही सृष्टि का मूल है।वसंत का यह प्रेम सिर्फ इनसानों पर ही नहीं बल्कि संपूर्ण प्रकृति पर बरसता है । प्रेम से परिपूर्ण व्यक्ति ही समाज को प्रेम दे सकता है ।

सृष्टि के प्रारंभ से ही प्रेम का अंकुर प्रस्फुटित हुआ है ।जिसके बिना जीवन की कल्पना ही नहीं की जा सकती ।यह एक ऐसा स्रोत है जो जीवन के प्रति आकर्षण उत्पन्न करता है।निराशा में आशा का संचार करता है ।संस्कृति के संदर्भ में 'काम' को देखें तो स्त्री -पुरुष संयोग तक उसकी वास्तविकता को समेटकर आज केवल 'कामुकता' का पर्याय बना दिया है ।यदि देखा जाए 'काम' यदि मन का विकार होता तो अपने तेज से जलाकर राख कर देने पर शिव अनंग रूप में पुनः जीवित क्यों करते ? प्राचीन आचार्यों ने काम-विज्ञान पर अनेक ग्रंथ लिखे।'काम' के आधार पर जगत का निर्माण और उसका विकास निर्धारित है।कृष्ण ने गीता में कहा है 'ऋतुना: कुसुमाकर' अर्थात् ऋतुओं में मैं वसंत हूं। इसमें कोई अतिशयोक्ति नही ।

महर्षि वात्स्यायन जैसे ही संत वेलेन्टाइन जो इटली में पैदा हुए थे।कहा जाता है कि रोमन सम्राट क्लाडियस द्वितीय और वेलेंटाइन के बीच तलवारें खिंच गई थी । क्लाडियस द्वारा विवाह पर रोक लगा दी गयी थी ।उसे कुंआरे नौजवान फौजियों की जरूरत

थी।सम्राट के चंगुल से निकल कर भागने वाले युवक व युवतियां जिस ईसाई संत की शरण में जाते थे, वे थे संत वेलेन्टाइन ।वेलेंटाइन उनके विवाह करवा देते थे और प्रेम करने की शिक्षा देते थे साथ ही साथ जो सम्राट की कैद में होते थे उन्हें गुप्त रूप से छुड़ाने की कोशिश करते थे। कहते हैं इसी कारण प्रेम के पुजारी संत को सम्राट ने मौत के घाट उतार दिया था ।

किंवदन्ति यह भी है कि मौत से पहले वेलेन्टाइन ने प्रेम की गहराई में डुबकी लगाई । वे सम्राट क्लाडियस की जेल में रहे और जेल से ही जेलर की बेटी को अपना प्रेम संदेश कार्ड के माध्यम से पंहुचाया जिसके अंत में लिखा था '-तुम्हारे वेलेंटाइन की ओर से।' यह वही पंक्ति है जो आज भी यूरोप के प्रेमी-प्रेमिका एक-दूसरे को लिखना पसंद करते हैं।

फरवरी के मध्य तक प्रकृति के साथ -साथ प्राणी जगत में व चराचर जगत में परिवर्तन देखने को मिलता है ।तभी कहा जाता है 'आया बंसत,पाला )जाड़ा) उड़ंत।'वसंत ऋतु में आए बदलाव का वर्णन कालिदास ने 'ऋतुसंहार' में, श्री हर्ष ने 'रत्नावली ' में, भास ने स्वप्नवासदत्तम में और विशाखदत्त ने 'मुद्राराक्षस' में वर्णन किया है । सौन्दर्य का, प्रेम का,श्रृंगार का, रति का, ऋतुओं का वर्णन किसी पश्चिमी कवि या नाटककार ने नहीं किया होगा ।यदि प्रेम के पुजारी संत वेलेन्टाइन का विरोध करेंगे तो कालिदास ,हर्ष,बाणभट्ट का क्या करेंगे? खजुराहो और कोणार्क के मंदिरों का क्या होगा ? जिस प्रेम के स्वरूप का चित्रण भारतीय संस्कृति में है उतना वेलेंटाइन प्रेमियों को कहीं मिल जाएगा? आज का युवा अंधेरे में राह खोज रहा है।जहां मीरा और राधा का प्रेम हो वहां अगर वेलेंटाइन डे की प्रतीक्षा करें तो उन्हें क्या कहा जाएगा? बगीचे में बैठा व्यक्ति कागज के फूल सूंघता है तो उसे क्या कहेंगे ? लोगों को वेलेन्टाइन डे के नैतिक और वास्तविक रूप को समझकर ही शालीनता पूर्वक मनाना चाहिए न कि फूहड़ता का प्रदर्शन करना चाहिए । जीवन मूल्यों व संस्कारों को ध्यान में रखना चाहिए ।

कुछ समय से वेलेंटाइन डे पर फिजूलखर्ची का नया रूप ही देखने को मिल रहा है । युवा वर्ग को वेलेंटाइन डे अपनी ओर आकर्षित करता है।प्रेम का इजहार करने के लिए मंहगे से मंहगे कार्ड,गिफ्ट आकर्षक पैकिंग में देना एक स्टेटस सिंबल बन गया है । मल्टीनेशनल कंपनियों का मकड़जाल इतना फैल चुका है कि सबसे ज्यादा युवा वर्ग ही इसमें फंस रहा है।खून-पसीने की कमाई अमीर देशों को चली जाती है।बाजारू संस्कृति के कारण ही प्रेम का उत्साह प्रेमी-प्रेमिका तक ही सीमित रह गया है ।युवाओं को आकर्षित करने के लिए एक महीने पूर्व ही इसकी तैयारी शुरू हो जाती है ।ग्रीटिंग कार्ड, आकर्षक गिफ्ट, चाकलेट, गुलाब का फूल, संदेश पत्र,मोबाइल पर प्यार भरे मैसेज दिखाई देने के साथ-साथ होटल और क्लब अपनी और खींचने के लिए नये-नये विज्ञापन निकालते हैं।कुछ होटल तो सर्वश्रेष्ठ वेलेंटाइन जोड़े का चयन कर आकर्षक गिफ्ट देते हैं।वैसे गुलाब की महक ना हो तो वेलेंटाइन डे अधूरा -सा लगता है।इस दिन गुलाब की कीमत दस गुना बढ़ जाती है, मांग अधिक होने के कारण प्रेमियों को गुलाब के बिना ही अपना प्रेम दिवस मनाना पड़ता है ।

वैसे देखा जाए तो वेलेंटाइन डे को जोर-शोर से मनाने व जेब से ज्यादा खर्च करने के बाद भी क्या प्रेमी समझ सके हैं कि यथार्थ में प्रेम है क्या ? गिफ्ट, मंहगे कार्ड,मंहगे होटल्स में जाकर नृत्य करना ही क्या प्रेम है ? प्रेम को शब्दों में बांधना अत्यंत कठिन है ।प्रेम एक अनुभूति है।जिसे हर व्यक्ति अनुभव कर सकता है। वेलेंटाइन डे का इंतजार करते एक युवा से पूछा गया तो उसका उत्तर था, प्रेम का इजहार करने के लिए किसी खास अवसर की इन्तजार नही होती ।

आज वेलेंटाइन डे की आड़ में कुछ युवा अशोभनीय व्यवहार व गलत हरकते करते हैं।प्रेम जोर जबरदस्ती की चीज नही जिसे करने के लिए कहा जाए बल्कि दिल से दिल की राह होती है।प्रेम ह्रदय की धड़कन है।ह्रदय से स्वयं ही प्रस्फुटित होती है और बिना कहे अपने मीत तक पहुंच जाती है।तभी तो कहा गया है कि दिल को दिल से राह होती है।यदि यह कहा जाए कि वेलेंटाइन डे एक बहुत ही सुंदर अवसर है अपने मन की अनुभूति को अभिव्यक्त करने का , लेकिन बिना आडंबर के, बिना दिखावे के।प्रेम करने के लिए अधिक खर्च व तामझाम की जरूरत नहीं।भारतीय युवाओं ने इसे अपना ही लिया है तो सहजता से स्वीकार करें। दंगे व विरोधाभास नही होना चाहिए ।अपने प्यार को, मन की भावनाओं को प्रकट करने का दिन है ।लेकिन आज की युवा पीढ़ी अपनी संस्कृति व आदर्शों को भुलाकर व्यवहारिकता पर विश्वास करती है।उनके विचार में पैसे होगा तो प्यार अपने आप चलकर आएगा ।पैसे पास में होंगें तो सब मित्र बन जाएंगे ।आज की पीढ़ी प्रेमाभिव्यक्ति को पैसे से तोल रही है ।उनके विचार से वेलेंटाइन डे मनाने के लिए जेब भरी होनी चाहिए ।पश्चिमी जीवन शैली को अपनाने के चक्कर में अपनी सभ्यता की बातों को दरकिनार कर रहे हैं ।

वेलेन्टाइन डे मनाने के नाम पर जिन माध्यमों का उपयोग किया जा रहा है उसमें वास्तविक प्रेम के स्वरूप की झलक रत्ती भर भी नहीं मिलती।हां इतना अवश्य है कि प्रेम की राह में चलते हुए युवक युवतियों को धोखा मिलने का खतरा हमेशा रहता है।आज जरूरत है प्रेम जैसी सुन्दर भावनाओं का मजाक ना बनाया जाए। प्रेम एक अनुभूति है जो एक-दूसरे को जोड़ती है।प्रेम मन की प्रबल इच्छा है, शक्ति है।ह्रदय से कमजोर व्यक्ति प्रेम कर ही नहीं सकता।वेलेन्टाइन डे की आस लगाए हजारों नवयुवक यह क्यों भूल जाते हैं कि वेलेन्टाइन ने रोम के युवकों को न तो कोई व्यभिचार, अनाचार या अनैतिकता सिखाई न ही दुश्चरित्रता का पाठ पढ़ाया वह तो डूबते हुए लोगों का सहारा बना।जैसे हमारे समाज के प्रेमी जोड़े जो बागी हो जाते थे तो आर्य समाज उनका सहारा बनता है ,वैसे ही रोम के प्रेमी-प्रेमिकाओं का शुभ चिंतक वेलेन्टाइन था।अब अगर विदेशी मल्टीनेशनल कम्पनियां वेलेन्टाइन के नाम पर जाल फैला रही हैं तो उसमें वेलेन्टाइन का क्या दोष ? अतः वेलेन्टाइन को न नायक बनाया जाए न खलनायक ।

**अनुपमा अनुश्री**
साहित्यकार , प्रखर चिंतक, कवयित्री, रेडियो-टीवी एंकर, समाजसेवी।
अध्यक्ष- आरंभ चैरिटेबल फाउंडेशन एवं विश्व हिंदी संस्थान, कनाडा, चैप्टर मध्यप्रदेश

**लेख**

# "ऐसा.. तो सोचा न था...!"

कैसे! ये क्या हो गया! सच बात है साथियों! यह कहानी है इस नवीन सभ्यता, छद्म आधुनिकता के पीछे आत्ममुग्ध प्राणियों की दौड़ -भाग की। अपने को आधुनिक कहलाने के लिए कहां-कहां से हमने ऐसे तत्व इकट्ठे कर लिए, जो हमारी जिंदगी का कभी हिस्सा ही नहीं थे। हां जी! वही बात कह रही हूं कि इस किस्से में शामिल हो गए , विदेशी सभ्यता से आयातित, कई सारे नकारात्मक बिंदु, जिन्होंने हम सभी को कर लिया आच्छादित और जानबूझकर हम हो गए संक्रमित।

अवसाद, एकाकीपन, वर्चुअल वर्ल्ड, सोशल मीडिया, अति भौतिकता। जो नहीं है वह बताना, जो है वह छुपाना, खान-पान, रहन-सहन, बात- व्यवहार, दिखना-दिखाना, एक बनावट उसमें अपनी असलियत छुपाते फिर रहे हैं और इस छुपने-छुपाने में ,कितना कुछ घट रहा है ,बिगड़ रहा है, यह हम समझ नहीं पा रहे!

अपनी नैसर्गिकता, सहजता, सरलता ,एक दूसरे के प्रति सहानुभूति ,करुणा ,प्रेम ,सुगमता को भूलकर छद्म आवरण ओढ़े हुए खुद को भूले फिर रहे हैं, भटक रहे हैं और फिर न खुद चैन से जी पा रहे हैं और न ही किसी को चैन से जीने दे रहे हैं। हमारे तन- मन आत्मा के ताने-बाने इस दौर में, इतने बनावट में उलझे हुए, फंसे हुए कि अपनी सांसे ही दम तोड़ रही हैं। इस फैशन परेड ,व्यर्थ दिखावा में उलझे हुए हम ,इस तरह दौड़ लगा रहे हैं कि तन- मन, आत्मा सब हमारा साथ छोड़ दे रहे हैं। इसका खामियाजा किसी और को तो नहीं, हमें भुगतना पड़ रहा है।

कहा जा सकता है कि समाज ऐसे चल रहा है लेकिन हम तो स्वयं सुधर सकते हैं ।समाज हमारा ही आईना है। धीरे- धीरे रे मना धीरे सब कुछ होय। माली बाग सींचेगा। समय पर ही फल होगा । चुनौतियों बाधाओं और संघर्ष से सोना कुंदन बनता है। क्या पहले उपलब्धियां नहीं थी! क्या पहले लोग समृद्ध और विकसित नहीं थे! बहुत थे। तभी तो यह देश सोने की चिड़िया कहा जाता था। ज्ञान- विज्ञान, अध्यात्म, प्रेम, सहिष्णुता, विश्व बंधुत्व ,सहनशीलता, एकजुटता, त्याग कुल मिलाकर सहज-सरल लेकिन सफल जीवन। है न! यही सब तो था। क्यों दरक रहा है! क्यों चैन और सुकून हाथ से फिसल रहा है! हमने अपने चारों तरफ ऐसी जकड़न, बेड़ियां दिखावे की, स्वयं को भुलावे में रखकर जीने की, क्यों बना रखी है! दूर के ढोल इतने सुहावने क्यों दिखाई दे रहे हैं! जो स्वयं परेशान हैं उनसे हम परेशानियों मोल ले रहे हैं बल्कि उनके लिए तो भारत विश्व गुरु रहा है।पूरब से सब सीखना है पश्चिम को। पश्चिम से यह अवसाद, निराशा, नैतिक पतन, स्वार्थ भौतिकता की बाढ़ लेकर हम खुद को क्यों डुबोए जा रहे हैं! दोष कभी इस पर, कभी उस पर क्यों लगाए जा रहे हैं! भारत महान चरित्रों से भरा है, जिन्होंने बड़ी बड़ी उपलब्धियां हासिल की हैं और जीवन बिल्कुल सहज सरल रहा है। धर्म- अध्यात्म से परिपूर्ण।सच तो यही है यही सही मार्ग है अपने आप को खुशहाल करने का, अपनों को आनंदित रखने का ,समाज और देश हित विकास का।अपना असली चेहरा देखने और दिखाने, अपने असली व्यवहार को जताने और जहां कमी- कमजोरी है उसको सुधारने के सिवाय कोई चारा नहीं है। भाँति -भाँति के भेष धारण करने से , ओरिजिनल की बजाय फेक बने रहने से, हमारी महानता का कहीं जिक्र नहीं हो सकता। न स्वयं की जिंदगी में इसका महत्व है ,न ही समाज और देश की।

जीवन सबसे अधिक फलता- फूलता, खिलता और मुस्कुराता है ,सहजता -सरलता, नैसर्गिकता में। आवरण से मुंह छुपा कर , अपनी असलियत छुपा कर न तो इस लोक में उद्धार, न उस लोक में।

संयुक्त परिवार था। बच्चों का भली-भांति विकास और संरक्षण था, संस्कार थे । न्यूक्लियर फैमिली ने सीमित परिवार कर दिया और आत्म केंद्रित भी। परोपकार, सौहाद्र की जगह स्वार्थ हावी हो गया। रिश्तों में सुमधुरता, मर्यादा, इज्जत खो गई, सौदेबाजी शुरू हो गई। सब कुछ बाजारी दृष्टि से देखा जाने लगा।चैन -सुकून कहीं खो गया । तन रुग्ण,मन रुग्ण , आत्म तत्व विलीन हो गया। पाश्चात्य में जहां इतने आंकड़े हैं मन और तन रुग्णता के, लेकिन हमें तो वह दिखाई नहीं देते! हम अंधानुकरण में मस्त -मगन हैं । कॉपीकैट और फेक बने हुए हैं। अपने आंतरिक गुण-शक्ति और जीवन मूल्यों से सर्वथा अनजान। उन्मुक्त हास परिहास, पवित्र गीत- संगीत नृत्य, सब भूल गए । पराई धुन पर नाचने लगे, चलताऊ, अश्लील और भौड़े हो गए । न व्यवहार पर, न ही भाषा पर कोई नियंत्रण रहा।न अच्छा साहित्य पढ़ने में अभिरुचि है, न ही कुछ अच्छा देखने -सुनने और सीखने में। मिट्टी, प्रकृति, जड़- जमीन से जुड़कर सालों साल स्वास्थ्य और आनंद प्राप्त करते रहे हमारे पूर्वज। तथाकथित आधुनिक फैशन परेड , दिखावटी जीवन शैली में उलझे हुए, अब लगाते जा रहे हैं बीमारियों में फंसे अस्पतालों के चक्कर, सारी सही और अच्छी बात भूल कर।

ये अप टू डेट रेस्टोरेंट्स होटल , रेस्टोरेंट्स, केएफसी, मैकडॉनल्ड्स के आगे लाइन लगाकर खड़े हुए, भर भर खा रहे हैं, फास्ट फूड में भरे रासायनिक तत्व ,केमिकल्स! और यह सब करने के लिए कैश.... "एनीहाउ कैश - फिर ऐश" यही मूल मंत्र है न! देखा- देखी, दिखने -दिखाने में ऐसी घोड़ा -पछाड़ लग रही है कि लड़खड़ा रहे हैं ,गिरे जा रहे हैं! हकीकत यही है कि "ध्वस्त जीवन मूल्यों पर, बुलंद जिंदगी की इमारतें नहीं बनती" ईमानदारी और मेहनत, सत्यनिष्ठा का कोई पर्याय नहीं।

देखा- देखी,नकल को छोड़कर अपनी स्वाभाविक अकल जो सदियों से हमारे पास है ,का उपयोग करके ऐसा कुछ करें, जो हमारे तन और मन को सुकून दे, स्वस्थ रखें और सभी के लिए हितकारी सिद्ध हो । सूरज पूरब से निकलता है।

***दिल में सूरज उतारना होगा ।***
***जिंदगी को संवारना होगा ।।***

**भारती यादव ' मेधा '**
रायपुर छत्तीसगढ़

**व्यंग्य**

# "व्यथा मोबाइल की"

मैं एक यंत्र हूँ.. वही यंत्र जिसे देखकर आप उठते हैं जिसे देखकर सोते हैं और आपके हाथों से मैं कभी हटता ही नहीं.. और अगर कभी मैं बंद हो जाऊँ तो ऐसा लगता है मानो मनुष्य की जीवन दायिनी सांस ही रूक गयी हो... मनुष्य के जीवन का अभिन्न अंग.. मैं मोबाइल... मैं कितना खुशकिस्मत हूँ.,.. कोई मेरा साथ ही नहीं छोड़ना चाहता... चौबीस घंटे मैं लोगों के साथ ही रहता हूँ.. मुझसे दूरी किसी को भी बर्दाश्त नहीं होती.... सच मेरे जैसी किस्मत क्या किसी और की होगी??

जी हां मैं एक यंत्र हूँ और फिर भी मनुष्य के साथ उसकी जीवन रेखा की तरह रहता हूँ. मैंने मीलों की दूरियाँ सेकंड्स में बदल दी है. सात समंदर पार से भी लोग इस तरह से आपस में मिलते हैं मानो आमने सामने बैठे हों. अब किसी तरह की जानकारी के लिए किताबें खंगालने की जरूरत नहीं पड़ती है बस मेरा बटन दबाओ... और दुनिया भर की तमाम जानकारी आपकी मुठ्ठी में आ जाती हैं. घर से बाहर जाने की जरूरत ही नहीं, पूरी दुनिया आपके हाथों में समा जाती है. जिन हाथों में मैं रहता हूँ उनकी चमक देखते ही बनती है.

पूरी दुनिया के लोग मुझे सर आँखों पर बिठाए हुए हैं.. मेरे बिना वे एक पल भी जीना नहीं चाहते.. उनकी सुबहो शाम मेरे दर्शन से ही खुशनुमा हो जाती है...

लेकिन सबके हाथों हाथ होने के बाद भी मेरा मन व्यथित रहता है... मुझे लगता है मैंने तन की दूरियाँ तो मिटा दी है लेकिन मन से मन की नजदीकी को भी कम कर दिया है. महसूस कर सकता हूँ मैं बुजुर्गों का वह दुख.. जब एक ही कमरे में बैठे बेटा, बहु, नाती, पोते या अन्य रिश्तेदार अपने अपने मोबाइल में व्यस्त रहते हैं.. वे इस उम्मीद से सबको निहारते हैं कि दो बातें वे भी उनसे कर लें.. हाल चाल लेकर उनके दुख दर्दों को भी साझा कर लें... बच्चों को महसूस कराना चाहते हैं कि तुम्हारे बचपन में हमने भी सब काम छोड़कर तुम्हें समय दिया था... लेकिन उनके मन की बात समझने का समय किसके पास है... सब तो मुझमें ही व्यस्त रहते हैं.. घर में कोई एक दूसरे का हालचाल नहीं पूछता और मेरे माध्यम से हद से ज्यादा अपनापन दिखाया जाता है... बड़े बुजुर्गों की सलाह को मैंने गुजरे जमाने की बात कर दी है और गूगल बाबा को गुरु बना दिया है.. उफ्फ... बहुत लाचारी महसूस करता हूँ मैं.. दुख होता है अपने अविष्कार पर.. जब देखता हूँ भावनाओं और रिश्तों को सिमटते हुए...

मेरे दादा जी यानी लैंडलाइन फोन बताते थे कि मेरे जन्म से पहले जब घर घर में उनका यानी लैंडलाइन का बोलबाला था... उस दौर में फोन की एक घंटी पर ही घर के सारे सदस्य फोन उठाने के लिए दौड़ पड़ते थे... इसके लिए बच्चों में झगडा भी हो जाता था... बहुत खुशी और अपनेपन से बातें होती थी ... अब मैं सबके हाथों में हूँ लेकिन बातों में रिश्तों की गर्माहट महसूस नहीं होती..

कभी कभी मैं सोचता हूँ मेरा अविष्कार तो लोगों को नजदीक लाने के लिए किया गया था लेकिन देखता हूँ कि लोग अब आपस में ज्यादा बात नहीं करना चाहते.. बस मैसेज मैसेज का खेल होता है और यदि गलती से भी किसी ने मैसेज का जवाब नहीं दिया तो वह भी बंद.. फिर भला मैं कैसे लोगों की नजदीकियां बढ़ाने का काम कर रहा हूँ..

मैंने बच्चों का बाहर जाकर खेलना बंद कर दिया है, पार्क बेजान, सड़के सुनसान और बच्चे घर मे मोबाइल गेम खेलने में व्यस्त... इंटरनेट विकल्पों के गलत उपयोग से बच्चों का अपरिपक्व मस्तिष्क दूषित हो रहा है.. उनकी कोमल संवेदनाएं लुप्त होती जा रही हैं और मुझसे निकलने वाले रेडिएशन का दुष्प्रभाव भी पड़ रहा है चाह कर भी मैं अपने प्रति लोगों का मोह कम नहीं कर पा रहा हूँ...

मेरे शरीर में भी चोट लगती है जरा भी आराम नहीं.. दिन भर काम करता हूँ.. कई बार असावधानीवश जमीन पर भी पटक दिया जाता हूँ.. मेरे अस्थि पंजर तक ढीले हो जाते हैं.. फिर भी मेरा उपयोग बंद नहीं किया जाता..

तीज त्योहारों पर लोगों का मिलना कम हो गया है. पहले फोन पर शुभकामनाएँ बोलकर दी जाती थी लोग एक दूसरे की आवाज़ सुन लेते थे.. पर अब तो त्योहारों में भी रिश्तेदारों की आवाज़ नहीं सुनाई देती है.... मैसेज के खेल ने आवाज़ को दबा दिया है.. उफ्फ... फुरसत के पल भी लोग अपनों के साथ नहीं बिता कर मुझमें ही समाये रहते हैं...

मैं लोगों का स्टेटस सिम्बल भी बन गया हूँ.. विभिन्न आकार, प्रकार , रंग रूप का होने के साथ साथ कई फीचर होते हैं मुझमें.. परंतु जैसे ही मार्केट में नया कोई और मॉडल आता है.. मुझे बदल कर मेरी जगह उसे दे दी जाती है.. इससे बड़ा दुख मेरे लिए और क्या होगा.. फिर ये सोच कर संतुष्ट हो जाता हूँ कि मानव तो जीवंत रिश्तों की भावनाओं को नहीं समझना चाहता तो मैं फिर भी एक यंत्र हूँ...

मेरा मन द्रवित होता जब दिन भर मातापिता के आने की राह देखते बच्चे घर पर भी उनको मुझमें ही काम करते पाते हैं.. मन व्यथित होता है जब बुजुर्ग माता पिता अपने बच्चों से दो पल बात करने के लिए तरसते हैं... मैं भी चाहता हूँ कुछ समय आराम करना, आदत नहीं सहूलियत

बनना, चाहता हूँ मेरी दुनिया से निकल कर लोगों का वास्तविक दुनिया में खुश रहना, चाहता हूँ मानव का आपस में गर्मजोशी से मिलना, आपस में गर्मजोशी से मिलना, एक दूसरे से आमने सामने बैठ बात कर दिल की भावनाओं को समझना...

याद रहना चाहता हूँ एक ऐसे यंत्र के रूप में जिसने लोगों के मन को भी एक दूसरे से जोड़ा हो... पर फिर व्यथित हो जाता हूँ ये सोचकर कि जब इंसान ही इंसान की मनोदशा और व्यथा नहीं समझ पा रहा है तो क्या वे मेरी यानि मोबाइल की अंतर्व्यथा समझ पाएंगे... जबकि हर इंसान के अंतर्मन की ही कथा है.. मोबाइल की व्यथा....

वेलेन्टाइन का विरोध करने वाले वेलेन्टाइन की आड़ में अपना उल्लू सीधा करते हैं ।जिस भारत में प्रेम ग्रंथ लिखे गए उन्हें वेलेन्टाइन से क्या डर? जिस देश में कृष्ण और राधा और मीरा के प्रेम का गान होता हो वहां वेलेन्टाइन का प्रेम नही टिक सकता। दुनियाभर के हर काल में ,हर भाषा का साहित्य अद्भुत प्रेम कथाओ से भरा पड़ा है । प्रेम पथ पर चलना कोई सरल काम नहीं है अपितु दुधारू तलवार पर चलने का नाम है प्रेम।

लेकिन आज प्रेम की अभिव्यक्ति के तरीके इतने विकृत व दूषित क्यों हो गए हैं ? हर वर्ष वेलेंटाइन के नाम पर विरोध और दंगे करवाए जाते हैं इन्हें रोकना होगा।आम जनता को वेलेन्टाइन से कोई सरोकार नहीं। झंडा उठाकर वेलेंटाइन डे के विरोधियों से यदि पूछा जाए कि नारी जाति को,समाज को कितनी सुरक्षा प्रदान करते हैं तो बगले झांकते नजर आएंगे ।जब छोटी -छोटी लड़कियों के साथ दुराचार होता है ,तब कहीं ये या इनके दल विरोधी अभियान के झंडे लिए हुए नारे लगाते हुए दिखाई देते हैं ? नहीं न ?

तो आइए !बिना शोर शराबा किए ,बिना दिखावे के सब इस दिन को, इस ऋतु को सुंदर व सुखद प्रेमोत्सव ,वसंतोत्सव व प्रेम दिवस के रूप में मनाने का प्रयास करें।समाज में प्रेम के बीज बोएं न कि नफरत के , कटुता के ,ईर्ष्या-द्वेष के । तभी प्रेम दिवस मनेगा। ***"प्रेम न बाड़ी उपजे ,प्रेम न हाट बिकाई•••••"***

*******

## गजल


**हमीद कानपुरी**

अब्दुल हमीद इदरीसी,

179, मीरपुर, छावनी, कानपुर-208004


रफ़्ता रफ़्ता मुकाम तक पहुँचे।
हाथ मेरे भी बाम तक पहुँचे।

हाथ जिसके भी जामतक पँहुचे।
दाग उसके ही नाम तक पहुँचे।

बात आगे नहीं बढ़ाना फिर,
बात कोई जो काम तक पँहुचे।

योजना है फ़क़त वही अच्छी,
फायदा गर अवाम तक पहुँचे।

ख़ास अपना अगर समझते हो,
बात कोई न आम तक पहुँचे।

## काव्य

**कैलाश मनहर**

स्वामी मुहल्ला,मनोहरपुर(जयपुर-राज.)


### दो गीतिकायें

(एक)

नई तारीख़ में तदबीर-ए-ख़्वाब लिक्खेंगे
हरेक ज़ुल्म का अब हम जवाब लिक्खेंगे

बदी के दिल में सदा इज़्तिराब लिक्खेंगे
और अच्छाई के हक़ में सवाब लिक्खेंगे

नई तरक्की लिखेंगे नये समाज की हम
हरेक ज़ुल्मी का खानाखराब लिक्खेंगे

तुमने बर्ताव किया जिस तरह का जनता से
हम अपने दिल में वह सारा हिसाब लिक्खेंगे

तुमने हड़पी है कपट से जो हमारी धरती
उसको छुड़वा के फिर से इंतखाब लिक्खेंगे

रहेंगे मिल के अब आपस में सारे मेहनतकश
सभी के वास्ते दाना-ओ-आब लिक्खेंगे

तुम्हारा आसमाँ कदमों में होगा धरती के
"हम अपने खून से जब इन्क़लाब लिक्खेंगे"

**(दो)**

लफ़्ज़ कागज़ पे कुछेक बोयेंगे
फिर भी क्या चैन से हम सोयेंगे

आज की रात बहुत मुश्किल है
आज हम ज़ार ज़ार रोयेंगे

एक पल की खुशी के ख़ातिर हम
जाने कितने पहाड़ ढोयेंगे

खुश्क है जो ज़मीन-ए-सच्चाई
खून-ए-दिल से इसे भिगोयेंगे

आरज़ू दिल में बसा रक्खी है
और है ही क्या जिसको खोयेंगे

हार गूथेंगे ज़िन्दगी का जब
उसमें लम्हात-ए-ग़म पिरोयेंगे

**मनीष कुमार सिंह**

भारत सरकार, महिला एवं बाल विकास मंत्रालय में प्रथम श्रेणी अधिकारी के रूप में कार्यरत।
प्रकाशित पुस्तकें- सात कहानी-संग्रह- 'आखिरकार' (2009), 'धर्मसंकट' (2009), 'अतीतजीवी' (2011), 'वामन अवतार' (2013), 'आत्मविश्वास' (2014), 'सांझी छत' (2017), 'विषयान्तर' (2017)

**कहानी**

# "जमीन के जहाज"

देबू को पत्थर पर यूँ ही हथौड़ी पटकते देखकर सूबेदार सिंह भड़के। "ये क्या खटपट कर रहे हो? कोई काम नहीं है.. ? जाकर बाहर देखो कि बाकी लोग क्या कर रहे हैं। उनका हाथ बटाओ। काम-काज और खाना-पीना मिलजुल कर करना शोभा देता है।"

उसने नजर उठाकर देखा और बद्स्तूर जारी रहा। "चाचा हथौड़ी का लोहा सही जगह फिट कर रहा हू। फालतू बैठना मुझे भी जॅचता नहीं है।" बात सही थी। वे चुप हो गए।

बाहर सोनू और दीपू लोहे का ग्रील तैयार कर रहे थे। वेल्डिग का काम चल रहा था। चाचा यानि सूबेदार सिंह ने अपनी साइकिल निकाली और दफ्तर का रास्ता पकड़ा। पीछे से धर्मपत्नी की आवाज आयी। "खुद तो अपना नाम इतना धमाकेदार रख लिया जैसे बहुत बड़े सूरमा हो और बाल-बच्चों का नाम देबू, सोनू और दीपू रख मारा। जैसे अभी भी बच्चे हो। ये क्या नैया पार लगाएगें।" जाते-जाते उनके कर्णो से यह सुना परन्तु प्रतिक्रिया देने का वक्त शेष नहीं था। दफ्तर का समय नौ बजे सुबह था। पब्लिक डिलिंग का समय साढ़े नौ से शुरु होता था। परन्तु दस से पहले दरवाजा और काउण्टर नहीं खुलता था। सूबेदार सिंह चौकीदार थे। गेट खोलने की जिम्मेवारी उन्हीं की थी। जब पौने दस बजे लोगों की भीड़ एकत्रित हो जाती तो वे खरामा -खरामा चाबी लेकर आगे बढ़ते। उन्हें देखकर जनता शोर करती। एकाध बुजुर्ग आक्रोशमय स्वर में पूछते। क्यों भाई बाहर टाइमिंग साढ़े नौ लिखा है फिर इतनी देर क्यों....? कुछ युवक हॅसकर फिकरे कसते। सरकारी नौकरी है, ऐसे ही चलेगा। वे अनसुना करके गेट खोलते और लौट जाते। बात का जवाब देने लगे तो काम कर चुके। परन्तु कभी-कभी तेज आवाज में प्रत्युत्तर देते,"जाकर अंदर पूछिए। एस.डी.ओ. साहब से बात कीजिए। टाइमिंग वे बताएगें।"

सुबह दो कप चाय पी लेते। बाद में बीड़ी-सिगरेट चलता। दोपहर में खाने की छुट्टी और शाम को गेट बन्द करने की ड्यूटी। टेलिफोन एक्सचेंज में यही नौकरी थी उनकी।

एक दिन गेट पर अव्यवस्था देखकर एस.डी.ओ. साहब ने उन्हें बुलवाया। "साहब फौज में पन्द्रह साल नौकरी की है। वहॉ का डिस्पिलिन अलग था। यहॉ माहौल दूसरा है। हमें कहा जाता है कि पौने दस बजे से पहले गेट का ताला नहीं खुलना चाहिए। बताइए क्या करें... ? आगे जो आपका हुक्म होगा सो करेगें।" घनी मूछों वाले सूबेदार सिंह का वक्तव्य सुनकर एस.डी.ओ. साहब को हॅसी आ गयी। "कोई बात नहीं। आपका काम दुरुस्त चल रहा है। बस पब्लिक का ख्याल रखिए। साढ़े नौ बजे तक गेट खोल दिया कीजिए।"

खड़े-खड़े ड्यूटी बजाना उन्हें न केवल थका देता था बल्कि बेहद उबाऊ कार्य भी था। फौज की नौकरी में कई किलोमीटर चलना-दौड़ना उन्हें अखरता नहीं था। एक बार किसी गलती पर अफसर ने हथियार सहित मैदान के दस चक्कर लगवाए थे। यह ठीक है कि तब वे जवान थे परन्तु रुटीन काम मनुष्य की शक्ति का हरण करके उसे एक यंत्र में परिवर्तित कर देता है। संवेदना व अनुभूति के स्तर पर भी वे इस हरण के शिकार थे।

फौज की नौकरी के बदले दस हजार रुपया पेंशन मिलती थी। कुछ बरस और जिन्दा रहे तो यह पन्द्रह हजार हो जाएगी। वर्तमान नौकरी से भी ठीक-ठाक पगार मिल जाती है। गॉव-देहात से नाता है इसलिए अनाज की कमी नहीं है। भगवान की दया से दाल-रोटी का कोई कष्ट नहीं। जिन्दगी में किसी की धौंस नहीं सही। बड़े भाई के देहांत के बाद भतीजे की जिम्मेवारी अपने कंधे पर ले ली। देबू को अपने दोनों बेटों सोनू और दीपू के साथ रख लिया। सोनू पढ़ाई में कमजोर था। दसवीं के आगे नहीं बढ़ पाया। पास के लोहे के गेट व जाली बनाने वाले के यहॉ काम करता था। दीपू फिलहाल एक कुरियर एजेन्ट था। आगे की पढ़ाई जारी रखने की बात करता था। लेकिन सूबेदार सिंह को मालूम था कि उसकी बात में कितनी सच्चाई है। बेटी की शादी में खेत बेचना पड़ा। पर इस बात का संतोष था कि घर और वर अच्छा मिला। दामाद सरकारी बैंक में क्लर्क था। स्थायी नौकरी और रहने के लिए महानगर में दो कमरे का अपना फ्लैट। और क्या चाहिए। पचास पार के व्यक्ति के लिए यह स्थिति सुखद मानी जानी चाहिए। बस लड़कों की तरफ से कुछ खटका था। अगर लायक न बने तो....। किसी को उम्र भर कौन बैठाकर खिलाता है।

एक दिन लड़कों में सबसे पढ़ा लिखा दीपू आकर मॉ से कहने लगा कि एक आइडिया आया है। मुहल्ले में एक रेस्टोरेण्ट खोल लेते हैं। कैटरिंग का काम भी करेगें। सभी भाई मिलकर सॅभालेगें। इधर-उधर की दो पैसे की नौकरी से अपना धंधा लाख गुणा अच्छा है। यहॉ की बरक्कत अपनी होगी। नौकरी में की गयी मेहनत मालिक की होती है। मॉ की समझ में बात ज्यादा नहीं आयी पर वह यह जान गयी कि दीपू कुछ ढ़ंग की बात कह रहा है। लेकिन प्रश्न पूँजी का था। बिटिया ब्याहे ज्यादा वक्त नहीं गुजरा था। शाम को पानी पीते सूबेदार सिंह ने इस योजना की रुपरेखा सुनी। वे किसी खडूस बूढ़े की तरह इसे सिरे से खारिज न करके पूँजी की व्यवस्था का प्रश्न उठाने लगे। "बाबूजी थोड़ा लोन हम करवा लेगें।" दीपू का कथन था। लेकिन बाकी की व्यवस्था करने में गॉव के बचे-खुचे खेत को तिरोहित करना पड़ेगा।

यह कल्पना उनके मन में डॅक मारने लगी। स्त्री के गहने की ओर देखना वे पुरुषोचित कर्म नहीं मानते थे।

गॉव से ससुरजी का फोन आया। साले की लड़की की शादी अप्रैल में है। जाना ही पड़ेगा। इससे पहले सगी भतीजी की शादी है। दस-पन्द्रह हजार का खर्च कहीं नहीं गया। होली-दीवाली,छठ सब यहीं मनाते हैं। आए दिन आने-जाने का खर्च अपने बस का नहीं। इधर ही किसी ताल-तलैया के घाट पर सूरज भगवान को अर्ध्य दे देते हैं। अड़ोस-पड़ोस के साथ होली मना ली। दीवाली में दीए जलाए। बच्चे पटाखे छोड़कर खुश हो जाते हैं। आखिर हर मौके पर गॉव-देहात जाना मुश्किल है। शादी-ब्याह और गमी की बात अलग है। रोजगार के वास्ते लोग छिटक कर दूर-दूर चले गए हैं पर कुटुम्ब एक है। एक बाबा-दादा की सन्तान। भावोच्छवासों का कथ्य इस परिवार में विस्मृत नहीं हुआ था। सुख-दुख से भरी पुरानी स्मृतियों के साझेपन की हूक उठती थी। खेत बिका तो बिका पर साझापन न जाए। इस साझापन में समूचा परिवार दुश्चिन्ताओं का एकजुट होकर वहन तथा प्रतिकार करने लगता था।

इतना खर्च और ऊपर से लड़कों को लाइन पर लगाना। सब पार लग जाएगा। अपना हाथ जगन्नाथा। पिछले प्रवास में गॉव की एक बुआ के लड़के ने पॉच हजार मॉगे थे। सूबेदार सिंह ने दिया भी। लेकिन अब आगे की गुंजाइश नहीं थी। गुदगुदी उतनी ही करनी चाहिए जिससे हॅसी आए पर जान न जाए। उन्हें याद था-बचपन में बुआ बेहद स्नेह से उनकी मॉ से कहा करती थी कि बच्चे को बेल का शरबत पिलाओ। कितनी गर्मी है। उस ठंड़े मीठे शरबत का स्वाद उन्हें पैसे देने को मजबूर कर बैठा।

देबू ने बताया कि दीपू भईया ने लोन का इंतजाम कर लिया है। अभी किराए की जगह में रेस्टोरेण्ट खुलेगा। मकान-मालिक पहचान वाला है। सूबेदार सिंह धर्मपत्नी को लड़कों के पीछे यह कह चुके थे कि मुझसे पैसे की बात न करना। अपना हाथ बिल्कुल खाली है। जो है सो बीमारी-इमरजेन्सी की खातिर है। यूँ लगाने के लिए नहीं। वह चुप रही। लेकिन ऐन मौके पर दस हजार की गड्डी पकड़ा कर बोले,"बच्चों को दे देना।"

मुहुर्त वाले दिन बड़ा हंगामा हुआ। नजदीक की बस्ती का दबंग कुछ लोगों को लेकर पहुँच गया। "यह प्रॉपर्टी झगड़े वाली है। इसमें हाथ न डालो।" सोनू ने कुछ जवाब दिया। इस पर उन लोगों ने उसे धक्का दे दिया। देबू और दीपू भाई पर हमला देखकर उनसे भिड़ गए। बात बढ़ गयी। लेकिन सूबेदार सिंह वहॉ उपस्थित थे। बीच-बचाव कर हल निकालने का प्रयास करने लगे। उन लोगों की तू-तड़ाक वाली भाषा के बावजूद वे बुजुर्गीय गंभीरता से समाधान की चेष्टा करते रहे। शामियाना उखाड़ दिया गया। बर्तन इधर-उधर फेंक दिए गए। अंत में पुलिस आयी। सूबेदार सिंह की छवि और सम्पर्क ऐसे मौके पर काम आया। दफ्तर से फोन करवाया। पुलिस अधिकारी ने कार्रवाई करके दबंग को धमकाया। इस कशमकश में तीनों लड़कों को चोटें आयी थीं परंतु उनके हौसले बरकरार थे। बाबूजी देख लीजिए हमसे कोई बोलगा तो नतीजे के जिम्मेवार हम नहीं होगें।

"चुप रहो तुम सब। बस मेर ऊपर छोड़ दो।" वे गुस्साए। उपयोगितावादी वैज्ञानिकता उन्हें नापसंद थी परंतु आत्महत्या को भी अच्छा विकल्प नहीं मानते थे। फौज की नौकरी और कालांतर में लगातार संघर्ष के कारण श्रम से विमुख न होना, दुख में कातर न दिखलाना व काया सुख के लिए स्वाभिमान को बलि न चढ़ाना जैसे गुण विकसित हुए थे।

घर के लड़के अन्दर बन्द होकर नहीं रह सकते थे। परंतु उनमें से कोई भी इतना उग्र और गैर-जिम्मेवार न था कि व्यर्थ में किसी से भिड़ जाता। पर उकसाने पर या आक्रमण होने की स्थिति में क्या करते पता नहीं। वे असहज हो गए। देर रात तीनों लड़के लौटे। वे गंभीर थे। सूबेदार सिंह हड़बड़ाकर तफतीश करने लगे। धर्मपत्नी भी बाहर निकल आयी थीं। वे लोग कुछ नहीं बोले। बस कहा कि परेशान न होइए। सब ठीक है।

तीनों लड़के स्थानीय पार्षद के पास अपनी परेशानी लेकर गए। लेकिन वह पहले ही दबंगों से मिला हुआ था। चुनाव जीतने के लिए उसे प्रभावशाली तत्वों से सहयोग लेना पड़ता है। उनका विरोध करके राजनैतिक कैरियर पर ग्रहण क्यों लगाएगा। उन सब पर दया भरी दृष्टि डालकर कहने लगा,"हाथी की पीठ पर अगर मक्खी बैठ जाए तो वह महावत नहीं बन जाती।" लोक जगत से उठाए इस ज्ञान को वह उनमें भरना चाहता था। "अपना बोरिया-बिस्तर कहीं और लगा लो। क्यों आफत मोल लेते हो।"

"सर हमने वाजिब तरीके से जगह हासिल की है....।" दीपू ने आखिरकार कहा।

"क्या मतलब....!" वह खुन्दक खा गया। "मुझसे बहस करते हो। जाओ जाकर मरो। फायदे की बात समझ में नहीं आ रही है।" शतायु होने का आर्शीवाद इंसान को चाहे प्रेरित न करे परंतु तिरस्कार उसकी सुसुप्त जिजीविषा को प्रबल कर देता है। वे लौट गए।

"तुम लोगों को आज के अखबार में रामायण के चरित्र नहीं मिलेगें।" सूबेदार सिंह बोले। "हॉ देखना चाहोगे तो महाभारत में आज का अखबार पढ़ने को मिल जाएगा। अखबार में भी महाभारत मिलेगा। अरे दुनिया जैसी है वैसी ही अपनानी पड़ेगी।" देबू उन्हें हठात् देखता रहा। "चाचाजी हम भी चाहते हैं कि आराम से खाना-कपड़ा मिले और सुख-चैन नसीब हो। हमारी उम्र के लड़के कार में घूमते हैं। पब जाते हैं।" उसकी वाणी में सुखमय और उत्तेजक जीवन जीने की इच्छा झलक रही थी।

"बेटा जो चीजें मुफ्त में मिलती हैं उनकी कद्र नहीं होती। अपने हाथों से कमाई चीज की बात अलग है।" वे उपदेशपरक हो गए।

मुहल्ले वालों ने यह कहना प्रारम्भ कर दिया है कि एक दिन सूबेदार सिंह के परिवार की उन लोगों से जबरदस्त लड़ाई होगी। अपनी फौजी पृष्ठभूमि के बावजूद सूबेदार सिंह का मन प्रकम्पित हो उठा। अड़ोस-पड़ोस से अपनापन जरुर था लेकिन स्थानीय गुण्ड़ों में कोई पैठ नहीं

थी।"कोर्ट में हमारे पक्ष में फैसला आया है।" दीपू की हर्ष भरी ध्वनि सुनकर भी उसकी माँ मुदित नहीं हुई। भयभीत व आशंकित खड़ी रही। "वे लोग फिर बवाल करेगें। कोर्ट-वोर्ट को नहीं मानेगे।"

"माँ तुम भी ना...।" लड़के झुँझला पड़े।

फिर वह समय आया जब रेस्टोरेण्ट और कैटरिंग का काम शुरु हो गया। संपूर्ण परिवार जुटा हुआ था। ज्यादातर काम घर के लोग कर रहे थे पर दो नौकरों को भी काम पर रख गया था। दोपहर बाद तेज अंधड़ के साथ बेमौसम की बरसात हुई। रेस्टोरेण्ट के अन्दर का सामान बचा रहा। लेकिन बाहर का टेंट उखड़ गया। सूबेदार सिंह आधे दिन की छुट्टी पर थे। दोपहर के भोजन के समय दफ्तर चले गए। वहाँ से मौसम का हाल देखा तो सोचने लगे कि सर मुड़ाते ही ओले पड़ने वाली कहावत चरितार्थ हुई। खैर जो बात अपने नियंत्रण में न हो उसका क्या कर सकते हैं। वहाँ सहकर्मियों और एस.डी.ओ. साहब को मिठाई बाँटी।

शाम को थोड़े भारी मन से लौटे तो देखा कि टेंट-वेंट सब कुछ अपनी जगह सही सलामत खड़ा था। सामान भी करीने से लगा हुआ था। कुछ ग्राहक मौजूद थे। स्थिति पूर्णतया नियंत्रण में थी। "अरे यह तो कमाल हो गया।" वे सुखद आश्चर्य से बोले।

"चाचाजी हमलोग जमीन के जहाज हैं।" देबू उत्साह से भरा था। "सब काम आँधी-तूफान की तरह करेगें। बस आप देखते रहिए। किसी भी परेशानी हो को उड़ाकर दूर भगा देंगे।"

वे प्रसन्नचित्त एवं हल्का अनुभव कर रहे थे। "देखो भाई मैं भी इस जहाज का डैना हूँ। दूसरा डैना तुम्हारी माँ हैं। तुम लोग इसके इंजन हो।"

सभी हँस रहे थे। अभी मुसीबत पूरी से तरह दूर नहीं हुई थी पर उनके व्यवहार से लग रहा था कि वे लोग कोई विकट आधिभौतिक चक्रव्यूह का द्वार लांघ कर आए हैं।

---

**लघुकथा**

**बीना शुक्ला अवस्थी,**

कानपुर

## "रंग में भंग"

आज साहब के कुत्ते गोल्डी का जन्मदिन है। शाम से पार्टी चल रही है। केक काटा गया, ताली बजाकर हैपी बर्थडे गाया गया, कुत्ते को जन्मदिन के उपहार दिये गये। हालांकि कुत्ते को कुत्ता कहने से साहब क्रोध से पागल हो जाते हैं। अब तो सारे मेहमान जा चुके हैं। बस साहब और उनके कुछ दोस्त ..... कुछ अधिक खास दोस्त ही रह गये हैं। लेकिन अभी बुधई को घर जाने की इजाजत नहीं है। भूख और चिंता के कारण उसकी आँखों के आगे अंधेरा छा रहा है। सुबह से भाग भाग कर काम करते करते उसके शरीर का पोर पोर दर्द करने लगा है। बैठक से रसोई तक फैली खाने की खुशबू से सारा दिन उसके पेट में मरोड़ उठती रही है। लेकिन.....।

कल से घर में अन्न का दाना नहीं है। चार दिन से रघुआ ने आँखें नहीं खोली है। रघुआ की बीमारी के कारण रघुआ की माई भी काम पर नहीं जा पा रही है। न जाने कैसा होगा रघुआ? रघुआ की माई रो रोकर "हलाकान " हुई जा रही होगी।

वह तो सुबह बुधई को आने ही नहीं दे रही थी- " आज ना जाओ। हमार जिउ घबड़ात हवै। लड़िकवा केर हालत देखो।"

परन्तु वह बड़ी मुश्किल से यह कहकर चला आया था-"तू घबड़इबू नाही। हम साहब से कुछ पइसा लइके अबही आवत हई। आज एका दुसरे डाकदर का देखइबे चलिके।'

सूझती है। शाम को पार्टी है और तुम्हें छुट्टी चाहिए। चलो चुपचाप सफाई करो और घर की सजावट करो।"

साहब.....।" साहब का रौद्र रूप देख कर उसकी आवाज गले में ही फँस रह गई।

" बकवास बंद करो, एक दिन में मर नहीं जायेगा तुम्हारा लड़का। रंग में भंग करके मेरा दिमाग खराब न करो। " साहब दहाड़े।

बेचारा बुधई.....। भूखा प्यासा कुत्ते के जन्मदिन की पार्टी का आयोजन करने लगा। वाह री तकदीर। इसी महीने एक गुलदस्ता टूट जाने के कारण साहब ने उसकी पगार से दो सौ रुपये काट लिए थे।

साहब के दोस्तों के जाने की प्रतीक्षा में बैठा वह ऊंघ रहा है। शराब की तीखी गंध और कहकहों से उसके दिमाग की नसें फटी जा रही हैं।

तभी एक चीखती आवाज कानों में पड़ी और वह स्प्रिंग लगे गुड्डे की उठकर खड़ा हो गया-" हमका बेआबरू न करो साहब, हमका जान देओ। घर मा हमरे लड़िकवा केर लहास पड़ी हवै। हमरे मनई बुधई का पठै देओ।"

" लाश तो लाश है जानी, क्या फर्क पड़ता है। क्यों रंग में भंग डाल रही हो। हमें खुश करके चली जाना। ये लो दो हजार रुपये।" साहब का नशे में डूबा भद्दा स्वर। दरवाजा भड़भड़ाने के लिये उठे उसके हाथ उस समय नीचे आ गये जब उसने साहब के तीनों दोस्तों को भी दो- दो हजार के नोट देते सुना।

उसका मस्तिष्क सुन्न पड़ता जा रहा था। एक तरफ सुरसतिया की चीखे उसके अन्तर में तेज धार वाली छुरी की तरह पैठती जा रहीं थीं तो दूसरी ओर उसकी आँखों के सामने दो-दो हजार के चार नोट लहरा रहे थे।

अमित कुमार मल्ल
प्रयागराज ( उ. प्र. )

कहानी

# "पतिव्रता"

रमिया एक अच्छी व कुशल गृहणी थी । वह पूरे मनोयोग से अपने परिवार का देख भाल कर रही थी। उसका मरद - रामजीत ,खेतो में खूब मेहनत करता था , जिससे उसकी फसल , पूरे गांव में सबसे अच्छी होती थी । खेती के अलावा , रामजीत ने गाय व मुर्गी भी पाल रखी थी , जिनके दूध अंडे भी बेचता था । रमिया भी रामजीत के साथ , कंधे से कंधा मिलाकर पूरा काम करती । दुवार पर मौजूद गायों को खिलाने , पिलाने , नहलाने , देख रेख करने की जिम्मेवारी रमिया की थी। मुर्गियों के पालने में भी वह , बहुत मदद करती थी।रामजीत व रमिया अपने मे खुश थे , मस्त थे। बच्चे भी थे , कमाई भी थी, दोनों महीने में एक बार जरूर पास के कस्बे में जाकर सिनेमा भी देखते, खाते भी और घूमते भी।

गांव के लोग रमिया को चटक समझते और रामजीत को उत्साही।रामजीत कभी कभार, 10 - 15 दिन में एक बार शराब पी लेता था , और कभी कभी भांग भी खा लेता। इन दोनों स्थितियों में रामजीत बहुत रोमांटिक हो जाता, जिसे रमिया बहुत पसंद करती । इसीलिये रमिया कभी भी भांग खाने या शराब पीने से, रामजीत को नही रोकती। सब कुछ ठीक चल रहा था।

लेकिन रामजीत के दूर के मौसेरे भाई सुमेर के यहाँ अच्छा नही चल रहा था । उसके पट्टीदारों का मानना था कि सुमेर के पिता ने उनके परिवार के दो लोगो की हत्या कराई है। वे लोग धमकी दे रहे थे कि वे लोग सुमेर के परिवार को मार कर बदला लेंगे । इस धमकी को सुमेर के पिताजी ने गंभीरता से नही लिया और सुमेर के पिता मारे गए।पिताजी के मरने के बाद , सुमेर अकेला हो गया । पूछार करने जब रामजीत , सुमेर के घर गया तो पाया कि सुमेर डरा हुआ है । रामजीत ने सुमेर को सांत्वना देते हुए बोला,

- ऐसी स्थिति में यहाँ रहना ठीक नही है।

-जमीन घर तो यही है । कहाँ जाऊं ?

सुमेर ने उत्तर दिया ।

-तुम यहाँ की जमीन , घर बेच दो । मेरे गाँव चलो । वहाँ जमीन , घर खरीदवा देंगे।

रामजीत बोला।

-ठीक है । मुझे भी यही सही लग रहा है।

सुमेर, सोचते हुए बोला।

दो महीने में सुमेर , अपना खेत व घर बेचकर , रामजीत के गांव में खेत खरीदने व बसने के लिये आ गया।

रामजीत व रमिया - दोनों लग गए कि सुमेर को जमीन खरीदवा दिया जाय तथा उसका एक घर बन जाय।सुमेर ने सारा पैसा रमिया के पास रखवा दिया था , ताकि जैसे जैसे पैसे की जरूरत होगी वह पैसे ले लेगा । रंजीत ने , अपने घर के पास ही सुमेर को जमीन खरीदवा दी , जिस पर सुमेर का घर बन गया और कुछ बीघे जमीन भी खरीद गयी।

इन सबमे 5 -6 माह लग गए। इतने दिन तक सुमेर, रामजीत के घर ही रहता, उनके साथ ही खाता और उसके दरवाजे पर ही सोता।

रामजीत से सुमेर दो साल छोटा था। इस नाते सुमेर की , रमिया भाभी थी और उसी नाते इन दोनों में हँसी मजाक भी होने लगा। सुमेर नई जगह से आया था , कॉलेज से पढ़ा था। उसका फ़ैशन अलग था , उसकी बाते अलग थी , और नई थी।जिसको सुनने में रमिया को मजा आने लगा ,और धीरे धीरे उसका साथ अच्छा लगने लगा।

जमीन खरीदने के बाद ,सुमेर ने रामजीत से कहा ,

- मैं तो अकेला हूँ । ... मेरी खेती तुम कराओ,अधिया पर , प्रॉफिट में आधा आधा हो जाएगा।

- तुम अपनी खेती खुद करो।

रामजीत बोला।

- भइया , हम तो अकेले है। मेरा खर्चा ही कितना है ? ,... तुम्हारा परिवार है। तुम्हारा खर्चा अधिक है।तुम्हे खेती करने का अनुभव है। तुम पहले से , अपनी , इतनी अच्छी खेती कर ही रहे हो । मुझे कोई यहाँ की कोई जानकारी नही है। हर चीज़ ढूंढनी पड़ेगी। फिर मैंने कभी खेती की नही है।वहाँ भी , बाबूजी ही खेती करते थे।

सुमेर बोला।

जब तक रामजीत कुछ बोले , रमिया बोली ,

- सुमेर बाबू सही कह रहे है। इसी बहाने , हम लोगो की कुछ आमदनी बढ़ जाएगी।

इस प्रकार रामजीत सुमेर की भी खेती करने लगा । लेकिन इससे रामजीत पर काम का दबाव और बढ़ गया। रमिया पर भी काम बढ़ा । अब उसे अपने परिवार के सदस्यों के साथ साथ , सुमेर के भी खाने का ध्यान रखना पड़ता। रामजीत पहले जब भांग खा कर लौटता ,तब वह वह और रानियां होते। दोनो रोमांस करते थे ।अब सुमेर भी रहता, तब रोमांस तो हो नही पाता । मन मसोस कर , उल्ह मेलह कर रामजीत सो जाता और सुमेर तथा रानियां देर रात तक , बाते करते जाते।

ऐसा कई बार हुआ और रामजीत की थकावट बढ़ने लगी ।नई परिस्थिति का दबाव था कि अब वह एक हफ्ते में दो तीन बार भांग खाने लगा। रमिया पहले भी, भांग खाने से , मना नही करती थी और अब भी मना नही करती । थकावट मिटाने के लिये शुरू हुआ भांग की लत, धीरे धीरे नशा बन गया। और धीरे धीरे भांग खाना , उसकी दैनिक आदत बन गई। खेतो से आते समय ,वह भांग खा कर , घर

आता । भांग के सरूर में उसे थकावट तो नही लगता लेकिन वह कभी खाना खाता और कभी बिना खाये ही सो जाता। काम बढ़ने और सुमेर से बात करने के कारण ,रमिया भी रामजीत को खिलाने में लापरवाह हो गयी थी ।अब , रमिया पर कोई फर्क नही पड़ता । वह और सुमेर , देर रात तक खाना खाते और देर रात तक बातें करते।

कुछ महीनों के बाद , भांग के नशे का असर कम होने लगा । इसलिये रामजीत ,भांग की जगह मोदक खाने लगा। मोदक में नशीली दवाइयों के साथ भांग मिलाया जाता था। रोज रोज मोदक खाने तथा पूरा खाना न खाने से , रामजीत कमज़ोर होता गया। मोदक ने उसके दिमाग को कुंद कर दिया। इस परिवर्तन से रमिया और सुमेर तटस्थ रहे।लेकिन कुंद रामजीत का अब खेती में मन नही लगता और रामजीत ने धीरे धीरे खेती करना भी छोड़ दिया।

रमिया ने सुमेर व एकाध सहायकों के साथ , खेती , गाय , मुर्गी का- सभी काम संभाल लिया। रमिया चटक बनी रही , सुमेर उत्साही बन गया और रामजीत डिप्रेस्ड रहने लगा। गाँव वालों के साथ रामजीत थोड़ा बहुत सामान्य व्यवहार करता लेकिन जैसे ही सुमेर को देखता या सुमेर व रमिया को एक साथ देखता , बिल्कुल खामोश हो जाता। ऐसा क्यों होता , यह रमिया नही समझ पाती या यों कहें ,वह भी गांव वालों की तरह , इस पर ध्यान ही नही देती।

रमिया ने , रामजीत को पास पड़ोस के वैद्य और डॉक्टरों को दिखाया। वे रामजीत का रोग नही पकड़ पाए , वे लोग डिप्रेसन की दवा देते रहे। रामजीत कभी दवा खाता , कभी नही खाता । कभी खाना खाता और कभी नही खाता ।रमिया भी , दोनो परिवारों की खेती , गाय , मुर्गियां , सुमेर को सम्हालने में , रामजीत का उतना ध्यान नही दे पाती और एक दिन रामजीत अपने बिस्तर पर मृत पाए गए। बहुत हिम्मत से रनिया ने रामजीत का अंतिम संस्कार किया ।

गांव में चर्चा होती रही कि इतने हंसमुख , स्वस्थ व उत्साही रामजीत को किसकी नजर लग गयी ।आदर्श जोड़ी थी , पूर्ण परिवार था।

रामजीत के मरने के बाद , बहुत हौसले से रमिया ने अपनी खेती , गाय व मुर्गी को , बिना गाँव वालों की मदद के संभाल लिया। सुमेर जरूर उसके साथ , सुबह से लेकर रात तक लगा रहता था , लेकिन वह तो घर का ही था । गांव वाले कहने लगे,

- अपने पति के मरने पर , रमिया तो ढंग से रोइ भी नही।
- रमिया पर तो कोई असर पड़ा ही नही।
- रमिया ,वैसे ही चटक बनी है।
- सुमेर पर भी , ....कोई असर नही पड़ा।
-सुमेर ... तो दिन रात रमिया के साथ लगा रहता है।
- सुमेर के कारण ही रामजीत का मन उचट गया
- सुमेर ने ही रामजीत को मोदक का आदत डलवाया ।

यह सब बातें रमिया भी सुनती , लेकिन इसे अनसुना करके , वह अपने मे मगन रहती ।चटक बनी रहती । सुमेर के साथ हंसी मजाक करती रहती और अपने काम मे लगी रहती।

जब गांव में , इस प्रकार की चर्चायें बढ़ गयी , तब एक दिन रमिया भभक पड़ीं ,

-जो चला गया , उससे मुझे कितना प्यार था , यह गांव ने देखा है। उसके प्रति प्यार को बताना , जरूरी नही है । जो चला गया , वह बहुत अच्छा था , लेकिन बच्चे को , खेती को , गाय को , मुर्गियों को पालना जरूरी है । जिंदगी तभी आगे बढ़ेगी । इसमे हँसना भी पड़ता है , काम भी करते रहना पड़ता है और चटक भी रहना पड़ता है।

अपने जिंदापन और उत्साह को बढ़ाने के लिये अब , सुमेर 10 -15 दिन में एक बार भांग खाने लगा।जिस दिन भांग खाता , उसके अगले दिन सुमेर बहुत खुश रहता । रमिया भी बहुत खुश रहती। 2 -3 माह बाद सुमेर दैनिक रूप से भाँग खाने लगा। नियमित भांग खाने से उसका असर कम होने लगा । तब , वह भी , रामजीत की भांति रोज मोदक खाने लगा । जब मोदक का असर कम होने लगा तब मोदक के बाद , वह नशीली दवाई खाने लगा ।गांव वालों को बहुत आश्चर्य होता था कि किस कारण से सुमेर इतना नशा करने लगा । रामजीत वाले मामले में तो गांव वालों को संदेह था कि सुमेर ,मोदक का लत लगा रहा था , लेकिन सुमेर को कौन इसकी लत लगा रहा था ? रमिया ने सुमेर को भी वैद्य को दिखाया , उन्होंने दवा भी दी । कभी वह खाना खाता और अक्सर नही खाता । धीरे धीरे वह 24 घंटे नशीली दवाई खाये रहता और एक रात , अपने दरवाजे के कुएं में ,डूब कर मरा मिला ।

रमिया ने बड़ी बहादुरी से इसका भी क्रिया कर्म किये और अपनी तथा सुमेर की खेती , मुर्गी ,जानवर आदि का काम मजदूर रखकर सम्हाल लिया ।गांव वाले, आज तक नही जान पाए कि दोनों , रामजीत व सुमेर को नशे की लत कैसे लगी ? और यह लत , इतनी बढ़ कैसे गयी कि दोनों मर गए ? रमिया के बहुत नजदीकी ,कुछेक गांव वालों के बीच यह चर्चा , जरूर सुनी गई ,

- जो जैसा करता है , उसके साथ वैसा ही होता है।

बाकी गांव वाले , इस बात का मतलब नही समझ पाए ।

हीरा सिंह
कौशल गांव व डा महादेव सुंदरनगर
मंडी हिमाचल प्रदेश

कहानी

# "अंतर्मन की पीड़ा"

आज जिंदगी उस पड़ाव पर पहुंच चुकी है जहां उस का चलना या ना चलना कोई मायने नहीं रखता है क्योंकि जीवन का स्वर्णिम भाग समय की रफ्तार से बहुत आगे निकल चुका था और वह वापिस भी नहीं लाया जा सकता था। आज मालती उस को याद करके तिल - तिल करके अपने जला रही है और दुःखी हो रही है क्योंकि नियति ने कुछ नहीं किया जो भी हो रहा है उसकी जिन्दगी में स्वयं उसी का किया धरा है।आज दर दर की ठोकरें खाने को मजबूर है क्योंकि जिस के सहारे सारा कुछ छोड़ कर आयी थी। वह कब का धोखा देकर भाग गया था। मालती का सगा बेटा उसके कटोरे में पांच रुपए का सिक्का डालकर नफरत भरी नजरों से घूरता हुआ अजनबी की तरह चला गया। इससे मालती के दिल पर बड़ा धक्का लगा। जिससे मालती को गुजरे हुए एक लम्हें याद आने लगे। उन लम्हें याद करते हुए अपराध के बोझ तले दबी जा रही थी।

मालती का हंसता खेलता परिवार था। मेहनती पति माधव हर जरूरत का ख्याल रखता और सास ससुर भी भले मानस कभी कोई मन मुटाव नहीं हर समय प्यार ही प्यार अर्थात् जिंदगी खुशनुमा चल रही थी। लड़की खूशबू नौवीं में और लड़का राज छठी कक्षा में पढ़ रहा था। एक दिन माधव अपने साथियों के साथ काम करने चला गया एक दो दिन बाद उसके साथी लौट आये परंतु माधव वापिस नहीं पंहुचा साथियों से पूछा उन्होंने झूठ ही कि माधव हमारे से पहले आ गया है। माधव के परिवार वाले रात भर इंतजार करते रहे पंरतु वह नहीं पंहुचा। दिन के लगभग दोपहर में ने किसी ने बताया अखबार में छपी है कि जंगल की सड़क में एक नौजवान की लाश मिली है जिसका चेहरा बुरी तरह कुचला हुआ है शायद माधव न हो। माधव का परिवार जंगल की सड़क में चला गया तो उन्होंने देखा तो माधव ही था।

जब माधव के परिवार ने दोस्तों पर शक जाहिर तो पहले तो मुकर गए। पुलिस ने गिरफ्तार करके सख्ती से पूछा तो उन्होनें स्वीकार कर लिया कि माधव को उन्हीं ने मामूली कहा सुनी में ही माधव की मृत्यु हो गई और गुनाह को छुपाने के लिए माधव के चेहरे को जीप से कुचल डाला। माधव के हत्यारों को जेल तो हो गयी परंतु परिवार पर दुःखों का पहाड़ टुट पड़ा था। उधर मालती का सास - ससुर भी जैसे तैसे संभले क्योंकि की वह उनकी आंखों का इकलौता चिराग था अब इनकों मालती और पोते-पोती का ही एक मात्र सहारा था। मालती का ससुर ही अब घर का खर्च चलाता था। जिदंगी फिर पटरी पर चल पड़ी। मालती का ससुर ने मालती के लिए विधवा पैंशन व पार्ट टाइम की नौकरी का भी जुगाड़ करने में तत्पर था। अचानक मालती के ससुर को बिमारी ने घेर लिया जिससे से वह बिस्तर पर हो गया। मालती के मामा के लड़के ने शहर में मालती के लिए नौकरी का इंतजाम कर दिया ताकि घर का गुजर बसर चल पड़े। कुछ दिन तक मालती समय से आती जाती जिससे घर की पटरी सही चल पड़ी थी। मालती के ससुर की हालत में सुधार होने लगा था। उधर दुकान में नवयुवक राम जो की बिहार का रहने वाला था मालती की उससे आंखें लड़ जाती है अर्थात उससे प्यार हो जाता है। अब मालती घर में देरी से पंहुचने लग जाती है और ज्यादातर समय राम के साथ बिताने लग जाती है। मालती के सास - ससुर को भनक लग जाती है। वह मालती को समझाने का प्रयास करते हैं परंतु मालती को जवानी का जुनून ऐसा चढ़ता है कि वह कोई भी बात सुनने को तैयार नहीं थी और हर समय घर में झगड़ा करती रहती थी। एक दिन दोनों बच्चों को छोड़ कर राम के साथ बिहार चली जाती है। और दोनों बच्चे दादा - दादी के सहारे रह जाते हैं। मालती का लड़का अपने दादा से कहता है "कि मां ऐसी होती है"।

दादा अपने पोते से कहता है कि अब तेरी दादी ही तेरी मां भी हैं मैं दादा व बाप दोनों का फर्ज निभाऊंगा। इसी प्रकार दादा - दादी ने पोता-पोति को अच्छी शिक्षा दी और दोनों पोता-पोति मेहनती थे पढ़ने के बाद नौकरी भी लग गए। पोती की शादी एक अच्छे घराने में हो रही थी। बेटा जो दिल्ली में नौकरी अपनी बहन की शादी के लिए घर छुट्टी आ रहा था भीख मांगती अपनी मां पर नजर पड़ी तो उसका मन घृणा से भर गया इसी घृणा के चलते कब उसनें अपनी मां के कटोरे में सिक्का डाला पता ही नहीं चला। और उधर जब तक जवानी रही मालती में राम का प्यार खूब परवान चढा। जब मालती का आकर्षण कम हो गया था राम का भी मन पूरी तरह भर चुका था। राम ने मालती को अपनी जिंदगी से ऐसे निकाल जैसे दूध से मक्खी। राम उसे घुमाने के ले गया और उसे दिल्ली कोठे पर ले जाकर बेच डाला।

अब मालती को अपने किये पर पछतावा तो हो रहा था पंरतु अब मजबूरी वो सब कुछ करना पड़ा जो कभी जिंदगी में करने का नहीं सोचा था। मालती का जब जिस्म ढला तो बस स्टैंड में या कभी किसी गली में भीख मांग कर जीवन बसर करने लग थी पंरतु जब अपने बेटे को देखा तो उसमें उसे माधव की छवि नजर आयी फिर उसका नफरत से घूरना अंदर दिल तक भेद गया। मालती में मन अब ऐसी पीड़ा उस उठ रही थी कि मैंने ऐसे जिंदगी में ऐसे कर्म कर डालें हैं उसकी माफी तो क्या मरने के बाद नर्क में भी ठौर मिलने वाला नहीं है।

**अर्चना त्यागी**
व्याख्याता रसायन विज्ञान एवम् कैरियर परामर्शदाता
प्रकाशित कृति - अनवरत लघु कथा संकलन
जोधपुर ( राज.) पिन 342011

**कहानी**

# "साक्षात्कार"

मेरे सामने कुर्सी पर बैठे आदमी को काफी देर तक देखने के बाद मैंने मन में ठान लिया कि आज मुझे मिस्टर वशिष्ठ से बात करनी ही होगी। तीन दिन से यह व्यक्ति ऑफिस अा रहा है और मै उसे वापस भेज रहा हूं। मेरी अंतरात्मा मुझसे प्रश्न किया" तुम बात कर पाओगे मिस्टर वशिष्ट से ? उन्होंने तुम पर अहसान करके तुम्हे अपनी कंपनी में नौकरी दी है। उनसे कैसे पूछोगे कि आपने किसी दूसरे की जगह मुझे क्यूं रखा ? उनसे वादा भी किया था नियुक्ति के समय कि तुम्हारे पास आने वाली समस्याओं के लिए तुम उन्हें परेशान नहीं करोगे। अपने सभी फैसले खुद करोगे।

मैंने झुंझलाकर खुद को ही जवाब दिया" हां मैंने उनसे वादा किया था। लेकिन वो कंपनी के मालिक हैं। किसको रखना है यह उनके अलावा और कोई कैसे बता सकता है ? मैं तो एक कर्मचारी ठहरा। उनकी दया है कि उन्होंने बिना कोई पूछताछ किए, मेरी बातों पर विश्वास करके मुझे नौकरी पर रखा है। अचानक पार्क में नहीं मिले होते तो आज मैं इस कंपनी का मैनेजर नहीं होता। मैं ऐसे किसी कि बात पर विश्वास करके अपनी नौकरी नहीं खोना चाहता।पहले भी गिनकर दस नौकरी छोड़ चुका हूं। स्वतंत्र फैसले लेने के कारण और लोगों की मदद करने के कारण।" मैंने सिर को झटका। व्यस्त होने का बहाना किया।

"आप कल आइए श्रीमान, तब तक मैं मिस्टर वशिष्ठ से बात कर लूंगा आपके विषय में।" मैंने उसे समझाते हुए कहा और फिर अपने काम में व्यस्त हो गया। उसने थोड़ा रोष से जवाब दिया" आप तीन दिन से यही बात दोहरा रहे हैं। मैं क्या नहीं जानता कि आप चाहें तो अभी उनसे बात कर सकते हैं। किन्तु आप नहीं चाहते कि मेरा कोई फायदा हो। आप मेरी जगह ही विराजमान हैं। मै ही इस कुर्सी पर बैठा करता था। मुझे पारिवारिक समस्या के चलते अचानक जाना पड़ा और आपका उदय हो गया। मैं उसकी बातों से तिलमिला उठा फिर भी बस इतना ही कहा " आप धैर्य रखें श्रीमान, मै पूरी कोशिश करूंगा कि आपको आपकी कुर्सी वापस मिल जाए। अभी आप जाइए। दो दिन बाद मिस्टर वशिष्ठ आएंगे। मैं तुरंत आपको बुलवा लूंगा।"

"बल्कि आप ना अा पाएं तो फोन करके आपको बता दूंगा। "मैंने अपना स्पष्टीकरण दिया। " नहीं साहेब आप बस फोन करना में उसी समय हाजिर हो जाऊंगा।" उसका रोष अब विनम्रता में बदल गया था। मेरी और देखा और उठकर चला गया। मैंने एक राहत की सांस ली। लेकिन कल के बारे में सोचकर परेशान हो उठा। मिस्टर वशिष्ठ से बात करना मतलब एक और साक्षात्कार। लेकिन बात तो करनी ही पड़ेगी। शाम को ऑफिस से घर पंहुचा तो उनको फोन करना नहीं भूला।

स्वाभाविक भी था। इतनी बड़ी कंपनी के मालिक से सीधे मिलना, बड़ा काम था। एक शब्द की भी गलती पर मेरी नौकरी भी जा सकती थी। शाम को तैयार होकर उनके घर पहुंचा। उनके बंगले में बने उनके व्यक्तिगत ऑफिस में उनका इंतजार कर रहा था। तभी उन्होने अंदर प्रवेश किया। मैं सम्मान में उठ खड़ा हुआ। हाथ जोड़कर अभिवादन किया। चरण स्पर्श करने ही वाला था कि उन्होंने बैठने का इशारा कर दिया। मैं उनके सामने वाली कुर्सी पर बैठ गया। मिस्टर वशिष्ठ मुस्कुराए। " बोलो क्यूं परेशान हो संदीप ? ऐसा क्या हुआ मेरे पीछे कि फोन करना पड़ा तुम्हे ?"

मैंने हिममत करके उनकी बात का उत्तर दिया। " सर मेरे स्तर पर सुलझने वाली समस्या नहीं थी। कंपनी में कर्मचारियों की नियुक्ति से संबंधित समस्या मेरे वर्तमान कार्यक्षेत्र से बाहर है। मैं उससे संबंधित कोई निर्णय नहीं ले सकता हूं। एक व्यक्ति प्रतिदिन ऑफिस आकर मुझे बताता कि उसको बिना बताए, उसकी जगह आपने मुझे नियुक्त कर दिया है। आप विदेश में थे। अपनी सामर्थ्य अनुसार मैंने उसे समझाने की पूरी कोशिश की। परन्तु वह मानने को तैयार ही नहीं था। इसीलिए मुझे आपको फोन करना पड़ा।" मैं एक सांस में ही सब बोल गया।

" वो सही कह रहा है। उसने मुझे मेल भी किया था। लेकिन नौकरी वह स्वयं छोड़कर गया था। कंपनी को बिना नोटिस दिए।" उन्होंने कुछ सोचते हुए जवाब दिया। "अच्छा एक बात बताओ, उसके साथ हमे क्या करना चाहिए ?" उन्होंने फिर एक प्रश्न पूछा। मैं अब थोड़ा सहज महसूस कर रहा था। मैंने एक पल सोचे बिना उनके प्रश्न का उत्तर दे दिया।"सर हम उसके आचनक नौकरी छोड़ने का कारण पता लगाना चाहिए। और लौटकर वापिस आने का भी। यदि उचित कारण था तो उसे नौकरी पर बहाल कर देना चाहिए।"

"परन्तु तुम कहां जाओगे ?" उन्होंने अगला प्रश्न किया। इसी प्रश्न का मुझे डर था। फिर भी उत्तर तो देना ही था। " मैं कोई और नौकरी तलाश करूंगा सर। वैसे भी मेरी यह नौकरी आपका अहसान है मुझ पर। उस दिन पार्क में मेरी बातें सुनकर आपने मेरी सहायता की है।" कहकर मैं चुप हो गया।" ठीक है अभी तुम घर जाओ कल बात करते हैं ऑफिस में ।" उन्होंने कुछ सोचते हुए मुझे जवाब दिया। मैं उन्हें प्रणाम करके उठ गया। घर आकर भी मैंने कुछ नहीं किया। कई दिनों से ठीक से नहीं सो पाया था इसलिए बिस्तर पर लेटा और सो गया।

मैं अगले दिन ऑफिस गया। परेशान नहीं था। बस नियति से थोड़ी शिकायत थी। यह ग्यारहवीं नौकरी थी जो मेरे हाथ

से जाने वाली थी। मेरी किसी गलती के कारण नहीं। वसुधैव कुटुंबम् की मेरी विचारधारा के कारण। और मैं चाहकर भी कुछ नही कर सकता था अपनी नौकरी को बचाने के लिए। दो दिन की छुट्टी का प्रार्थना पत्र मैंने लिख लिया था। नौकरी छूटने से पहले पता लगा लेना चाहता था कि वह व्यक्ति किस मजबूरी में नौकरी छोड़कर गया था और अब वापस लौट कर आने को मजबूर था।

ऑफिस पहुंचा तो आधे घण्टे के अंदर ही मिस्टर वशिष्ठ ने बुला भेजा। चुपचाप उनके कमरे की ओर बढ़ा। ऑफिस में सबकी नजरें मेरी ओर ही थी। प्रश्नवाचक निगाहों से मैं समझ पा रहा था कि सब जानना चाह रहे थे कि मैंने क्या कर दिया है ? जो चेयरमैन साहेब ने बुला भेजा है।

कमरे में दाखिल होने पर उन्होंने अपने सामने रखी कुर्सी पर बैठने का इशारा किया। " धन्यवाद सर" कहकर मै बैठ गया। उन्होंने बिना कुछ कहे एक लिफाफा मेरी और बढ़ाया। मैं समझ गया टर्मीनेशन लेटर ही होगा। मैंने उनके हाथ से लिफाफा ले लिया और वापिस जाने के लिए मुड़ा।

मिस्टर वशिष्ठ अपनी कुर्सी से खड़े हो गए। बोले। "पढ़ोगे नहीं क्या लिखा है लेटर में?"

मना कैसे करता। " जी सर कहकर मैंने लिफाफा खोला। पढ़कर मैं असमंजस कि स्थिति में था। ऐसा लगा मानो जमीन के नीचे से उठाकर किसी ने सीधे आकाश में उछाल दिया हो। उस लेटर में को लिखा था मैं विश्वास नही कर पा रहा था। मैंने उन्हें बताना चाहा " सर, सी ई ओ साहेब का नियुक्ति पत्र है। मुझे लगता है गलती से मेरा नाम लिखा गया है।" मिस्टर वशिष्ठ ने ठहाका लगाया। गलती से नहीं श्रीमान, सोच समझ कर लिखा है। कल मेरे घर पर हुए तुम्हारे साक्षात्कार के आधार पर। आपकी कर्तव्य निष्ठा, निर्णय लेने की क्षमता और सबसे बढ़कर मानवीय संवेदना से प्रभावित होकर यह कंपनी आपको यह सम्मानित पद सुशोभित करने के लिए आमंत्रित करती है।" मैंने कुछ बोलना चाहा पर इशारे से उन्होंने रोक दिया।

"मैं जानता हूं तुम क्या कहना चाहते हो" उन्होंने मुस्कुराकर कहा। तुम्हारी सभी पुरानी कंपनियों में मैंने पता कर लिया है। उनमें से किसी भी कंपनी ने तुम्हारी योग्यतानुसार कार्य नही दिया। इसीलिए उन्होंने एक योग्य कर्मचारी को खो दिया है। मेरी कंपनी ने तुम्हारी योग्यता को पहचान लिया है। तुम्हारी योग्यता के आधार पर ही तुम्हे इस पद के लिए चुना गया है।" मुझे अपने कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था। मैं कभी अपने पैरों के नीचे जमीन को देखता कभी कमरे की छत को। आगे बढ़कर मैंने मिस्टर वशिष्ठ के चरण स्पर्श किए। ये ग्यारहवीं नौकरी जाते जाते ऐसे बच गई थी जैसे मेरी ही किस्मत में लिखी थी।

"मिस्टर नागर को क्या बोलना है सर?" मेरी बात खत्म होने से पहले ही उन्होंने अपना निर्णय सूना दिया। "वो हमारे नये जनरल मैनेजर हैं तुम्हारे स्थान पर। बाहर ही बैठे हैं। मैंने ही उन्हें तुमसे बात करने के लिए कहा था। उन्होंने सब मेरे कहने से किया है। वो पहले कंपनी में काम नहीं करते थे, अभी नियुक्त हुए हैं। हां उनका नियुक्ति पत्र तुम्हे ही देना है।जाइए अपने नए ऑफिस में और अपना काम शुरू कीजिए।" उन्होंने आदेशात्मक स्वर में कहा।" जी सर" कहकर मैं बाहर आ गया। आज मेरा वक़्त बदल गया था। भगवान ने मेरी झोली में अपना खजाना डाल दिया था।

मेरा साक्षात्कार मिस्टर वशिष्ठ ने अपने घर पर लिया था इसलिए शाम को मैं धन्यवाद देने उनके घर पर पंहुचा। " बहुत धन्यवाद सर। लेकिन इतने कुशल कर्मचारियों में से आपने मुझे क्यूं चुना सर।" वो मुस्कुराए, फिर बोले " उस दिन पार्क में तुमसे बात करके मुझे अपने संघर्ष के दिन याद अा गए। सच्चाई पर टिके रहना। दबाव में भी सही निर्णय लेना। और सबसे बढ़कर इंसानियत, जो दूसरे कर्मचारियों को अपने बराबर माना तुमने, ने मुझे प्रभावित किया। मेरा सौभाग्य है कि तुम मुझे मिले। अब संशय छोड़कर, मन लगाकर काम करो।" मैं उनके चरण स्पर्श करके केवल धन्यवाद ही कह सका। किन्तु उनके शब्दों ने मेरा जीवन ही नहीं, जीवन जीने का नजरिया ही बदल दिया। कभी सोच ही नहीं सका कि दस सालों बाद इतनी बड़ी नौकरी पार्क में पड़ी मिल जाएगी।

**डॉ. संध्या शुक्ल 'मृदुल'**
मंडला

### सृष्टि की शान हैं वृक्ष

वृक्षों से अमूल्य औषधियां,
वृक्षों से शुद्ध वातावरण।
वृक्षों से भोजन और फल,
वृक्षों से स्वस्थ पर्यावरण।

वृक्षों से बापू की लाठी,
वृक्षों से होती हरियाली,
वृक्षों से शारदा की वीणा,
वृक्षों से हरसूं खिशयाली।

वृक्षों से पंक्षी का घरोंदा,
वृक्षों से उपवन में बहार।
वृक्षों से दादा की कुर्सी,
वृक्षों से जग का विस्तार।

वृक्षों से घरों की छत है,
वृक्षों से है जलता चूल्हा।
वृक्षों से कान्हा की बंशी।
वृक्षों से बहनों का झूला।

वृक्षों को मत काटो भैया,
वृक्षों में भी होती है जान,
वृक्षों से हैं हम और आप,
वृक्षों से है सृष्टि की शान।

**संगीता कुमारी**

काव्य संग्रह-हृदय के झरोखे, संगीता की कवितायें कहानी संग्रह -फ्लाईऑवर के पार, अंतराल

नरोरा एटॉमिक पावर स्टेशनटाउनशिप, बुलंदशहर

**कहानी**

# "अस्पताल से छुट्टी"

"अरे तुम लोग यहाँ कैसे?" मैंने उन तीनों भाईयों को एक साथ देखकर पूछ लिया।

"एक महीने से ज्यादा हो गये मगर अब तक छुट्टी नहीं मिली। बीच में बिल्कुल ठीक हो गये थे। आईसीयू से बाहर भी आ गये थे. तब हमने डॉक्टर से कहा भी था कि अब छुट्टी दे दो हम घर ले जायेंगे। मगर डॉ ने 'कुछ और टेस्ट करना है' कहकर रोक दिया। वरना हम पिताजी को पंद्रह दिन पहले ही ले जाते।"

"अभी वह कहाँ हैं? ओपीडी में या आईसीयू में?"

"अब आपको क्या बतायें भाभी जी! बारह दिनों से वह दुबारा वेंटिलेटर पर हैं। अब उनकी स्थिति और खराब हो गयी है। समझ नहीं आ रहा है कि जब वह बिल्कुल ठीक हो गये थे तब उन्हेंक्यों रोका और अब यह हालत!"

मैं उन तीनों की बैचेनी देखकर स्तब्ध थी। उनकी परेशानी का अंदाजा लगाकर उनकी पीड़ा की केवल कल्पना ही कर रही थी। मैंने मिलने की इच्छा जाहिर की तो पता चला उनसे किसी को मिलने ही नहीं दे रहे हैं। बाहर से शीशे के माध्यम से केवल एक मिनट के लिये देख भर सकते हैं। एक बार में एक ही विज़िटर को जाने देते हैं। सब कुछ डॉक्टर नर्सों के भरोसे है। वो तीनों भी एक एक करके जाते हैं। मैंने सांत्वना देते हुए कहा. "हिम्मत रखो सब ठीक हो जायेगा। जैसी भी आवश्यकता हो मुझे बताना। अभी चलती हूँ। मैं अपनी सहेली को देखने आयी हूँ जिसको कल बेटी हुई है। फिर मिलती हूँ।"

उस दिन घर वापिस आने के बाद एक अजीबसी बैचेनी बनी रही। अंकल को मैंनें सदैव हँसते खिलखिलाते देखा था। पिछले बारह वर्षों से उन्हें देखा नहीं क्योंकि वो सपरिवार रिटायर होने के बाद अपने सबसे बड़े बेटे के पास गाजियाबाद चले गये थे। तब मैं प्रयागराज थी। आठ वर्ष पहले वापिस दिल्ली आयी हूँ। आंटी के गुजरने पर मैं उनके यहाँ गाजियाबाद गयी थी पर अंकल से इसलिये भेंट नहीं हो पायी क्योंकि वह हरिद्वार गये हुए थे। तीनों भाई और भाभियों से मुलाकात हुई थी। उनके अच्छे संस्कारों का परिणाम था कि इस युग में भी तीनों बेटे सुलझे हुए थे। किसी भी तरह का कोई बुरा ऐब नहीं था।

तेजप्रताप अंकल बलिया के रहने वाले धनी परिवार में जन्मे चार भाईयों में सबसे छोटे पुत्र थे। अपने परिवार से बगावत करके साठ के दशक में वह मुम्बई निकल आये थे। दिखने में खुबसूरत होने के कारण अपने आपको किसी हीरो से कम नहीं समझते थे। मुम्बई में फिल्मी दुनिया की चकाचौंध को करीब से देखने के बाद ना जाने क्या सोचकर उन्होंने एक सरकारी नौकरी करना बेहतर समझा और केंद्रीय सेवा के तहत नौकरी करने लगे।

पंद्रह वर्ष पूर्व प्रयागराज में मेरी उनसे एक कार्यक्रम के तहत पहली मुलाकात हुई थी। एक सोसाइटी में रहने के कारण पारिवारिक सम्बंध भी बन गये। आंटी ने हमेशा बेटी जैसा प्यार दिया।

एक बार उन्होंने भावना वश अपने मन की बात पार्टी में सबके सामने खोल दी थी। उन्होंने जब बताना शुरू किया तो हम सब चुपचाप सुनते रहे और वह काफी देर तक बोलते रहे। उन्होंने बताया, "मैं अपने परिवार का सबसे लाडला होने के कारण ही शायद रिबेलियन बन गया था। मुझे खेत खलिहानों में काम ना करना पड़े इसलिये पढ़ाई में जी लगाता था। उन दिनों शिक्षा देने/लेने वालों की समाज में बहुत ज्यादा इज्जत की जाती थी। उन्हें सभी सम्मान दिया करते थे। मगर एक बात जो समझ नहीं पाताथा कि परिवार के सदस्य में कोई सरकारी नौकरी की बात करे तो उसे बुरा माना जाता था। उस जमाने में नौकरी को गुलामी का प्रतीक माना जाता था। कारोबारियों, जमीन जायदाद वालों समाज में अति सम्मान मिलता था। जिसके पास अथाह खेत हों वह दूसरे की नौकरी करे यह सम्मान की बात नहीं होती थी। शिक्षा का महत्त्व अपने कारोबार को और अधिक बढ़ाने के लिये उपयोग करना अच्छा माना जाता था।आज सोचता हूँ तो लगता है वो अप;अने लेवल पर सही सोचते थे कि क्यों कोई करोड़े की जमीन के बाबजूद हजार/ दो हजार की नौकरी करेगा!मगर मैंने सरकारी नौकरी इसलिये कि क्योंकि बिना बताये मुम्बई में उस जमाने लाखों का चूना लगने के बाद अर्थात असफल होने के बाद गाँव में मुझे अस्वीकार कर दिया गया। मैंने अपने हिस्से की पुस्तैनी राशि काल्पनिक दुनिया में बर्बाद कर दिया था। जब तक माँ -पिताजी जीवित रहे मैं गाँव जाता रहा। उनके गुजर जाने के बाद तीनों बड़े भाई भाभियों का तिरस्कार झेल पाना मुश्किल रहा इसलिये सबकुछ छूट गया। सबसे बड़ी दो बहनों को होश सम्भालते मैंने विवाहित ससुराल से तीज त्यौहारों पर ही देखा। वो भी मेरी ही तरह थीं। मैं भी उनकी तरह जड़ से जो उखड़ा तो उखड़ ही गया। आज जब मुझसे कोई पूछता है "कि आप कहाँ से हो?" मेरा जबाब होता है गोरखपुर, बलिया, मुम्बई, मद्रास, राजस्थान, बिहार, दादरी, दिल्ली, प्रयागराज और आगे का पता नहीं!देश की एकता अखण्डता को मजबूती देने में हम केंद्रीय कर्मचारियों का बहुत बड़ा योगदान है। हम पूरे भारत की सभ्यता संस्कृति को आत्मसात करते हैं। अपनी जड़ों को अपने दिलों में लिये पूरे राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधते फिरते हैं। छोले बटूरे से लेकर इडली डोसा तक व मोमोज से दाल बाती तक से प्रेम रखते हैं। हाहाहाआआआ।" उनका बिंदास और स्पष्ट नजरिया था। आंटी ने बताया था कि रिटायर होने के बाद

अंकल थोड़े शांत रहने लग गये थे। बच्चों ने उन्हें कहा था कि गाँव की जमीन से अपना हिस्सा लेने के लिये कोर्ट में अपील डाले जिसके लिये उन्होंने साफ इंकार कर दिया था।
तीन दिन बाद फोन आया,“ पिताजी गुजर गये हैं। उनके अंतिम शरीर को मेक्स अस्पताल से सीधे उनके पुस्तैनी गाँव ले जाया जा रहा है।“ गाजियाबाद जहाँ उन्होंने रिटायर होने के बाद जीवन के बारह वर्ष बिताये वहाँ से इतनी दूर? मैं दुखी थी और आश्चर्य भी कर रही थी कि जिस व्यक्ति ने जीते जी अपने गाँव की जड़ को सीने में दफन रखा उनके मरने के बाद बच्चे उनके पार्थिव शरीर को गाँव क्यों ले जा रहे हैं? शायद जोड़ने के लिये क्योंकि जड़ आखिर जड़ है। शरीर एक पत्ता!..

*********



## लघुकथा




हेमलता शर्मा 'भोली बेन'
इंदौर, मध्यप्रदेश


# श्राद्ध कर्म

"अरे मित्र ! यह तुमने अपना सिर घोट-मोट क्यों करवा लिया ? परिवार में कोई गमी हो गई है क्या "? रमेश ने आश्चर्य से अपने मित्र रामबाबू से पूछा।

रामबाबू में हंसते हुए जवाब दिया-" अरे नहीं मित्र ! घर में कोई गमी नहीं हुई बस स्वयं का श्राद्ध मना रहा था । " तभी रामबाबू की धर्मपत्नी आंखों में आसूं भरकर भीतर से आकर बोली -"

देखिए न भाई साहब मैं तो समझा-समझाकर थक गई । कल बेटे ने चश्मा लाकर नहीं दिया तो इन्होंने आज अपना श्राद्ध कर्म रखकर ब्राह्मण को बुलाकर सारी चीज़ें अपने हाथों से दान कर दी । अब आप ही अपने मित्र को कुछ समझाइये । "

रमेश के कुछ बोलने से पहले ही रामबाबू बोल पड़े- "तो क्या करता भाग्यवान ! महिने भर से कह रहा हूं बेटे से कि चश्मा टूट गया है लेकिन कोई सुनवाई नहीं ,बहू समय से खाना तक नहीं देती । (मित्र से मुखातिब होकर) रमेश तुम ही बताओ मेरी पेंशन के पैसों से पूरा घर चल रहा है तब भी बेटे-बहू की यह हालत है ।

जीते जी जो हमारा कुछ नहीं कर पा रहे वे मरने के बाद हमारा श्राद्ध कर्म क्या करेंगे ?इसलिए सब अपने हाथों से कर लेना चाहता हूं ताकि लोक के साथ परलोक भी सुधर जाएं ।

" मित्र की बात सुनकर रमेश को भी अपने बहु-बेटे की करतूतें याद आ गई और वह बिना कुछ बोले वहां से चल पड़ा । रामबाबू की पत्नी उन्हें जाते देखती रही ।




संजय श्रीवास्तव
पटना


# “तृप्ति”

मुम्बई स्टेशन पर उतरने के बाद दशरथ बाबू भूख से व्याकुल हो गये थे। फिर कुछ सोचकर कि अब तो बेटे के घर के समीप आ ही गया हूँ तो घर पर बहू के हाथों से बनी सब्जी पुरी नाश्ता कर लूंगा। वैसे भी उनकी जब पत्नी जीवित थी तो हर रविवार को वे जलेबी बाजार से लेकर आ जाते थे और पत्नी पुरी सब्जी बनाती थी,फिर वे अपने बेटे के साथ बैठकर आनंद से खा कर तृप्त हो जाते थे।

जब वे रास्ते में टैक्सी पर बैठे थे उसी दरम्यान बेटे ने फोनकर बोला-पापा रास्ते में बिहार भंडार में कुछ नाश्ते का आदेश दिया हुआ हैं। कृपया लेते आयेंगे। दशरथ बाबू खुश होते हुए बोले-"हाँ बेटा तुम चिंता मत करो। मैं लेते आऊंगा। वे दुकान के सामने टैक्सी रोककर बोले-भाई!नवनीत का कुछ आदेश हैं। दुकानवाला अपने नौकर को बोला-"अरे! नवनीत बाबू का कचौड़ी जलेबी का एक पैकेट तैयार हैं।इनको दे दो ..जलेबी का नाम आते ही दशरथ बाबू की आँखें नम हो गयी थी यह सोचकर कि उनका बेटा उनका कितना ख्याल रख रहा हैं।

वे टैक्सी से अपना बैग और पैकेट लेकर घर के अंदर प्रवेश कर गये थे। बेटा आया और उनके बैग को एकतरफ रखकर पैकेट लेकर अंदर जाते-जाते बोला-"पापा आप थक गये होगे ..अभी तो हमदोनों को कुछ आवश्यक काम आ गया हैं।हमारे पास समय नहीं हैं। बस नाश्ता कर निकल जायेंगे.. शाम में आते हैं तो आपसे बातें करते हैं"।दशरथ बाबू यह समझ नहीं पा रहे थे कि बेटा उनके आने की परवाह कर रहा था या अपने काम की....और अवाक होकर अपनी बेटे-बहू को घर से जाते देख रहे थे...।

राकेश कुमार तगाला
पानीपत-132103
हरियाणा

कहानी

# "आशा की किरण"

शांति देवी मैं आपसे आपकी सफलता के बारे में जाना चाहती हूँ। एक टी.वी चैनल के लिए आपका इंटरव्यू लेना चाहती हूँ।मैडम आपके पी.ए से समय लिया था।जी बैठिए मैं अभी आती हूँ।जनसत्ता पार्टी की अध्यक्ष और इतना साधारण रहन-सहन। पूरा कमरा कला कृतियों से सजा था। तरह-तरह के फूल, पौधे, नदी,पहाड़ों की पेंटिंग लगी थी। एक चित्र मुझें खासा प्रभावित कर रहा था।एक दस-बारह साल का बालक नदी तैर कर पर रहा था। और उसके एक हाथ सिर पर रखा था,जिसमें एक गठरी थी। दूसरे हाथ से वह नदी की तेज लहरों को पार कर रहा था। उसी के साथ एक बड़ा सा चित्र लगा था। प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री जी का। मैंने सभी चित्रों पर उड़ती-उड़ती सी नजर डाली। एक से एक अनोखा चित्र ज्यादातर चित्र प्राकृतिक से संबंधित थे। मैं शास्त्री जी के चित्र के पास खड़ी हो गई।चित्र के नीचे कलर से एक सुंदर लाइन चमक रही थी। जिस पर लिखा था। मेरे प्रेरणा स्रोत, नीचे हस्ताक्षर में शांति देवी लिखा था।यह चित्र काफी पुराना था। करीब-करीब 30 वर्ष पुराना।चित्र के रंग भी फीके पड़ चुके थे। तभी चाय की प्याली लिए मैडम मेरी तरफ बड़ी। अपने क्यों तकलीफ की,मैं इतना ही कह सकी? इसमें तकलीफ किस बात की। आप चाय लीजिए, बाकी बातें बाद में होगी।

हम चाय की चुस्की ले रहे थे। चाय का स्वाद बहुत ही फीका था। मीठा नाम मात्र का था। पर मैं चुपचाप चाय की चुस्की ले रही थी।मेरे मन की बात पता नहीं कैसे भाप ली मैडम ने। क्या आप मीठा अधिक लेती हैं? जी नहीं ठीक है। मैं अपने चैनल के लिए आपका इंटरव्यू लेने आई हूँ?क्या हम बात कर सकते हैं, मैडम?कहिए आप क्या जानना चाहती हैं। सब कुछ, वह घटना जिसने आपको सफलता के शिखर पर पहुंचा दिया। उन्होंने पहले मेरा नाम पूछा, मैंने आहिस्ते से कहा नीलम। नीलम जी, मैंने सफलता के शिखर पर पहुंचने का कोई लक्ष्य निर्धारित नहीं किया था। मैं तो रोटी के लिए भी संघर्ष कर रही थी। नीलम जी,आज से करीब चालीस साल पहले, मेरे परिवार को समय पर खाना भी नहीं मिलता था।हमारा परिवार बड़ा था। सब भाई बहनों में सबसे बड़ी थी। माता-पिता की आर्थिक, सामाजिक स्थिति बहुत खराब थी।पिता जी गांव से बाहर निकल जाते थे। कभी किसी खेत में काम करते, कभी किसी का सामान ढोने में सहायता करते हैं। जो भी मजदूरी उन्हें मिलती। इसी में हमें गुजारा करना पड़ता था। घर का गुजारा बड़ी मुश्किल से चल रहा था। कई बार तो परिवार को दो समय खाना भी नसीब नहीं होता था।माँ भी गाँव के मुखिया के यहां काम करती थी।वह माँ की झोली में थोड़ा चावल डाल देते थे।माँ मुखिया के यहां जी- तोड़ मेहनत करती थी। ताकि किसी तरह परिवार का गुजारा हो सके। पूरे गाँव की स्थिति और भी अधिक दयनीय हो जाती थी। जब गाँव में सूखा पड़ता या बाढ़ आ जाती थी। नीलम जी,मैंने अपने जीवन में कई रातें बिना खाए गुजारी है। भुखमरी के कारण हमने गाँव को छोड़ने का निर्णय लिया था। क्योंकि गाँव की स्थिति पूरी तरह खराब होती जा रही थीं हम शहर में आ गए,रहने का कोई ठौर-ठिकाना नहीं था।हमनें पुल के नीचे कई रातें गुजारी थी।पूरा परिवार संघर्ष कर रहा था।

आपको तो पता ही है कि एक समय शहरों में कारखाने लगाने की बाढ़ सी आ गई थी।कारखानों को मजदूर चाहिए थे।कई कारखानों के मालिक अपनी दरियादिली दिखा रहे थे। मजदूरी के साथ-साथ मजदूरों को लुभाने के लिए, रहने के लिए कमरे भी मुहैया करवा रहे थे। पिता जी को भी इसी तरह की मजदूरी की तलाश थी।जहाँ मजदूरी के साथ-साथ रेन-बसेरा भी मिल जाए।हम पुल के नीचे कब तक पढ़े रहेगे?पुल के नीचे रात भर जुआरी अड्डा जमाए पड़े रहते थे। अंधेरा होते ही शराबी इधर उधर झाँकने लग जाते थे। मैं भी बड़ी हो रही थी। लोगों की नज़रों से खुद को लगातार बचाने का प्रयास करती रहती थी। पर कब तक ऐसा करती थी। जब पिता जी ने कहा कि उन्हें काम मिल गया है,एक कपड़ा मिल में। तो मेरी खुशी का ठिकाना नहीं रहा।क्योंकि काम के साथ रहने का ठिकाना भी हमारा इंतजार कर रहा था?कमरा क्या था, एक छोटा सा आशियाना था।कच्चा कमरा, मिट्टी की छत थी।

माँ ने पापा से कहा था।यह जगह काफी छोटी है। पर पापा का जवाब सुनकर,पुल के नीचे पड़े रहने से तो अच्छा है।वहाँ कोई सुरक्षा नहीं थी।फिर हमारी बेटी भी तो बड़ी हो रही है।माँ यह सुनकर चुप्पी साध गई थी। मैं कुछ नही समझी थी, पर माँ सब कुछ समझ गई थी।जी,आप ठीक है रहे हैं।सिर छुपाने के लिए झोपड़ी भी अच्छी होती है।पापा कपड़े की मिल में रात दिन काम करते। वेतन थोड़ा था,पर हमारा गुजारा ठीक-ठाक चल रहा था। बस इसी तरह जीवन के चार साल गुजर गए, पता ही नहीं चला।कुछ भी नहीं बदला था, रोज की तरह पापा सुबह मिल चले जाते, शाम को लौट आते।चार साल में मजदूरी भी नहीं बढ़ी थी। मैं भी बड़ी हो गई थी।

शिक्षा का तो नामोनिशान नहीं था। बाहर नारे लगते सुनाई देते थे।शिक्षा ही इंसान का जीवन बदल सकती है।आपका परिवार इतना दुःख सह रहा था। फिर आशा की किरण कहाँ से दिखाई दी?हाँ, नीलम जी यह आपका सही सवाल है। हम जहां रहते थे।वही कालू प्रसाद रहता था। उसी से

हमारे प्रधानमंत्री शास्त्री जी के विचारों को जानने का अवसर मिला। मैं बार-बार उसे आग्रह करती थी।मुझें शास्त्री के बारे में बताओ। वही मुझें उनके संघर्ष की गाथा सुनाता था। किस तरह किराया ना होने पर भी शास्त्री जी अपने कपड़े तथा किताबों को सिर पर रखकर प्रतिदिन नदी पार करते थे।पूरे साल उन्होंने संघर्ष कर अपनी स्कूली शिक्षा पूरी की। सच्चे अर्थों में तो कालू प्रसाद ही मेरा प्रथम टीचर था। जब मैंने घर पर पढ़ने की इच्छा रखी तो तूफान आ गया था। सभी इसके खिलाफ थे। पर माँ ने मेरा साथ दिया।कालू प्रसाद ने मुझें एक-दो घंटा पढ़ाने के लिए मान गया।पहले उसने मुझें अक्षरों का पूर्ण ज्ञान करवाया। मैं हिंदी बोलना पढ़ना सीख गई। मैं पुरानी किताबों को बार-बार पढ़ती रहती थी।क्योंकि नई पुस्तकें खरीदने के लिए हमारे पास पैसे नहीं थे। मेरी माँ को शहर की एक संस्था के बारे में पता चला।जहाँ लड़कियों को मुफ्त शिक्षा दी जाती थी।माँ ने पिता जी को भी मना लिया था।

यहीं से मेरा दूसरा जन्म हुआ, नीलम जी।मैंने वहां पर मन लगाकर पढ़ना आरंभ कर दिया। वहीं पर पढ़कर मैंने दसवीं की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की।उसी स्कूल में मुझें चपरासी का स्थाई पद मिला गया था। मेरा परिवार बहुत खुश था। पर मैं पढ़ाई नहीं छोड़ना चाहती थी। मैंने आगे पढ़ाई जारी रखी। चपरासी के काम के साथ खाली समय में आगे पढ़ाई करती रही।मुझें दूसरी सफलता तब मिली जब कॉलेज में मुझें चपरासी का पद प्राप्त हो गया। घर की स्थिति भी धीरे-धीरे पहले से बेहतर हो रही थी। उसी कॉलेज में नौकरी करते हुए, मैंने बी.एस.सी की परीक्षा पास कर ली।मुझें आज भी वह दिन अच्छी तरह काफी याद है। विज्ञान पढ़ने वाली एक टीचर काफी समय से अनुपस्थित थी।मुझें उसके स्थान पर पढ़ाने का मौका मिला। पर यह इतना आसान नहीं था।पानी पिलाने वाली को छात्र किस तरह अपनी टीचर स्वीकार करते।अधिकतर विद्यार्थियों ने मेरा विरोध किया था।

पर कहते हैं ना कि निराशा के बीच आशा की किरण की निकल ही आती है। वही हुआ कुछ छात्राओं ने मेरा सहयोग किया। वह मुझसे पढ़ने को राजी हो गई। धीरे-धीरे सभी ने मुझें स्वीकार कर लिया। पर मैंने पढ़ना नहीं छोड़, एम.एस.सी की उसके बाद पी.एच.डी की। कुछ सालों के बाद मैं उसे महाविद्यालय में प्रिंसिपल बनी। मेरा सफर लंबा था।

पर नई राह भी लगातार निकलती रही। मेरे अधिकतर विद्यार्थी उच्च पदों पर आसीन थे। उन्हीं के सहयोग से शहर की स्थिति सुधारने के लिए, मैंने इलेक्शन लड़ने का फैसला किया। और जनसत्ता पार्टी की तरफ से चुनाव लड़ी।और चुनाव जीत गई।आज मैं जनसत्ता पार्टी के अध्यक्ष पद पर हूँ। आज भी जब कभी मैं निराश होती हूँ, तो शास्त्री जी की ये दोनों तस्वीरें मेरा मार्गदर्शन करती है।

तभी एक आदमी अंदर आया, मैडम क्या आज आपको मीटिंग में नहीं जाना हैं?नीलम जी,यह है मेरे पति कालू प्रसाद जी।

वाह मैडम!नीलम मुस्कराई।इन्होंने मुझें शिक्षा की प्रेरणा दी। मैंने इनके नाम अपना जीवन कर दिया। मैडम यह प्रोग्राम टी.वी पर प्रसारित किया जाएगा।क्या आप अपने चाहने वालों से कुछ कहना चाहेंगी?जीवन में कितनी भी निराशा क्यों ना हो जाए? कहीं ना कहीं आशा की किरण हमारा इंतजार कर रही होती हैं। सच कहा शांति जी,आपने। हम सभी के जीवन में कोई ना कोई आशा की किरण होती हैं।शांति जी,अब भी शास्त्री जी के चित्र को देख रही थीं।

## लघुकथा

कुमकुम कुमारी
"काव्याकृति"

# "नेकी का फल"

ऑफिस का मीटिंग तो रात 10:00 बजे ही खत्म हो गया था। ऑफिस से निकलते हुए रवि ने रागिनी को फोन कर के बताया कि वो थोड़ी ही देर में घर पहुँच रहा है।लेकिन रात के 12:00 बज गये रवि अभी तक घर नहीं पहुँचे। रागिनी परेशान हो बरामदे में चहलकदमी कर रही है। कई बार रवि को फोन लगा चुकी है लेकिन रवि का फोन पहुँच से बाहर बता रहा है। रागिनी अपने रिश्तेदारों एवं रवि के कई दोस्तों को भी फोन कर चुकी है,पर रवि के बारे में कहीं से कोई जानकारी नहीं मिली। अंधेरा बढ़ता जा रहा है। सर्द भरी राते रागिनी का मन बहुत घबरा रहा है कहीं कोई..... नहीं– नहीं ऐसा नहीं हो सकता रवि को कुछ नहीं हो सकता ।

रागिनी अपने मन को समझाती है। अब तो रात के 1:00 बज चुके हैं ।रागिनी पूजा घर में भगवान के आगे हाथ जोड़ विनती कर रही है, हे प्रभु अपनी कृपा बनाए रखना, रवि जहाँ भी हो सुरक्षित हो।रागिनी का हृदय बैठा जा रहा है, तभी दरवाजे पर दस्तक होती है और रागिनी दौड़ कर दरवाजा खोलती है। लेकिन दरवाजा पर रवि नहीं बल्कि कोई अंजान व्यक्ति हाथ में आई कार्ड लिए रागिनी को दिखाते हुए पूछता है। मैडम आप इन्हें जानती हैं? हाँ - हाँ ये तो मेरे पति रवि हैं, पर ये कहाँ हैं? मैडम यहीं पास के नर्सिंग होम में भर्ती हैं, आप जल्दी चलिए। रागिनी उस व्यक्ति के साथ नर्सिंग होम पहुँचती है। डॉक्टर ऑपरेशन थिएटर से बाहर निकलते हुए कहता है चिंता की कोई बात नहीं अब रवि जी ठीक हैं। रागिनी पूछती है डॉक्टर साहेब रवि को क्या हुआ और वे यहाँ कैसे आए? तभी हाथ में दवाईयों की पोटली लिए घनश्याम आता है। यह वही मेहनतकश गरीब घनश्याम है जो अपनी जमीन के छोटे टुकड़े में अनाज उपजाता है और उसे बोरे में बांधकर अपने कंधे पर रख गाँवों की कच्ची सड़कों से होते हुए शहर में मंडी तक जाता है। बोझा ढोते-ढोते उसके पीठ में कुबड़ निकल आया था। रागिनी अपने पति से कहकर घनश्याम के लिए एक ठेलागाड़ी का प्रबंध करा दी थी। आज जब रवि ऑफिस से घर आने के लिए निकला तभी उसका एक्सीडेंट हो गया। सड़क पर वह जख्मी हालत में खून से लथपथ बेहोश पड़ा था। तभी घनश्याम अपने ठेलागाड़ी से वापस घर जा रहा था। रवि बाबू को सड़क पर इस तरह जख्मी हालत में देख घनश्याम उन्हें जल्दी से अपने ठेलागाड़ी पर लिटाकर अस्पताल ले आया। डॉक्टर ने बताया अगर सही समय पर रवि का इलाज नहीं होता तो शायद रवि का बचना मुश्किल था ।

**मीनाक्षी शुक्ला**
'पूर्णिया ,बिहार
प्रकाशित पुस्तक- विश्वासघात(उपन्यास)

**कहानी**

# "दिहाड़ी"

"विविध भारती के 'सदाबहार नगमें' में अगला गीत प्रस्तुत है, उस्ताद सुल्तान खान और के.एस.चित्रा की आवाज में 'पिया बसंती रे.. काहे सताये आ जा!' इस गीत के बोल लिखे हैं, 'अखिलेश शर्मा' ने और संगीत स्वर दिया है, 'संदेश शांडिल्य' ने।तो आइए सुनते हैं ये गीत!

खेतों की मेड़ पर रखें रेडियो में इस गीत की अनाउंसमेंट होते ही चंदन उछल पड़ा। सरसों के नन्हें पौधों को बचा-बचा कर कतवार हटाते-हटाते खेतों के बीचों-बीच पहुँच चुका था। अभी-अभी स्नेहिल भाव से प्रेमसिक्त होकर खिल उठी सरसों, जिन पर कहीं-कहीं पीले फूलों की गुच्छे में धानी घूँघट लिए सरसों ओस की बूंदों के साथ अपने वर्ण पर इठला रही थी। कि, चंदन जगह बनाते हुए रेडियो की आवाज तेज करने तूफान जैसे भागा। कुछ समय पहले हुलास भरती कुछ सरसों मुरझा गई। चंदन आँखें मूंदे मेड़ पर बैठ गया।

***पिया बसंती रे***
***काहे सताए आजा***
***जाने क्या जादू किया***
***प्यार की धुन छेड़े जिया***
***काहे...***
***तेरे है हम तेरे पिया***
***काहे सताए... आजा!***

"पंजाब या दिल्ली जाएगा?? "अंतिम ईंट चंदन के माथे पर रखते हुए कैलाश ने पूछा

"फिर यहाँ?? सब कैसे होगा?? मैट्रिक का भी परीक्षा देना है.. "चंदन बोलता हुआ माथे पर रखी सात ईंटे पकड़े हुए, जिस ओर मकान बन रहा था उधर चला गया।

राजमिस्त्री और मालिक भड़क उठे। "जल्दी-जल्दी हाथ चलाओ.. यहाँ बेगारी का पैसा नहीं मिलता है। दो ईंटे और रख सकते थे, माथे पर।

चंदन खिसिया गया। माथे को सीधे आगे छोड़ दिया और सारी ईंटे मालिक के सामने बिखर गई। "आप ही फिर काम कर लीजिए।

मालिक भी ताव में आ गया, सीधा जाने को कह दिया।

"और, तीन दिन का पैसा! काम करवाए है.. भर-भर साँझ तक.. आधा दिन आज का भी मिला कर हमारा हिसाब कर दीजिए।

"तड़ाक!... मालिक, बाल खींचकर कान के जड़ में एक थप्पड़ चंदन को रसीद दिया। पिछवाड़े से घर की सारी औरतें निकलकर बाहर आ गई। हो-हल्ला में औरतों को जमा देख चंदन भी अकड़ में आ गया। साल के बारह महीने काम कर-करके गेहुँआ रंग श्याम हो चला था.. बालों और पेशानी से ईंटे की बुरादों के साथ बहता पसीना अपनी-अपनी जगह बना कर धार में चू कर मटमैली गंजी तक आ रहा था। ताव में आकर चंदन ने मालिक को धक्का दे दिया और तेजी से निकल गया।

" मालिक गिरते-गिरते बचा.. उसके आगे बिखरे ईंटे में उसकी लूँगी फँस गई.. हल्का-सा खून पैर के अंगूठे से निकल पड़ा।..."साला.. कुत्ता.. हरा**.. छोड़ेंगे नहीं तुमको.चंदन तेजी से उसके आवाज की पहुँच से दूर हो गया।

"साँझ में पंचैती (पंचायत) का बोल कर गया है.. मालिक पर हाथ उठाने का जरूरत ही क्या था?? दिहाड़ी का पैसा गया.. सो गया.. पूरे बिरादरी के सामने जलील करेगा.. वो अलग। "चंदन की माँ दहक रही थी।

चंदन, सरसों फूल का 'बड़ी' (कचरी).. भात में सानकर बड़े प्रेम से खा रहा था। पास में ही रेडियो भी बज रहा था.. धीमी आवाज में। "एक गो और बड़ी दे दो तो.. भात में नून (नमक) कम लगता है। थोड़ा सा नून.. तेल भी लेते आना!

माँ भनभनाते हुए हाथ में नमक और तेल का शीशी लेकर आ गई। "एक ठो.. एक ठो करके सब ठो खा गया.. बाकी लोग छूच्छे (उसके बिना) खाएगा कि!

"मालिक से बहस करने का जरूरत ही क्या था?? फिर अपना समाज का आदमी है और बड़ा भी है.. कह दिया तो क्या हो गया?? जो दो गो पैसा आता था वो भी बंद.. तीन दिन का पैसा भी नहीं देगा.. देख लेना।

चंदन खाता रहा। कुछ देर ठहर कर माँ ने बाल्टी उठाया और बोली, "हम स्नान करके आते हैं.. गोभी बोरा में रख दिये हैं। साइकिल पर 'हाट (बाजार) पहुँचा देना। हम पीछे से आते हैं।

"बच्चा है मलकिनी! कौन उमरे हुआ है?? बिन बाप का बच्चा कैसा होता है?? जवान खून है.. गलती हो गया चंदनुआ से। "भरती साँझ में चंदन की माँ मालिक का देहरी पर बैठकर घिघिया रही थी।

"दीया-बाती का टैम है.. चंदनुआ माय! फेर आठ बजे पंचैती का बोलले गया है। जो बोलना है.. वहीं बोलना।

चन्दन की माँ मुँह ताकने लगी।

"मालिक का पैर देखे हैं.. केतना खून निकला है! बहुत खर्चा हो गया है.. दवाई-दारू में.. बैंडेज किया है।

"अच्छा मलकिनी! ई भट्टा बैंगन (बड़ा बैंगन) लेकर आए थे.. अपना खेत का ताजा टूटा है.. चोखा अउर तरनियो बढ़िया लगेगा। और, ई छोटका-छोटका गोभी का फूल है.. बिना खाद वाला। तीमन (सब्जी) बढ़िया बनेगा।

बेटी को आवाज देकर फटाफट दउरा (टोकरी) मलकिनी अंदर रखवा दी। "पंचायत में, चंदनुआ की माँ को खूब भला -बुरा कहा गया.. बेटा गुस्सैल था जो! मालिक ने दिहाड़ी न

दी.. उल्टा डाँट-फटकार कर भरी बिरादरी में माफी मांगने को कहा। चंदन अकड़ में वहां झुका नहीं.. अधिक जोर देने पर भाग खड़ा हुआ।

"मूँछ का तो रेखा भी ठीक से नहीं आया है। हमीं से बहस करने चला है। राजमिस्त्री अपने धुन में बोले जा रहा था। उधर रेडियो में सदाबहार गाने तेज आवाज में राजमिस्त्री की डाँट को भरसक दबाने का प्रयत्न कर रहे थे। "चंदन बालू और सीमेंट का तसला लिए नीचे खड़ा था।

गाजियाबाद में किसी बड़े आदमी के बंगले का पूरा ठेका डीलर ने कमीशन पर इसी राजमिस्त्री को दिलाया था। चौबीस घंटे में सोलह से सत्रह घंटे काम करवाता था। अपनी जेब भरने के चक्कर में कई बार राजमिस्त्री ईंट, सीमेंट, बालू में घपला कर जाता। एक बार चंदन ईंटो को जोड़ने के लिए मसाला बनाने पर राजमिस्त्री से उलझ पड़ा।

"आज सुनकर भी चंदन चुप ही रह गया। रोटी बनाते समय रह-रह कर माँ की आवाज नेपथ्य से आती मालूम पड़ती.. "रे चंदनुआ! कितना खायेगा.. अच्छा दु कौर खा लो! "चन्दन ने चुपके से अपने आस पास झाँका और अपनी कोर पोंछ ली..

आखिर, मर्द बन रहा है वो.. अपनी छाती आगे कर रोटी को चिमटे से पलट दिया.. ओहहोऊ.. चिमटा गर्म था.. चंदन को भान नहीं रहा कि चिमटा कब से तवे पर ही रखा था।

उस रात, चंदन सीधे भागकर अपने घर के पिछवाड़े में ही छिपा रहा। माँ को सबसे हाथ जोड़कर माफ़ी माँगनी पड़ी थी। सबके जाने के बाद, माँ ने चंदनुआ का कान खींचकर पिछवाड़े से लाई थी और जवान बेटे पर हाथ उठाते-उठाते रह गई। चंदन गुस्से में आधी रात को अपना सामान लेकर रेलवे स्टेशन पहुंच गया और जो ट्रेन सामने दिखी उसमें बिना टिकट के बैठ गया। ट्रेन गाजियाबाद रुकी। जनरल बोगी में टीटी ने भी अधिक ध्यान नहीं दिया।

"रोटी और तोरई की सब्जी खाते हुए राजमिस्त्री ने समझाया.. "देख चंदन! इतने ईमानदारी और भलाई का जमाना नहीं है। मैं नहीं खा रहा.. मैं तो कुछ गुलाबी बाल अपने बच्चों के लिए चुरा रहा। गलत नहीं है.. मैं नहीं तो कोई और करेगा। इनलोगों का कुछ नहीं जाएगा.. बस, हम सबका थोड़ा-थोड़ा भला हो जाएगा। "चंदन नजरें नीची किये खाता रहा।

कुछ साल यूँ ही निकल गए। जब से मोबाइल फोन का जमाना आया.. तब से चंदन कभी-कभार अपनी माँ से बात कर लिया करता है। माँ.. बात कम करती, रोती ज्यादा! चंदन खीझ जाता। "रे चंदनुआ! केतना साल हो गया, बेटा..घर आ जाओ! "बहिन का शादी पक्का हो गया है। माँ.. बहुत दिनों बाद खुश हो कर बोल रही थी। रे बेटा! इसी वैशाखी पूर्णिमा का दिन निकला है।

चंदन ने खूब सारी खरीददारी की। नियत समय पर ट्रेन भी खुल गई। पहली बार स्लीपर में चढ़ा था। बहुत खुश था। रह-रह के अपने खरीदे समान को कभी माँ तो कभी बहन के हाथ में देखता और खुश हो जाता। सीट के नीचे रखे बैग के बेल्ट को अपने हाथों में बांधे कब सो गया.. पता नहीं लगा। वो तो सुबह-सुबह 'बाढ़'(जगह का नाम) में कई लोग चढ़ गए। पूरी स्लीपर बोगी बाढ़ के दो-तीन स्टेशन बाद जनरल बोगी बन गई। लोग खचाखच भरे हुए थे। चंदन अपनी ही सीट पर सिमट कर खिड़की के पास कोने में बैठ गया। खिड़की से आती हवा बड़ी अच्छी लग रही थी। तभी सामने वाले ने पानी के लिए पूछा.. चंदन ने इन्कार में सिर हिला दिया। अभी भी शाम तक का सफर बाकी था।

वो सब भी दिल्ली से ही आ रहे थे। बिना टिकट के चढ़े थे। सो, एक बोगी से दूसरे बोगी छिप रहे थे। सबकी अपनी-अपनी कहानी थी। रोजी-रोटी के चक्कर में अपने घर को छोड़कर यहाँ-वहाँ भटक रहे थे। तभी ट्रेन रुकी स्टेशन में तो उसमें से एक आदमी भागकर बाहर गया और दस रुपये वाली फ्रूटी के कुछ पंद्रह-सोलह डिब्बे ले आया। उस बोगी में बैठे सबको दिया। चंदन भी पीने लगा।

"उठो.. आँख खोलो! चंदन को होश ही कहाँ था.. अगले दिन दोपहर तक जाकर उसे होश आया।आवाज में अभी भी घिघिया पन था।

"नाम क्या है?? कुछ याद है?? "दरोगा थोड़ी-थोड़ी देर में आकर गाल पर एक चपत लगाता और पूछता। "नशाखुरानी गिरोह फिर से सक्रिय हो उठा है हो.. ई लड़कवा का हाल देख रहे हैं.. दरोगा बाबू! "कॉन्स्टेबल पान का खिल्ली में एक्स्ट्रा चूना और कत्था लगवाने की बात कहकर दरोगा बाबू को अपनी चिंता बता रहा था।

चंदन खाली हाथ गया था.. वैसे ही खाली हाथ आया। तीन-चार दिन के बाद चंदन पूरी तरह अपने होश में आया। चंदन की मां के लिए चंदनवा घर आ गया.. यही बहुत था। शादी अच्छे से ही हो गई। जाते जाते 'डोली'.. अपने भाई के गले लग खूब रोई। "भैया हो! माय (माँ) के ख्याल रखियो। अब दिल्ली-पंजाब छोड़ो.. शादी-बियाह करी लें और घर बसो। अब माय अकेला कैना रहते।

"चंदनुआ माय! मलकिनी भेंट मांगी है। मूढ़ी का बोरा लिये अँगना में खड़े-खड़े होकर 'लखन की माय' बोलकर चली गई। चंदन ओसारे पर बैठा.. ये सुनते ही लपककर बाहर आया और कहने लगा.." अभी भी उनके यहाँ काम करने जाती हो??

"उसके बेटी का शादी है.. अब न जाएगा तो लोग अच्छा कहेगा!

"हमरा घर.. पढ़ाई.. तुम.. डोली.. सब छूट गया.. अब भी तुमको उसका और समाज का चिंता है। "चंदन गुस्से से बिलबिलाते हुए दरवाजे पर चला गया। रात को खाना भी नहीं खाया। अगले दिन तड़के ही दिल्ली के लिए एक बार फिर रवाना हो गया। नोकिया का मोबाइल और कान में हेडफोन ठूँसे दिल्ली पहुँच गया।

" आजकल जिसको भी बुलाईये काम के लिए.. सबका दिमाग सातवें आसमान पर ही रहता है। कल तक हमारे फेंके टुकड़ों पर ही इनका घर चलता था और आज के आंख उठाकर भी नहीं देखते हैं.. सीधे मुंह घुमा कर चल देते हैं। किसी को कुछ कहिए तो अकड़ देखते ही बनता है। सबका दुल्हा.. बेटा.. दिल्लिये.. पंजाब खटता है और यहां पर करते -करते कमर टूटता है। बताइए मालिक... चंदनुआ माय को केतना बार कहलवाए है.. उसको तीन चार बार खबर

भिजवाए  कि यहां पर आकर पूरा दिन रहे और दिन के हिसाब से पैसा भी देंगे और खाना भी। तो, आज बोलती है कि "हम काहे खटेगे.. मेरा बेटा हर महीने पैसा भेजता है और दूसरे के घर काम करने से भी मना किया है.. अब बेटा का तो बात नहीं न काट सकते हैं। मलकिनी... अपनी बेटी और बेटे के साथ घर का काम निपटा रही थी। मालिक अकेला कुर्सी पर बैठा उन सबको हांफते हुए देख रहा था।

## ग़ज़ल


**डॉ उमेश चंद्र शुक्ल**

अध्यक्ष,हिंदी-विभाग
महर्षि दयानंद कॉलेज
परेल मुंबई-12

(1)

यूं तो ज़िंदगी से विरानी नहीं जाती,
रोते-रोते ज़िंदगी जी नहीं जाती ।।
कभी बोना न बीज दुश्मनी का,
समझौते से दुश्मनी नहीं जाती ।।
मर मर कर जीने की वजह तो हो
औरों के नज़र से देखी नहीं जाती ।।
वो हाथ खाली है,लुटा कर सब कुछ
फिर भी दरियादिली नहीं जाती ।।
हमें वक़्त दिखाता है वो सब कुछ
जिसकी उम्मीद भी की नहीं जाती ।।
दुनिया कितना भी करे सवाल उमेश
इंसानियत नेकी बदी नहीं जाती ।।

(2 )

उनकी बेरुखी का अंदाज अच्छा नहीं
सीखा हमने नजर अंदाज़ अच्छा नहीं ।।
चारों तरफ हरा-भरा था सुर्ख आब़ था
झुलसती लू सा मिज़ाज अच्छा नहीं ।।
हर्ष उल्लास ताज़गी भरे तीज त्यौहार
जीवन से दूर होता समाज अच्छा नहीं ।।
ढ़ोल हारमोनियम करताल की मधुर धुन
डीजे की कर्कश आवाज अच्छा नहीं ।।
फिर अभिव्यक्ति पर कसता हुआ फांस
लोकतंत्र की जड़ों में तेजाब अच्छा नहीं ।।
किसानों-मजदूरों के साथ भद्दा मज़ाक,
मुफ्त में बांटते हो अनाज अच्छा नहीं ।।
घुटती हुई आवाज़,आवाज बन उमेश
अतीत के पन्नों से छेड़छाड़ अच्छा नहीं ।।

(3 )

रफ्ता रफ्ता जिंदगी बीमार होती जा रही है,
चढ़ा मुलम्मा इस क़दर बेकार होती जा रही है ।।
हम संस्कारों से बंधे थे पीढ़ियां हंसती रही,
बाज़ार के रंग में रंगे,अब हार होती जा रही है ।।
बाजार का तेज झोंका खनक कल्दार की चलती,
ज़बान की नहीं कीमत व्यापार होती जा रही है ।।
जब से लिफ़ाफे का चलन बढ़ा नाते रिश्तेदारों में,
आशीर्वाद के बदले व्यवहार होती जा रही है ।।
लफ़्ज़ों के शिकारी वर्षों से सदा हमें बांटते रहे,
सियासत की बातें गले के पार होती जा रही है ।।
चिरागों को शहर में कैद करने की मुनादी सुन,
तानाशाही रवैए से व्यवस्था छार होती जा रही है ।।
अब कुर्सियों के खेल में घुटने लगा है दम उमेश,
रहबरी नारों में उलझी लाचार होती जा रही है ।।

(4 )

ग़लत फहमी जमाने को बस ईमान बिकता है,
अगर कीमत मिले वाजिब यहां इंसान बिकता है ।।
सदी बदली नयी दुनिया,बढ़ी बाजार की दौलत,
बाजारू रंग-रोगन है यहां हर सामान बिकता है ।।
तुम्हें जिस बात पर गुमान महफ़िल में बहुत ज्यादा,
सजे शब्दों की माला,वो महफिलें शान बिकता है ।।
लगाते खुद सियासत दां हमारे मुल्क की बोली,
सरे बाजार शहीदों का वो सपना ख़ास बिकता है ।।
सच, सिद्धांत मूल्यों का दिखावा जितना ज्यादा है,
बड़ी कीमत पर वो रहबरी भगवान बिकता है ।।
सरसों तेल नमक दालें दीपोत्सव के ख़ास तोहफे हैं,
सत्ता खेल, साजिशों से दीवानेखास बिकता है ।।
नहीं बिकता,जिसके रगों में सत्य, ईमान हो उमेश
बाजारू सोच तौहीनी,सदा बेईमान बिकता है ।।

(5)

किसका सच में उतर गया पानी
झूठे चेहरों पर चढ़ गया पानी ।।
हमें बादलों ने नहीं दिया धोखा
अब मौसम का बदला गया पानी ।।
सूना आकाश बिखर रहा जीवन,
रहबरी फितरत मचल गया पानी ।।
महफूज़ नहीं हमारी नयी पीढ़ी
गलत सोहबत में पड़ गया पानी ।।
गंगा जमुना बेजार सरस्वती लुप्त हुईं
नदी झरने का बदल गया पानी ।।
बद्चलन हवाओं ने डेरा डाला
मौसमी घात,बिखर गया पानी ।।
जड़ों को सींचना,संवारना उमेश
पीढ़ियों का उछल रहा पानी ।।

**श्वेत कुमार सिन्हा**
**राजगीर, ज़िला- नालंदा (बिहार) 803121**

**लघुकथा**

# "कुंडी रिश्तो की"

फैमिली कोर्ट में जज साहब अपने चैम्बर में बैठे आरव और वर्षा की दलीलें ध्यान से सुन रहे थें। आज उनदोनों की आपसी सहमति से तलाक की आखिरी सुनवाई थी। जज साहब ने दोनों पति-पत्नी को समझाने का काफी प्रयास किया कि तलाक न लें और अपनी डेढ़ साल की शादीशुदा ज़िंदगी को एक और मौका देकर देखें। पर सम्बंध-विच्छेद की क़गार पर खडे ये पति-पत्नी अपनी अलग ही धून अलाप रहे थें।

आज बाहर काफी ज़ोरों की आंधी-बारिश हो रही थी, मानो आकाश भी मोटे-मोटे आँसू बहा रहा हो! तेज़ हवा की वज़ह से जज साहब के चैम्बर का दरवाजा रह-रहकर जोर की आवाज के साथ बंद हो जाया करता, जिसे वहाँ खड़े एक प्रहरी ने पकड़ रखा था।

"देखिए, आज अंतिम मौका है। तलाक हो जाने के बाद फिर कुछ नहीं किया जा सकता। मैं फिर से कहुंगा कि आपदोनों अपनी शादी को थोड़ा समय दें और एक-दूसरे को अच्छे से समझने की कोशिश करें। यूं तैश में आकर रिश्ते खत्म कर लेना सही नहीं।" – जज साहब ने पति-पत्नी को समझाते हुए कहा।

पर आरव और वर्षा अपना निर्णय लेकर आए थें और जज साहब की बातों का उनपर कोई असर होते नहीं दिखा।

"जज साहब, मैं प्यार में अंधी हो गई थी जो इस गलत इंसान से शादी कर बैठी। हमदोनों का कोई मेल नहीं! नहीं रहना मुझे इसके साथ। बस आप हमारी तलाक मंजूर कर दें। मैं इसका शक्ल भी देखना नहीं चाहती।" – वर्षा ने सम्बंध-विच्छेद का गुहार लगाते हुए कहा।

"हाँ, जज साहब। जब ये मेरे साथ रहना ही नहीं चाहती तो मुझे भी इसके साथ कोई जोर-जबरदस्ती नहीं करनी। इसे जो चाहिए, मैं देने को तैयार हूँ।"– आरव ने तलाक के लिए अपनी रजामंदी देते हुए जज साहब की तरफ देखकर कहा।

"मुझे इस इंसान से एक फुटी कौड़ी भी नहीं चाहिए। बस आप हमारी तलाक करा दें।"– वर्षा ने अपनी बात दुहरायी।

तभी एक – फटाक़- की आवाज़ के साथ जज साहब के कक्ष का दरवाजा बंद हो गया। हवा तेज़ चलने की वज़ह से शायद वह अटक गया था।

जज साहब, आरव और वर्षा के साथ भीतर ही बंद हो गए थें। बाहर कर्मचारियों में हड़कम्प मची थी, जिसकी आवाज भीतर तक सुनी जा सकती थी। वे सब अटक चुके दरवाजे को खोलने का लगातार प्रयास कर रहे थें, जिससे तलाक की सुनवाई थोड़ी देर रुक गई थी। भीतर से जज साहब ने आवाज़ देकर उन्हे रोकने का प्रयास किया। पर उनकी आवाज बंद दरवाजे से बाहर न जा सकी।

जज साहब अपनी कुर्सी पर बैठ दरवाजे के खुलने का इंतज़ार करते दिखे। आरव और वर्षा ने बंद दरवाजे पर निगाह डाली और फिर एक-दूसरे की तरफ देख आंखों-आंखों में कुछ बातें की।

जज साहब के सामने सिर झुंकाकर दोनों उठे और दरवाजे तक आए, जो अटक जाने के कारण बंद हो चुका था। तलाक के लोलुप पति-पत्नी ने बंद दरवाजे को नजदीक से निहारा तो जोर के झटके से बंद होने के कारण उसके माथे पर लगी कुंडी भीतर तक अटकी दिखी, जिसके वजह से वह खुल नहीं पा रहा था।

कुंडी शायद काफी पूरानी रही होगी, जिसकी वजह से वह दरवाजे की चौखट में घुसकर अटक चुकी थी। आरव और वर्षा ने कुंडी की तरफ देखा और उनकी निगाह एक-दूसरे पर आकर अटक गई। उन्हे इस बात का एहसास ही न रहा कि वे दोनों जज साहब के सामने खड़े हैं।

अटकी हुई वह कुंडी दोनों पति-पत्नी को उनकी बीती ज़िंदगी में लेकर चली गई, जब दोनों के परिवारवाले काफी मान-मनौवल के बाद उनकी शादी के लिए तैयार हुए थे और वर्षा अपने प्रियतम आरव की दुल्हन बनकर ससुराल में पहली बार अपना क़दम रखी थी।

घर में नववधू के आने से सभी खुश थें और पूरे परिवार में चहल-पहल का माहौल था। आरव भी अपनी मनचाही दुल्हन पाकर फुले नहीं समा रहा था, जिसका प्रतिबिंब वर्षा के चेहरे पर भी साफ-साफ झलक रहा था।

भीड़भाड़ वाले घर में नवदम्पत्ति को एकांत मिल पाना मुश्किल था और उनके भीतर दबी बेताबी को शादी में शामिल होने आयीं आरव की सभी भाभियों, मामियों ने ताड़ लिया था। आखिर वे सब भी कभी न कभी इस दौर से गुजर चुकी थी।

इस नवयुगल के मन की बेचैनी उनसे देखी न गई और मौका पाकर उन्होने एक कमरे को तैयार किया, ताकि इस नए जोड़े को एकांत मिल सके और दोनों एक-दूसरे के साथ थोड़ा समय बिता सकें।

अभी दोपहर के यही कोई तीन-सवा तीन बजे होंगे और खानापीना खाकर अधिकांश मेहमान और घर के सदस्य आराम फरमा रहे थें। इसिलिए सभी भाभी और मामियों की जमात ने यही समय ठीक समझा और आरव-वर्षा को किसी बहाने अपने साथ लेकर आए। फिर उनदोनों को कमरे के भीतर धक्का देकर कहा – "तुमलोगों के पास पंद्रह मिनट है, एक-दूसरे से अपनी मन की बातें करने की। दरवाजे की कुंडी भीतर से बंद कर लो। हमलोग यहीं आसपास पहरा दे रहे हैं। पर याद रहे, मात्र पंद्रह मिनट।" यह कहकर एक भाभी ने दरवाजे को बाहर से सटाते हुए वर्षा को भीतर से दरवाजे की कुंडी बंद कर लेने का इशारा किया। सभी के सामने कमरे में यूं अकेले बंद होने पर दोनों यूवादंपत्ति मारे शरम के पानी

पानी हुए जा रहे थें। लेकिन यह वक़्त शरमाने का नहीं था। बल्कि शरम की सारी चादर उठा फेंकने का था, नहीं तो फिर ऐसा मौका दुबारा मिलने में न जाने कितने घंटे लगते या कुछ दिन। सहमी हुई वर्षा कमरे के एक कोने में खड़ी आरव को निहार रही थी। उसकी तरफ देख आरव ने छेड़खानी वाली मुस्कान भरी और दरवाजे की कुंडी चढ़ाने के लिए अपना हाथ आगे बढ़ाया। वर्षा भी अपना दिल थामें आरव को निहारती रही।

पर ये क्या! दरवाजे की कुंडी नदारद! वर्षा ने अपना सिर पिट लिया और लगी ठहाके लगाकर हँसने। इसपर बाहर से आवाज़ आयी-"धीरे। आवाज़ बाहर न आने पाये।"

"धत्त तेरे की!"– आरव ने कुंडी की तरफ अंगुली दिखाते हुए कहा, जैसे उसके धमकाने से कुंडी बंद हो जाए! फिर उसने कमरे में चारो तरफ अपनी निगाह फेरी। पर कहीं से कोई चारा न दिखा।

आरव को बेचैन देख वर्षा ने पास आकर उसका हाथ थामा और कमरे में मौजुद सोफे तक लेकर गई। फिर वहीं सोफे पर बैठ दोनों जीवनसाथी ने एक-दूसरे के साथ अपने दिल की सारी बातें बयां की और भावी ज़िंदगी से अपनी उम्मीद जाहिर की। एक-दूसरे की आंखो में खोए आपस में बतियाते एक घंटा कैसे निकल गया, पता ही न चला।

तभी बाहर से किसी ने ज़ोर-ज़ोर से दरवाजा पीटना शुरु कर दिया। जरूर यह मामी या भाभी ही होगी! आने दो, उनसे पुछते हैं कि कमरा तो दिला दिया पर इस बात की जाँच तक नहीं की कि दरवाजे में कुंडी है भी या नहीं।

आगे बढ़कर आरव और वर्षा ने एकसाथ हाथ लगाकर जोर से दरवाजा अपनी तरफ खींचा तो वह कडाक की आवाज़ के साथ खुल गया।

सामने कोर्ट के कर्मचारी पसीने से लथपथ और जज साहब के कोपभाजन का शिकार बनने को तैयार खड़े थें।

पर जज साहब के चेहरे पर मुस्कान थी। दरवाजा बंद होने की नहीं, बल्कि एक-दूसरे का हाथ थाम मतभेद रूपी दरवाजे की जकड़ी हुई कुंडी खुल जाने की।

आरव और वर्षा अभी भी एक-दूसरे का हाथ थामे खड़े थे। वो प्यार जिसके सहारे दोनों ने आजीवन एक-दूसरे का दामन थामने की क़सम खायी थी, सोच रूपी जकड़ी हुई कुंडी के खुलते ही वह फिर से उनके दिलोदिमाग पर उभर आया था।

उनके खिले हुए चेहरे पढ़ने में जज साहब को सेकंड भी न लगा। आरव और वर्षा ने भी उनकी तरफ देखकर मुस्कुरा दिया, जो उनके सम्बंध-विच्छेद नहीं बल्कि उनकी शादी के जन्म-जन्मांतर तक चलने का प्रमाण दे रहे थें।

## काव्य

**नलिन खोईवाल** ,
इंदौर

### "आँसू"

अब्र से बन गरजते हैं आँसू ।
गम में उनके बरसते हैं आँसू ।।
बनते हैं आँख की किरकिरीएँ ।
खार बनके भी चुभते हैं आँसू ।।
रात तन्हाई में जब ये रहते ।
पंछियों से चहकते हैं आँसू ।।
कतरा -कतरा कभी गिरते रहते
उठते,गिरते संभलते है आँसू ।।
आँख में बेवजह ये न आते ।
हो वजह तब लरजते हैं आँसू ।।
है समंदर से भी स्वाद खारा ।
दर्द में मीठे लगते हैं आँसू ।।
जब ये बहते तो सैलाब आता ।
बनके दरिया निकलते है आँसू ।।
चुप के बहते दिखाई न देते ।
दिल की हर बात सुनते हैं आँसू ।।
मोतियों का है सागर इन्हीं में।
संपदा बन छलकते हैं आँसू ।।
बंद पलकों में हैं तितलियाँ ज्यों ।
बनके खुशबू महकते हैं आँसू ।।
हँसते रहते हैं आँसू खुशी में ।
पर गमों में सुबकते हैं आँसू ।।
जब भी बेबस की आंखों में आते ।
आग बनकर दहकते हैं आँसू ।।
बंद पलकों में रहते हैं मोती ।
निकले तो खाक बनते हैं आँसू ।।
रात के घुप अंधेरे से डरते ।
चुपके चुपके सुबकते हैं आँसू ।।
आइने में ये हँसते लजाते ।
पर हया बन संवरते हैं आँसू ।।
मौन रहते कभी कुछ न कहते ।
कांधे सर रख बिलखते हैं आँसू ।।
हाय जब भी किसी की लगी है ।
तो कजा बन निकलते हैं आँसू ।।
जब विदा होती है घर से बिटिया ।
आँख में कब ठहरते हैं आँसू ।।
जब कभी याद आई है माँ की ।
अनवरत अब बरसते हैं आँसू ।।
गमज़दा जब रहे ज़िंदगी में ।
आँख से बस टपकते हैं आँसू ।।
खलने लगती है जब जब उदासी ।
फूल बनकर महकते हैं आँसू ।।
जब भी बच्चों की आँखों से टपके ।
एक सैलाब बनते हैं आँसू ।।
जब ये दिलबर की आँखों में आते ।
बर्फ़ बनकर निकलते हैं आँसू ।।
हमनवा जब भी होता ख़फ़ा तो ।
बन कयामत बरसते हैं आँसू ।।
भरते मोती से दामन नलिन का ।
जब खुशी में चमकते हैं आँसू ।।

**बलविन्दर'बालम'**
गुरदासपुर

## "बिजली ले लो पानी ले लो"

बिजली ले लो पानी ले लो।
मुफ्तो-मुफ्त कहानी ले लो।
दूध दही भी साथ मिलेगा।
पूरे ही पांच साल मिलेगा।
मटकी साथ मथानी ले लो।
मुफ़्तो-मुफ़्त कहानी ले लो।
बेशक बीच बुढ़ापे में हो।
आयु बीच स्यापे में हो।
फिर से एक जवानी ले लो।
मुफ़्तो-मुफ़्त कहानी ले लो।
साड़ी सूट दुप्पटा मखमल।
लैपटाप स्कूटर साईकल।
सोने की एक गानी ले लो।
मुफ़्तो-मुफ़्त कहानी ले लो।
कुंदन के दाम चल जाएगी।
पारस अन्दर ढल जाएगी।
खोटी एक चव्वानी ले लो।
मुफ़्तो-मुफ़्त कहानी ले लो।
रिश्वत ठग्गी चोर बाजारी।
मुफ़्त सफर की बस है सारी।
सच्च में बईमानी ले लो।
मुफ़्तो-मुफ़्त कहानी ले लो।
खुल्लम-खुल्ला मटरगश्ती।
शहर के अन्दर फ़िरकापरस्ती।
घर-घर में शैतानी ले लो।
मुफ़्तो-मुफ़्त कहानी ले लो।
हस्त रेखाएं भी बदलेंगे।
धूप और राहें भी बदलेंगे।
सच्ची भविष्य वाणी ले लो।
मुफ़्तो-मुफ़्त कहानी ले लो।
सुन्दर आंखें मटकाने के लिए।
लम्बा काजल पाने के लिए।
खालिस काजलदानी ले लो।
मुफ़्तो-मुफ़्त कहानी ले लो।
बाद में हक की बातें करना।
पहले शुरू करवाना धरना।
लोगों की कुर्बानी ले लो।
मुफ़्तो-मुफ़्त कहानी ले लो।
नशा कभी बंद नहीं होना।
माताओं पुत्र खो कर रोना।
वोटों बीच नादानी ले लो।
मुफ़्तो-मुफ़्त कहानी ले लो।
दल बदलो और कुर्सी पाओ।
लोगों को ख़ूब मूर्ख बनाओ।
जैसे भी प्रधानी ले लो।
मुफ़्तो-मुफ़्त कहानी ले लो।
नेताओं को बंगले देंगे।
निर्धन को झौंपड़ रंगले देंगे।
हमारी मेहर बानी ले लो।
मुफ़्तो-मुफ़्त कहानी ले लो।
यदि यह देश बचाना चाहो।
'बालम' के संग सारे आओ।
गुरूयों वाली बाणी ले लो।
सच्च की एक कहानी ले लो।

**नेतलाल यादव**
गिरिडीह झारखंड

## "बहुत दर्द होता है"

जी हां !
दर्द होता है
बहुत दर्द होता है !
कानों के साथ-साथ
सीधे सीने में होता है,
जब कोई महिला
भरे पंचायत में
अपनी पड़ोसन को
चिल्ला-चिल्लाकर
डायन कहती है,
जब कोई अपने ही
सगे भाई की
कर देता है हत्या
भतीजा केस करने
पहुँचता है थाना,
जब कोई बूढ़ी माता
आँचल से आँसू पोछ
सिसकियां भरते हुये

व्यथा सुनाती है
गाँव के पंच परमेश्वर को ,
जब कोई जवान पुत्र
बाप से करता है सवाल
बढ़ जाता है बवाल
कहता है, कुछ नहीं किये
आप मेरे लिये ,
जब कोई रोगी
डॉक्टर के सामने
पर्ची के इंतजार में
तड़प-तड़पकर
दम तोड़ देता है ,
दर्द तब और बढ़ जाता है
जब देखता हूँ
कुछ बच्चों के हाथों में
किताबों की जगह
कूड़ा बीनने वाला थैला
यह सब देखकर
बहुत दर्द होता है
बहुत दर्द होता है ।।

# सारिका भूषण की कविताएँ

## "कंक्रीट"

तुम जंगल में
घूमना चाहते हो
तुम्हें हरियाली बहुत पसंद है
पर नहीं चाहते कि
तुम्हारे कपड़ों पर मिट्टी के दाग लगे
या पैरों पर कीचड़ ।
तुम्हें संगीत बहुत प्यारा है
झील - झरने तुम्हें
आकर्षित करते हैं
पर तुम्हें झींगुर की आवाज़
सोने नहीं देती
कीट - फ़तिगों की फड़फड़ाहट से
तुम्हारी भौहें सिकुड़ जाती हैं
गंधवा पिल्लुओं की गंध
तुम्हें उस जगह को छोड़ने पर
मजबूर कर देती है ।
तुम शांति की खोज में
प्रकृति की गोद ढूँढते हो
और तुम्हारे बच्चों को
नदियाँ और समुद्र
सिर्फ़ वॉटर स्पोर्ट्स या पिकनिक के लिए
आकर्षित करते हैं ।
इसीलिए तो तुम
पेड़ -पौधे और जीव - जंतुओं के छुअन को
महसूस नहीं कर सकते
पेड़ों की पत्तियाँ
तुम्हारे स्पर्श से लाजवंती बन जाती हैं
और तुम्हारी आत्मा
बन जाती है कंक्रीट
ठीक वैसे ही
जैसे तुम्हारे घर के बाहर बालकनी में
और घर के अंदर डेकोरेटिव गमलों में
लगे पौधे सांस नहीं लेते
हाँ ! कभी मुरझाते नहीं
तो कभी मुस्कुराते भी नहीं
क्योंकि
वे और तुम्हारी आत्मा
दोनों आर्टिफ़िशल हैं
और तुम बन चुके हो
पूरे कंक्रीट ।

## "गृहिणी और नायिका"

बहुत बातें करते हैं
रसोईघर के चूल्हे और बरतन
मसालों की छौंक
और दाल के तड़कों की आवाज़ में
छिपा रहता है
गृहस्थी का स्वाद
और
खाना पकाती स्त्री
समझ लेती है
रिश्तों की बुनियाद
आत्मा की फ़रियाद
और
पूरी तरह पक कर बन जाती है
वह एक कुशल गृहिणी
और समाज की नायिका

## "माँ का मुस्कुराना"

पिता बहुत सीधे हैं
रिश्वत नहीं लेते
किसी से उधार भी नहीं लेते
अपने उसूलों से चलते हैं
किसी की सलाह काम नहीं आती
माँ चिंतित रहती है .....
पिता थोड़ा ज़िद्दी भी हैं
बिलकुल आसमान के चाँद की तरह
अपनी मर्ज़ी से दुनिया देखते हैं
कभी पूरी आँखें खोलकर
तो कभी अधखुली आँखों से
हमें लगता छल कपट समझ नहीं पाते
पर माँ चिंतित रहती है .....

पिता बहुत स्वाभिमानी हैं
तीन - तीन बेटियाँ हैं
तीन बहनों की भी शादी कर चुके हैं
बोलते हैं कन्यादान से बड़ा पुण्य नहीं
मैंने पूछा दान आख़िर करना क्यों
हर विषय को अच्छी तरह पढ़ा लेते हैं
पर इस विषय पर मौन रहते हैं
पर माँ चिंतित रहती है .....

पिता अडिग रहते हैं
माँ की चिंताएं जब फूट पड़ती है
आँखों से दिखने भी लगती है
पर पिता को विश्वास है
अपनी सच्चाई , ईमानदारी औरराम पर
पिता पाठ करते हैं और हमें शिक्षित
करते हैं
और तब हम निकल पड़ते हैं
अपनी कोटरों से बाहर पंख फैलाने को
पर माँ चिंतित रहती है .....

पिता मुस्कुराते हैं
सीना चौड़ा कर माँ को देखते हैं
माँ तो माँ है
अब भी चिंता करती है
पर जानती है उस वट वृक्ष को
जिसके साथ वह भी खड़ी है
फिर अपनी चिड़ियों को आसमान में
उड़ता देखकर
तब माँ मुस्कुरा उठती है ।

## काव्य

**शीतल शैलेन्द्र "देवयानी"**
इंदौर

### "जब जब हम मुस्कुराते हैं"

जब जब हम मुस्कुराते हैं,
क्या कहे कितनी दर्द छुपाते हैं,
कैसे साहस जुटाया
कैसे संघर्ष पथ पर
स्वयं को तैयार कराया,
हमारी हिम्मत को देखकर
सब वाह-वाह कर जाते हैं,
जब जब हम मुस्कुराते हैं।
अग्रिम जमानत खुद को दी हमने,
जब चंड-मुंडो पर प्रहार कर,
हम अपनी लाज बचाते हैं,
और सिर उनका,
कलम कर जाते हैं,
तब सब जोर-जोर से
ताली बजाते हैं,
जब जब हम मुस्कुराते हैं।
भीड़ का हिस्सा नहीं
न ही कोई पुराना सा ही,
किस्सा है,
हम अपनी पहचान,
अपने रास्ते
खुद अपनी ही शर्तों पर,
बनाते हैं,
और उन कठिन रास्तों पर
चलकर दिखलाते हैं,
तब-सब हमारे सामने,
शीश झुकाते हैं,
जब जब हम मुस्कुराते हैं।
कठिन रास्ते, कठिन डगर,
कंकर पत्थर कितने ही
लोग राह में हमारी,
बिछाते हैं,
पर चुन कर उन्हे,
राहों से हम अपनी,
अग्नि पथ पर चलते जाते हैं,
देख हमें तब पुरुषो के भी
अश्रुडोल्यांचो में,
सुशोभित हो जाते हैं,
जब जब हम मुस्कुराते हैं।।

**रेखा शाह आरबी**
बलिया (यूपी )

### "संधि पत्र"

जीवन की उबड़ खाबड़
धरा को चाहूं
सिर्फ समतल प्रदेश
ए जिंदगी तुझसे तो
ना चाहा कुछ विशेष
रोक कर बैठे हैं
राग प्रीत का परिवेश
सर्वस्व इच्छाओ के होते
घूमते बैरागी सा भेष
ए जिंदगी तुझसे तो
ना चाहा कुछ विशेष
कुसुमो से नर्म हृदय का
पत्थरों से संधि किए हैं
जिम्मेदारियों के हाथ
यह संधि पत्र भर दिए
ना पकने दिया खुद में कहीं
प्रेम प्यार के अवशेष
ए जिंदगी तुझसे तो
ना चाहा कुछ विशेष
घिरे रहे समुंदरों से
फिर भी प्यास अधूरी रही
खारे पन और मीठे पन की
हल्की सी दूरी रही
जिंदगी से मिलता रहा
अपरिवर्तनीय संदेश
ए जिंदगी तुझसे तो
ना चाहा कुछ विशेष

**मीरा सिंह "मीरा"**
बक्सर ,बिहार

### "मील का पत्थर"

कर सकते हो मुझे अनदेखा
आखिर तुमने कैसे सोचा
शिला नहीं मैं रास्ते की
तुम जो मुझे हटा दोगे
मील के पत्थर को
कैसे तुम अनदेखा करोगे
जहां भी रहूंगी मैं
अपनी चमक बिखेरूंगी
अपनी सांसों की खुशबू से
हवा सुगंधित कर दूंगी
आंखें मींचकर कभी
फुर्सत में जब तुम बैठोगे
सच कहती हूं उस वक्त
अपनी पुतलियों के बीच
मेरी छवि ही देखोगे
मेरा अस्तित्व भला
कैसे नकार सकोगे
तुम्हीं ज़रा सोचों
भोर की किरणों को
अपनी मुठ्ठियों में
कैद कर सकोगे
यह हो सकता है
मुझे बुझाने की
कोशिशों में तुम
अपने हाथ जला लोगे
सिर धुनोगो पछताओगे
हताशा के क्षणों में
कभी खुद को कोसोगे
पर मील के पत्थर को
क्या कभी नकार पाओगे

**अर्चना तिवारी**
वरोदा ,गुजरात

## “ जिंदगी के रंग”

पल-पल बदलती है जिंदगी
हँसाती है एक पल में तो
रुला जाती  दूसरे पल में

बदल रहे हैं कुदरत के नजारे
बदल जाते हैं लोग भी
दूरियां होती है जब जब
फीके पड़ जाते हैं दोस्ती के रंग

चाहती हूं रंग भर समेट लूं
पर रिश्तो के रंग खत्म होने लगे हैं
छोड़कर इन यादों को
चलो पन्ने कुछ नये लिखते हैं

तलाश खुद की करने अब
हम निकल पड़ते हैं
हुई नफरत बहुत अब तो
हाथ स्नेह की बढ़ाते हैं

कुछ कदमों का फासला रह गया है
चलकर उन फासलों को मिटाते हैं
पहल हम करें या तुम
फर्क क्या पड़ता है
चलो रुकावटो को साथ मिल
हम हटाते हैं

जिंदगी का क्या  भरोसा
साथ   साथ चल इसे
आसान बनाते हैं

**ड़ा .नीना छिब्बर**
जोधपुर

## “नींद चुरा ली है”

दरकते रिश्तों ने परिवारों की
बिखरतें परिवारों ने  समाज की
सामाजिक विघटन ने नैतिकता की
नैतिक पतन ने मानव जाति की
नींद चुरा ली है ।।

अह्मवादी सिद्धांतों ने मनुष्यता की
मानवीय क्रोध ने सहजता की
लोभ लालच ने ईमानदारी की
वर्गभेद ने  इंसानियत की
नींद चुरा ली है ।।

चूहादौड़ ने आत्मिक शांति की
मशीनों ने मानवीय स्मरण शक्ति की
आधुनिकता ने सांझी छत की
माल बाजारों ने  हाट बाजारों की
नींद चुरा ली है ।।
ईर्ष्या ने अपनत्व की
धनलिप्सा ने भाईचारे की
स्वार्थ ने सामंजस्य की
कुंठाओं  ने स्व अनुशासन की
नींद चुरा ली है।।

**श्वेता दूहन देशवाल**
मुरादाबाद उत्तर प्रदेश

## “जिंदगी एक लूडो “

ये जिन्दगी एक लूडो का ही खेल है,
कभी हँसाती कभी रुलाती,
हर दम आगे को बढ़ने को कहती,
जितना ही हम आगे बढ़ते ,
प्रतिद्वंदी हमारे हमें पीछे करने की
कोशिश करते।

कोशिश करना हार न मानना,
गिर गिर कर उठना फिर सँभलना,
पाने को लक्ष्य अपना आतुर रहना,
न आ जाए जब तक छ: दिल का
धड़कना,
यही तो जिन्दगी का भी उसूल है।

बिछी बिसात लूडो की,
कोरवो और पाण्डवो का खेल हुआ
पासो पर थी उम्मीद टिकी,
रोम रोम रोया द्रोपदी का,
जब उसका चीर हरण हुआ।

कहता है लूडो सुनो दोस्तो,
ना अवसर कोई हाथ से जाने दो,
चूक गये तो पीछे रह जाओगे,
बन कठपुतली दूसरो के हाथो की,
जीवन का एक खेल बन रह जाओगे।

डॉ.लक्ष्मीकांत शर्मा

काव्य

रवींद्र कुमार शर्मा
बिलासपुर (हि प्र)

## "नदी है वो ,सोचती सी"

वो नदी है ,
पयस्विनी...
गहरी ,खामोश और उद्दाम
क्षितिज के प्रतिबिम्ब को घेरे
कभी विलुप्त ना होने के संकल्प के साथ !!
कल-कल बहने लगेगी तीव्र अविरल धार के साथ !!

वो गीत है ,
रागमालिका....
ठुमरी, दादरा और तराना
कीर्तन की सी पावनता समेटे
निश्शब्द चीड-बन में पंचम स्वर लगाते हुए !!
प्रतिध्वनित होगी कभी बागेश्री का श्रृंगार गाते हुए !!

वो रंग है ,
इन्द्रधनुषी....
कंगन ,मेहँदी और चित्रकारित
नाचते मोर के पंखो को रंग बांटते
इन नीरव काली रातों में सपन भिगोती सी !!
महकी सुबह के नारंगी सूरज को हाथों में संजोती सी !!

वो फूल है,
सूरजमुखी.....
महुवा ,सुपर्णा और सोनजूही
हवाओं में पावन सुगंध भरते
बादलों में बीजेगी गंधमादन की केसर क्यारियाँ !!
मन-मरुस्थल में खिल उठेंगी अनगिनत फुलवारियां !!

हाँ ,वो प्यास है
शाश्वती....
पीर ,ताप और अज्ञात
नित नए यायावरी आयामों को छानती
खिलखिलाएगी कभी, कविता बनकर महक उठेगी !!
गुडहल सी सुर्ख आँखों में चैती– पलाश सी चहक उठेगी !!

हाँ प्रेम है वो,
मनुहारिणी....
मधुबन ,चन्दन और समर्पण
कजरी चितवन के मोह-पाश से मन बांधती
रंगहीन बसंत के लिए अमलतासिये रंग चुराएगी !!
रेगिस्तान के वितान कैनवास पर मोतियों से तारे सजाएगी !!

## "आजकल कहाँ खो गया वो आम आदमी"

आजकल कहाँ खो गया वो आम आदमी
गुम सा कहीं हो गया वो आम आदमी

माचिस की तिली हाथों से ढक कर जलाता था
उससे फिर अपनी बीड़ी सुलगाता था
घास की गठरी सिर पर उठाता था
फ्री का लेने से बहुत घबराता था

कहीं भी आना जाना होता था
पैदल ही निकल जाता था
पांव में होती थी टायर की बनी चप्पल
पैबंद लगे कपड़ों में दूर से नज़र आता था

भगवान से जो बहुत डरता था
रिश्तों की बहुत कद्र करता था
खेत में पसीना जो बहाता था
अपने भाईयों के लिए जो मरता था

सुबह से शाम तक जो हल चलाता था
थकाहारा शाम को जब घर आता था
साहूकार से पैसे लेकर चलाता था घर बेशक
तब भी जीने का मजा बहुत आता था

बैंकों से लोन लेने में घबराता था
लिया कर्ज़ समय पर चुकाता था
शर्म हया खुद्दारी दौलत थी उसके पास
सभी के सामने सिर झुकाता था

जितनी चद्दर होती थी उसकी
उतने ही वह पांव फैलाता था
रूखी सूखी खाकर करता था गुज़ारा
अपनी झूठी शान नहीं दिखाता था

बहुमंजिली इमारतें हो गई हर तरफ
इनके आगे अपने आप को बौना समझता है
घास के बिछौने पर आ जाती थी नींद
आज मखमली गद्दों पर नींद को तरसता है

लालच नहीं था उसके मन में
उसी में जीता था जो था उसके पास
छल कपट से दूर साफ मन था उसका
तंगी में भी नहीं होता था उदास

चाहता है सब कुछ फ्री उसे मिले
कितना बदल गया है अब आम आदमी
आजकल कहाँ खो गया वो आम आदमी
गुम सा कहां हो गया वो आम आदमी

**प्रोमिला भारद्वाज**
चण्डीगढ

## "चाँद "

खुली खिड़की से , झाँका यूँ चाँद,
चुपके से, अधखुली आँखों में
उतर आया धीरे-धीरे, ह्रदय में समाया
भिन्न-भिन्न रूप धर,
सुन्दर सलौने, कुछ ऐसे-ऐसे।
एक पल को लगा,
हो चाँद प्याला अमृत भरा,
उमंगों ने बाहें बढ़ाई,
उठाया, पी लिया ,अमर हो गए।

दुसरे क्षण लगा, हो चाँद बोरा,चाँदनी भरा,
उत्कण्ठाओं ने डोर फैंकी
खींचा, खोला, उँडेला,उजास बन गए।

अगले क्षण लगा, हो चाँद
बिंदीया अम्बर की,इच्छाओं ने छलाँग लगाई,
लपक के ले आई,सजाई, चहके अम्बर हो गए।

कभी लगा, हो चाँद कसोरा, चीनी भरा
ललचाया मन, उड़ा, ले आया,
प्रेमरस घोला, चाशनी बना पीया
मधुरस में भीज-भीज, अन्तस माधुर्य बन गया।

फिर लगा, है चाँद गोला,चमकता बर्फीला,
कण-कण तपता,जन-जन तड़पा,
पाने को पुकारा, सबने निहारा,
उड़ान भरी, शीतलता में डुबकी लगा आए
पिघली चाँदनी बरसी जग उज्जवल हुआ,
अब शांत हो गए ।

खुली खिड़की से,
झाँका यूँ चाँद, चुपके से
अधखुली आँखों से
निहार-निहार उसे
हम चाँद हो गए।



**रंजना फतेपुरकर**
इंदौर

## "गुलाब"

सुर्ख़ गुलाबों के मुस्कराते ही
तुम्हारी यादों की महक बिखर गई
और याद आने लगे वो
गुलाबी लम्हे
जब तुमने कहा था

अगर मेरी यादें झीने कोहरे की
धुंध में ओझल होने लगे
तब तुम देख लेना ओस में
नहाया भीगा गुलाब
जो कहेगा तुमसे
तुम्हें याद कर मेरी आँखों
में भी नमी छलक आई है

गुलाब की महकती झील में
तुम्हारी प्यारी सी तस्वीर
निखर आई है

गुलाब की कलम से
गुलाब की पंखुरियों पर
जो खत लिखे तुम्हें
वो इबारत आंखों के काजल से
बहकर ख़्वाबों की खूबसूरत
देहलीज़ पर उतर आई है

जल्दी ही मिटा देंगे ये दूरियां
इन यादों के गुलाबों को
मुरझाने न दूंगा

इंतज़ार है उन पलों का
जब अपने गुलाब को
गुलाब का ही नज़राना दूंगा

**डॉ अरुण तिवारी गोपाल**
कानपुर नगर,उत्तर प्रदेश
सम्पर्क सूत्र-8299455530

## "भारतीय नारी के कुछ चित्र"

**गीत-1**
(मजदूरिन/किसानिन का एक चित्र)

रतीराम  की दुल्हन काटे चढ़े क्वाँर की धान!
बरसाती जमुना सी , जूडा पूरा  खोले है  ।
फसल काटती फ़सल फसल से जादा डोले है ।।
हिरनी सहमे मेड़ पर खड़ा ताक रहा शैतान ००1

धान नहीं वो खून पसीना नुनने आई है  ।
बिटिया का गौना,अम्मा की यही दवाई है ।।
नहीं मिले मजदूर अकेले जुटी लगाये जान००२

कोंछे से ही पोंछ पसीना,बिजना कर लेती ।
छांह हमारी दुश्मन हमको कहाँ छांह देती ।।
हंसे पीठ पर दबा पेट है कितना बेईमान ०3

बूढ़ा बाल रंगे भौजी कहकर खीसें बाये ।
सरके बिस्तर की बातों के नश्तर सरकाये ।।
रतीराम को दूर भेज मंगवाए बीड़ी पान०4

**गीत-2**
(भूमिहीन घुमंतू खानाबदोशी नारी का स्वाभिमानी चित्र)

भरगड्डा,की मोड़ी!
चलते हंसते बतियाये,वो,मुरका-मुरका ठोड़ी!भरगड्डा की मोड़ी!

ताड़न वालों की ताड़ी है।
रूप लदी,खुश्बू गाड़ी है।।
जितना ढांके,उतना झांके,यौवन होड़ा-होड़ी!
भरगड्डा की मोड़ी!

चट चौबे की बीड़ी ला दे।
रोती मुनिया चुप करवा दे।।
कमसिन-कमसिन,जादू है वो,आफत,थोड़ी थोड़ी!
भरगड्डा की मोड़ी!

चीटा चाटें,डली नहीं है।
बिन काँटों की कली नहीं है।।
बिल्ली से डरते वो कुत्ते,जिनकी नोची ठोड़ी !
भरगड्डा की मोड़ी!

**गीत-3**

(विश्व में चक्रवर्ती राजरानी के अभिशप्त अभिजात्य नारीत्व का चित्र)

फिर अजुध्या खिलखिलाई ।
फिर लला ने गोद पाई।।
मैं रही हरदम अभागिन फिर अभागिन ही कहाई

सास माँ होती नहीं है भोग कर मैं कह रही हूँ ।
देह भर हूँ पर न अपनी उनकी वैदेही रही हूँ।।
दोनों घर की मालकिन मैं दोनों घर में थी पराई ००1

घर की सीता को बलायें पूजते बाहर शिलायें ।
घर में रावन राम बाहर तारो सबरीं अहिल्यायें ।।
दिल में पहले से धरी थी बात धोबी की बताई ०2

कैसे रखलें मनपे पत्थर अबतो मनही हुआ पत्थर
झूठ कहते संगिनी तुम सिर्फ दासी सिर्फ बिस्तर ।
सूरजों तेरे अंधेरों मैं उमर भर बिलबिलाई ००3

बाप पति बेटों के घर में मैं रही हरदम सफर में ।
सांचको क्याआंच बहनों छलजलेगा जलके घरमें
लखन रेखायें शरम से खुद धरा में हैं समाई ००4

**गीत-4**

(शहर क्या, गाँव तक में आधुनिक नारी का दमदार चित्र)

गाँव की अब लड़कियाँ
धूप ने फैली चुनरिया के उड़ाये रंग हैं,
स्वप्न के सब रँग रँगी हैं,गाँव की अब लड़कियाँ..

नून लकड़ी,तेल है जिस हाथ,उसमें ही गजट है
घूरती हर आँख की अनदेखियों में अग्नितट है
क्या धनुर्धर ?जो प्रिया,सम्पत्ति जैसी बाँट लें,
प्रेम में यम से भिड़ी हैं लकड़हारी लकड़ियाँ..1

एकचिड़िया स्वाभिमानी गगन तक पर खोलती है
पौरुषी उत्तेजना का धैर्य सच्चा  तोलती है
पत्थरों ने कब नदी के धैर्य पर खीसें न बाँयीं,
वर्जनायें तोड़ आयीं गाँव की अब लड़कियाँ..2

देह से उठ-काठ-हाँडी,चिर पुनर्नव-शुचि हृदय है
हैं स्वयं नवगीत जिसमें,नवल गति,नवछन्द लय है
जिंदगी के पर्व में उत्साह का अतिरेक जीती हैं,
हवा सी उन्मुक्त जीतीं,गाँव की अब लड़कियाँ ..3

## काव्य



### समीर उपाध्याय

सुरेंद्रनगर,गुजरात

## "हिंद के सिर का ताज़ है हिंदी"

हिंद के सिर का ताज़ है हिंदी।
हिंदवासियों का नाज़ है हिंदी।
आवाम का जज़्बा है हिंदी।
राजभाषा का रुतबा है हिंदी।

आफ़ताब की आब है हिंदी।
पूर्णिमा का चांद है हिंदी।
शिखर की ऊंचाई है हिंदी।
जलधि की गहराई है हिंदी।

तुलसी की क्यारी है हिंदी।
पूजा की थाली है हिंदी।
अमृत का कलश है हिंदी।
कुंकुम का तिलक है हिंदी।

कोयल का कूंजन है हिंदी।
भौंरे का गुंजन है हिंदी।
वृक्षों की घटा है हिंदी।
दामिनी की छटा है हिंदी।

बहार-ए-हुश्न है हिंदी।
नियाज़-ए-इश्क़ है हिंदी।
नर्मी-ए-गुफ़्तार है हिंदी।
काबिल-ए-दाद है हिंदी।

स्वरों-व्यंजनों की गागर है हिंदी।
शब्दों का सागर है हिंदी।
गीतों की माधुरी है हिंदी।
संगीत की सूरावली है हिंदी।

कवियों की कारीगरी है हिंदी।
कलम की जादूगरी है हिंदी।
हास्य की फुहार है हिंदी।
व्यंग्य का कटु प्रहार है हिंदी।

गुलामी की व्यथा है हिंदी।
शहीदों की गाथा है हिंदी।
रणभेरी का नाद है हिंदी।
आज़ादी का साद है हिंदी।

तुलसी की भक्ति है हिंदी।
कबीर की क्रांति है हिंदी।
मीरा की पदावली है हिंदी।
रहीम की दोहावली है हिंदी।

उल्फ़त का उद्गार है हिंदी।
ख़यालो का इज़हार है हिंदी।
ईश्वर की इबादत है हिंदी।
रब की इनायत है हिंदी।

जन-जन को जोड़ती है हिंदी।
अवरोधों को तोड़ती है हिंदी।
जनसंपर्क की भाषा है हिंदी।
विश्व-भाषा की आशा है हिंदी।

### पंकज मिश्र 'अटल'

जवाहर नवोदय विद्यालय,
सरभोग,बरपेटा(आसाम)

## "अब कितने संवाद रचें"

रातें अंक
हुईं जीवन का,
दिवस कथाओं से लगते।
सांझ घिरी
तो लगता मानों,
पल-पल अन्तर्मन छलते।
भीगे-भीगे
इस जीवन में,
अब कितने संवाद रचें।
सबकी आंखों
में मैं दिखता
बोलो कैसे आज बचें।

अपनी ही
परिभाषा गढ़ते
बीते कितने वर्ष यहां।
और स्वयं में
बनते मिटते,
पिघले कितने दर्प यहां।
खुद को
पढ़ते-पढ़ते सच में,
दोपहरी की भांति खिंचे।

एक-एक दिन
सच होना भी,
लगता सचमुच सपना है।
भरी भीड़ में
किसको बोलूं,
कौन यहां अब अपना है।
बोझिल
नज़रों से तब बचता,
जब गुर्राती आंख मिचे।



### राजेश बनारसी बाबू

उत्तर प्रदेश वाराणसी

## "वर्षा ऋतु और किसान की उम्मीद"

उम्मीद की किरण नजर आई है,
किसान के घर खुशहलाई आई है
भगवान ने जैसे आज लाज बचाई है।
बच्चे भूख से तड़प रहे।
रो रो के भूख से बिलख रहे
शायद आज कुछ अच्छा हो
लगता जैसे कुछ परिकल्पना हो
आशा की किरण नजर आई है।
फसलों में जैसे खुशहाली छाई है।
बादल शायद आज गरज रहे
जैसे लगता आज बर्षा ऋतु आई है।
धान की फसल मुस्कुराई है।
आज जैसे लगता है बारिश
की फिर से उम्मीद छाई है।
किसान तन ढकने को तरस रहा
बेवश नजरो से से सबको देख रहा?
आज ये कैसे स्थिति आई है
आज बारिश से फिर एक बार
धान की फसल मुस्कुराई है।
आज लगता है बारिश की
उम्मीद नजर आई है।
फसल पानी से तड़प रहा
आशा की नजरों से देख रहा।
किसान भी आज उघड़े बदन
को कैसे आज ढक भी रहा
भूखे बच्चे खाना मांग रहे।
लाचार मांँ को जैसे ताक रहे।
यह कैसी विडम्बना आई है।
यह कैसी भुखमरी और गरीबीछाई है?
अन्न जन्म दाता के ही घर,
आज कैसी भुखमरी छाई है
आज उम्मीद की किरण आई है,
मरते किसान के पास आज
जिंदगी जैसे नया सवेरा लाई है
किसान के हाथ जैसे कांप रहे,
बच्चे भी खाली बरतन जैसे ताक रहे?
परिवार आज भूख से तड़प रहा
बारिश भी झमाझम बरस रहा
वर्षा ऋतु जैसे अब आया है
लगता जैसे कोई त्योहार अब छाया है।
किसान के हाथ भी जैसे कांपरहे?
हल भी हाथ में ना आ रहे
लोगो को बेबस नजरो से देख रहा
उघड़े बदन को कैसे कैसे आज ढक भी रहा।
भूखे बच्चे खाना मांग रहे?
लाचार मांँ को कैसे ताक रहे?
यह कैसी विडम्बना आई है?
यह कैसी भुखमरी और गरीबी छाई है?
अन्न जन्म दाता के ही घर
आज कैसी भुखमरी छाई है
आज उम्मीद की किरण आई है
मरते किसान के पास
जिंदगी की नई किरण नजर आई है।

**डॉ० कुसुम रानी नैथानी**
माणी गृह 318 ए ओंकार रोडचुक्खुवाला
देहरादून (उत्तराखंड)001 248

बाल कहानी

# "तोते की बुद्धिमानी"

घनेवन में एक ऋषि बहुत समय से तपस्यारत थे। एक तोता रोज उधर से गुजरता। ऋषिको इस तरह तपस्या करते देख उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। वह अक्सर गुफा के सामनेबैठकर उन्हें मंत्रजप करते देखता। धीरे-धीरे उनके साथ वह भी कुतूहलवशमंत्र दोहराने लगा। ऋषि को तोते के मुंह से मंत्र सुनकर बहुत अच्छा लगा।उसने ऋषि के साथ रहकर कई सारे मंत्र कंठस्थ कर लिए । वह दोपहर में ऋषि केभोजन के लिए दूर दूर से सुंदर और स्वादिष्ट फल लेकर आता। ऋषि को तोते से लगाव हो गया था ।आसन से उठने के बाद यदि उन्हें तोता आसपास नहीं दिखाई देतातो वह परेशान होकर उसे पुकार में लगते ।ऋषि की संगत में रहकर तोता भीबहुत विद्वान हो गया था। वह अक्सर उनसे गहन विषयों पर चर्चा करता । यहदेखकर ऋषि बहुत प्रसन्न होते ।एक दिन ऋषि बोले-" तुम एक पक्षी होकर भी कितनी गूढ़ बातें सोचते हो। यह जानकर मुझे बहुत अच्छा लगता है।"" ऋषिवर यह सब आपकी अच्छी संगति का परिणाम है ।नहीं तो मैं ये बातें कहां से सीख पाता?"

तोते की बातों से ऋषि बहुत प्रभावित हुए। इस दौरान ऋषि ने वन में तपस्याकर कई सारी साधनाएं सिद्ध कर ली थी। उनकी संगति में रहकर तोते ने भी कुछमंत्र और साधनाएं सीख ली ।वह ऋषिवर का पूरा ख्याल रखता था और उनके भोजन कीव्यवस्था खुद ही करता ।

एक दिन तोता फल लाने के लिए वन से बहुत दूर राजमहल के बगीचे में पहुंच गया। उसकी सुंदरता देखकर वह आश्चर्य चकित था।खुशी के मारे उसके मुंह से मंत्र फूटने लगे। संयोग से उस समय महाराज वन मेंटहल रहे थे। एक तोते के मुंह से मंत्रोच्चार सुनकर महाराज अचंभित थे। उनसे न रहा गया उन्होंने बगीचे से एक कच्चा फल तोड़कर तोते की ओर फेंका। फलसही निशाने पर लगा और उसकी चोट से तोता बेहोश होकर पेड़ से नीचे गिर पड़ा।महाराज ने तोते को उठाया और उसके पैर में एक डोरी बांधकर और उसका दूसराछोर पेड़ की डाल पर बांध दिया जिससे वह उड़कर न जा सके। वे इस विलक्षण तोतेको अपने पास रखना चाहते थे। कुछ समय बाद तोते को होश आया। अपने पैरपर डोरी बंधी देखकर उसे बड़ा दुख हुआ ।वह वहां से आजाद होने का उपायसोचने लगा। महाराज ने तोते के पैर पर डोरी बांधने में तीन गांठें लगाईथी। तोता विनती करते हुए बोला-" महाराज मुझे आजाद कर दे ।मुझ से बहुत बड़ी गलती हो गई जो मैं आपसे इजाजत लिए बगैर यहां आ गया।"

" मैं तुम्हें आजाद नहीं कर सकता तुम एक विद्वान पक्षी हो ।तुम्हारे मुंहसे मंत्र सुनकर मैं अचंभित रह गया। तभी मैंने तुम्हें बंदी बनाया है। मैंतुम्हें यहीं महल में रखूंगा।"

" क्षमा करें महाराज जैसा आप सोच रहे हैंमैं वैसा नहीं हूं ।फिर भी अगर आप मेरी शर्त मांगने तो तैयार है तो मैंआपकी तीन जिज्ञासाएं शांत कर सकता हूं।" "पहले अपनी शर्त बताओ ।"

"आपको हर प्रश्न के साथ मेरे पैर की एक गांठ खोलनी होगी।" "ठीक है मुझे तुम्हारी शर्त मंज़ूर है ।"

महाराज ने पहली गांठ खोली और बोले-" सच सच बताओ तुम कौन हो ?" "महाराज मैं यहां से दूर घने वन में रहने वाला एक साधारण तोता हूं।"दूसरी गांठ खोलते हुए महाराज ने प्रश्न किया-" तुम उस घने वन से इतनी दूर मेरे बगीचे में किस उद्देश्य से आए हो?"

" महाराज मैं वन में तपस्यारत ऋषिवर के लिए फल लेने यहां आया था । मैंरोज उनके भोजन की व्यवस्था करता हूं । मुझे हां न पाकर आज वे बड़े परेशानहो रहे होगे।"बड़े शांत भाव से उनके प्रश्न का उत्तर देते हुए तोता बोला।महाराज ने उसके पैर पर बंधी तीसरी गांठ खोली और बोले-" मैं तुम्हें बगीचे से फल चुराने के अपराध में मृत्युदंड दे सकता हूं। तुमने इसके बारे में क्यों नहीं सोचा?"

"महाराजआप मेरी मृत्युदंड की घोषणा कर सकते हैं पर मृत्युदंड दे नहीं सकतेक्योंकि मैं अब आपका बंधक नहीं हूं । मैं अब खुले आकाश में विचरण करने वालातोता हूं ।"इतना कहकर उसने उड़ान भरी । महाराज ने उसे पकड़ना चाहा लेकिनतब तक वह उनकी पहुंच से बहुत दूर निकल गया था।

गुफा में ऋषि तोते का बड़ा बेसब्री से इंतजार कर रहे थे ।उसे दूर से आता देखकर वे प्रसन्न हो गए और बोले - "आज तुमने आने में बहुत देर कर दी ।"

तोते ने उन्हें अपनी आपबीती सुना दी और बोला-" ऋषिवर आपकी संगति में रहकर मैंने जो कुछ सीखा था उसी के कारण आज मैंमहाराज के चंगुल से बचकर वापस आया हूं लेकिन मुझे एक बात का बहुत दुख होरहा है ।"

"कौन सी बात?"ऋषि ने आश्चर्य से पूछा ।

"मैंने महाराज सेकहा था मैं उनकी तीन जिज्ञासाएं शांत कर सकता हूं फिर उन्होंने मुझसे इतनेसरल और व्यावहारिक प्रश्न क्यों किए?वे मुझसे ज्ञान की बातें भी पूछ सकतेथे ? क्या उन्हें आपसे सीखे हुए मेरे ज्ञान पर संदेह था?" उसकी बात सुनकरऋषि मुस्कुराए और बोले - "महाराज को तुम्हारे ज्ञानी होने पर नहीं अपनीविद्वता पर संदेह था। जटिल प्रश्न पूछ कर वह अपने आपको तुम्हारे सामने छोटासिद्ध नहीं करना चाहते थे । तभी तो अपने अल्प ज्ञान और अदूरदर्शिता केकारण उन्हें तुम जैसे विलक्षण तोते से हाथ धोना पड़ा।

**डॉ. सुरेन्द्र दत्त सेमल्टी**
टिहरी गढ़वाल - 249122(उत्तराखंड)

**बाल गीत**

## " खाक हो रहे जलकर जंगल "

कैसे कर होगा जग का मंगल ,
खाक हो रहे जलकर जंगल !

जड़ी - बूटियाँ हो रही हैं राख ,
चिकित्सा में थी जिनकी धाक !

फल-फूल घास-पात की डाली ,
कितनी सुन्दर थी सब पाली !

मेहनत कर जो पौध उगाई ,
आग की भेंट चढ़ रही वह भाई !

जीव-जन्तु भी बच नहीं पाते ,
कुछ अपंग बन जीवन बिताते !

आग को लगाने वाले कौन ,
जब पूछो तब सब होते मौन !

रहते सबके बीच मे हैं खड़े ,
पर होते हैं ढीठ वे बहुत बड़े !

पेड़ - पौधे जो धरती के श्रृंगार ,
जलकर हो रहे हैं सब अंगार !

जलश्रोत भी सारे सूखकर नष्ट ,
यह सब देखकर होता कष्ट !

हैं इस काम के अपराधी जो ,
कठोर सजा के अधिकारी ओ।

बनायें इसके सब कानून कठोर ,
दिखे हरियाली जो चारों ओर।

आयेगी धरा पर फिर खुशहाली ,
हर चेहरे पर दिखेगी लाली।

---

**काव्य**

## “तुम्हारे लिए”

मैं तुम्हारा गीत गुनगुनाना चाहती हूँ!
सुबह से शाम आँखों में भरना
चाहती हूँ!
तेरे लबों से निकली बात को
होठों पर लेना चाहती हूँ!
पर जब भी कोशिश करती हूँ
कि तुम्हें डिस्टर्ब न करूँ....
और नजदीक हो जाती हूँ!
तेरी आँखों में जो प्यार पहले
था वही अब भी पाती हूँ!
न मैं बदल पायी न कभी तुम बदल पाये!
प्यार का यही सिल सिला सदा पाती हूँ!
दिमाग कहीं और लगाना चाहूँ
नहीं लगा पाती हूँ!
मैं जानती हूँ तू और मैं बहुत व्यस्त हैं!
जिम्मेदारियों में जकड़े हुए
बहुत अस्त व्यस्त हैं!
फिर भी याद दिला जाती हूँ अपनी प्रीत
की!
करती हूँ तुम्हारे ऊपर ढेर सारा
विश्वास ओ मनमीत!
वक्त की कमी तेरे पास भी मेरे पास भी!
फिर ये जिंदगी की रवायतें भी
बड़ी सख्त है!
गलती न तेरी है न कभी मेरी है!
बस तेरी भी और मेरी भी प्रीत
बहुत घनेरी है!

**सुनीता तिवारी**

## “औकात”

क्या है औकात मेरी
और क्या लिख जाऊँ मै
खुद से बोलू खुद से पूछूँ,
पर जवाब न पाऊँ मै
हर पल जोड़ती हूँ खुद को मैं,
पर मुझे तिनको सा
बिखेर जाते क्यों हो?
कोशिशों से पा लेती हूँ
मैं मज़िल अपनी
मेरी कामयाबी से तुम
घबराते क्यों हो?
अपमानित करते हो मेरे
वज़ूद को प्यार का वास्ता देकर
ये झूठा हक़ तुम मुझ पर
यूँ ही जताते क्यों हो?
कच्ची मिट्टी से नही
बनी है मेरे दिल की दीवारें
बार बार मुझे बरसात से
तुम डराते क्यों हो?
दुनियाँ की सारी बातें ,
बस एक बात पर
रुक जाती है ये बता दो,
हर बात को औकात पर
लाते क्यों हो?
बहुत तकलीफ़ देती है
ये खामियाँ तुम्हारी
मुझे मालूम है मेरी औकात
हर वक़्त जताते क्यों हो?

**सरिता प्रजापति**

**डॉ. कान्ति लाल यादव**
प्रदेश अध्यक्ष
{समता साहित्य अकादमी ( राज.)

**पुस्तक समीक्षा**

लेखिका- राखी कोर्राम
प्रकाशक -समता साहित्य अकादमी ( राज.)
मूल्य-100/—
पृष्ठ -100

## "मानवीय सरोकार को जिंदा रखने का मंत्र देती हैं राखी (गुड़िया) की कविताएं"

राखी (गुड़िया) एक ऐसी कवयित्री है जो मस्त मनमौला अंदाज में अपनी रचनाओं के माध्यम से तमाम पहलू को अभिव्यक्ति दी है। विचारों को मुखरित किया है। जो उनकी रचनाएं काबिले तारीफ है।उनकी रचनाओं में विचारों के साथ-साथ भावात्मक पक्ष का गहरा सरोकार देखने को मिलता है। उनकी रचनाओं में प्रकृति का मानवीकरण हुआ है। वे अपने विचारों का गूंथन कर अपनी बात को श्रोता तथा पाठक तक बिना रुकावट किए पहुंचा देने की कला उन्हें अच्छे से आती है। रचनाओं में सहज भाषा के साथ उर्दू शब्दों का प्रयोग देखने को मिलता है। रचनाओं में जीवन का गहरा अनुभव है तो न्याय और विरोध की प्रखर आवाज़ भी देखने को मिलती है। यथार्थ बात को कहना वो भी सूक्ति बद्ध ढंग से कहना बड़ा अनोखा अंदाज़ है-

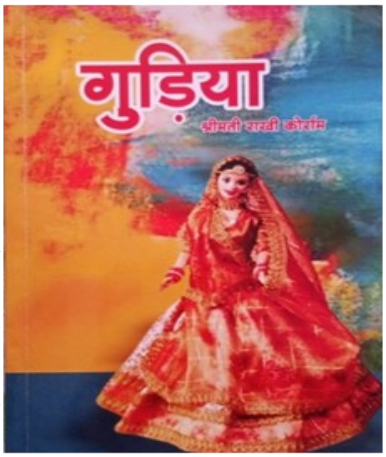

*"खुशियों का कोई मोल नहीं,*
*इससे ज्यादा चीज कोई अनमोल नहीं।*
*खरीद ले जो लाखों दिलों को,*
*प्रेम से मीठा कोई बोल नहीं।"*

कभी वह बेटियों के दर्द को समझती है तो कभी प्रकृति के दोहन के दर्द को। अपनी रचना 'बरखा रानी' के माध्यम से कवयित्री ने प्रकृति के विनाश करने वाले के प्रति रोष एवं चिंता जताई है। कवयित्री राखी (गुड़िया) ने बेटियों के महत्त्व को बड़ा ही मार्मिकता से वर्णन करती हुई कहती है-

*"मां की ममता, भाई का प्यार, पिता की दुलार है बेटियां।*
*सच पूछो तो सृष्टि का आधार है बेटियां"*

बेटियों पर हो रहे अत्याचार से कवयित्री चीख पड़ती हैं और जुल्मों को देखकर आवेशित होती है। अपनी "धिक्कार है" कविता के माध्यम से डांट-फटकार लगाती है।
कहीं अपनी बात को बहुत ही गहराई के साथ कहती है-

*"कोई गर ख़ास होता है दिल को यह एहसास होता है।*
*दूरी कितनी भी हो लेकिन हर पल दिल के पास होता है"*

अपनी रचना "खुदा ए यार" में शिद्दत के साथ दोस्ती निभाने की बात कही है। रचना में अधिक ईश्वर आस्था, विश्वास तथा तीव्र मिलन की उत्कंठा इनकी रचनाओं के में देखने को मिलती है। रचना "अंगारा" में अपने अस्तित्व को।अपने वजूद को जिंदा रखने की पूर्ण कोशिश दिखाई देती है। प्रबल आत्मविश्वास के साथ -

"मैं कोई चींटी नहीं जिसे यूं मसल दोगे।
तुम्हारे रास्ते का धूल नहीं जिसे यूं कुचल दोगे।"

अपनी बात को तराजू में रखकर तोलना इन्हें अच्छी तरह आता है। अपनी 'योग्यता और अनुभव' कविता में कहती है -

*"ओल्ड इज गोल्ड होता है।*
*मगर नया भी तो डायमंड हो सकता है।"*

राखी जी (गुड़िया) की रचनाओं में मानवीयता की सीख एवं संस्कारों की एक बहती नदी नजर आती है। वे अपनी रचना "चश्मा" में बहुत ही सुंदर ढंग से कहती है-

*"अहंकार का चश्मा लगाते हो क्यों,*
*दिन-ब-दिन नंबर बढ़ाते हो क्यों।*
*अरे नज़रों को नहीं नज़रिया बदलो,*
*अपनी सोच का दायरा घटाते हो क्यों।"*

इस तरह कवयित्री राखी (गुड़िया) थोड़े में बहुत कुछ कहने की गुंजाइश रखने वाली कवयित्री है।
मैं उन्हें बहुत-बहुत बधाई देता हूं और आशा ही नहीं बल्कि विश्वास करता हूं कि उनकी रचनाएं श्रोताओं और पाठकों के लिए जीवन उपयोगी साबित होगी और साथ ही कवयित्री साहित्य संसार में अपना योगदान सतत देती रहेगी।

राजेश सिंह
(समीक्षक)
अहमदाबाद

पुस्तक- काफी टाइम्स
लेखिका— डॉ पूनम आनंद
प्रकाशक—प्रभार पेपर बैक्स ,दिल्ली
पृष्ठ— 207 , मूल्य— 250/-

# "समाज का सच -काफी टाइम्स"

पटना शहर की जानी मानी लेखिका एवं बड़ी बहन डा. पूनम आनंद की छोटी छोटी १५१ लघुकथाओं का बेहतरीन संग्रह है- **" काफी टाइम्स"** । काफी की चुस्कियों की तरह ये छोटी छोटी लघुकथाएं मन को एक वैचारिक स्तर पर ले जाती है। घर, समाज ,देश और इसमें रहते लोगों की भिन्न भिन्न परिस्थितियों में उनकी मानसिक सोच और प्रतिक्रिया का लाजबाव चित्रण किया है लेखिका ने। लेखिका ने इन लघुकथाओं में घर के सदस्यों यथा ,सास-बहू ,दादा - दादी , ननद -भौजाई, पोते- पोती आदि को अपनी कहानी का पात्र बनाकर घर समाज संस्कृति परंपरा की सम-विषम परिस्थितियों में पात्रों की प्रतिक्रियाओं को बड़ी ही सूक्ष्मता एवं प्रभावी ढंग से गढ़ा है। पढ़ते हुए रोचकता बनी रहतीं हैं । लेखिका ने जहां घर समाज में फैली नकारात्मकता को दर्शाया हैं वहीं दूसरी ओर कुछ लघुकथाएं मानव सेवा समाज सेवा देश सेवा के लिए प्रेरित भी करतीं हैं।

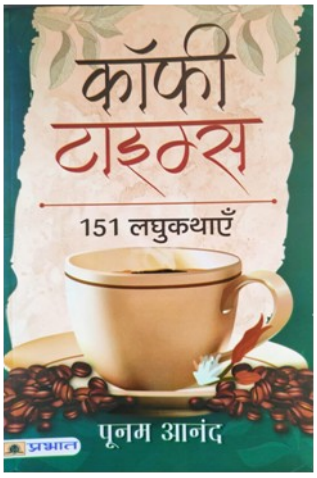


सतसैया के दोहों की तरह ये १५१ लघुकथाएं देखने में भले ही छोटी छोटी लगती हो, पर पाठक मन पर अपना जबरदस्त प्रभाव छोड़ जाती है। कुल मिलाजुलाकर छोटे बड़े शहरों कि भारतीय संस्कृति की एक निष्पक्ष झलक दिखाई देती है "काफ़ी टाइम्स" लघुकथा संग्रह में।

घर समाज की छोटी छोटी घटनाओं पर लेखिका की सूक्ष्म पकड़ और उन घटनाओं को कागज पर रोचकता से उकेरने की अद्भुत क्षमता लेखिका की प्रभावी एवं प्रेरणादायक शैली का प्रमाण है।

संग्रह की पहली लघुकथा **"पिताजी"** में एक पारम्परिक बहू की मनःस्थिति और स्थितियों के परिवर्तन को लेखिका ने बहुत ही बारीकी से दर्शाया है।दूसरी लघुकथा **"तीर्थ"** परिस्थिति को देखते हुए मां के त्याग की परम्परा को दर्शाती है। **"स्वार्थी"** लघुकथा लोगों के लालच की पराकाष्ठा को दर्शाती है- *एक दिन सीमी के पैर तले जमीन खिसक गई जब सीमा की सास और पति सीमी की मां से किडनी डोनर बनने की मांग कर रहे थे —आप पूर्णता स्वस्थ हैं और आपकी जिंदगी में कोई रस नहीं है किसी की जिंदगी बचा कर अपनी बेटी की ससुराल बचाले सीमा को साथियों का सब खेल समझ में आ गया।*

**"कंचिका"** और **"कामचोर"** में लेखिका ने बड़े घरों की मालकिनों के देवी पूजा के नाम पर कन्याओं की पावं पूजाई का ढकोसला और बाद में सच्चाई का मार्मिक चित्रण किया है।

देशप्रेम, पितृपक्ष,शादी-विवाह,बीमारी, त्याग ,लालच आदि मानवीय संवदेनाओ को संदेश के रुप में लेखिका ने अपनी लघुकथाओं में रोचक तरीके से निरुपित किया है। लेखिका की पकड़ समाज के हर तबके के मनोभावों पर है,और यही पकड़ पाठकों को लघु कथाओं से जोड़े रखती है। पाठकों को कहीं न कहीं यह लघुकथाएं उसके घर या आस-पास की लगती है।यही लेखिका की लेखनी की सफलता भी हैं कि पाठक कहीं न कहीं इन लघुकथाओं से अपने को जुड़ा हुआ महसूस करता है।

**"बैकुंठ"** लघुकथा में कटाक्ष साफ साफ दिखता है- *इन्हें सीधे बैकुंठ ही मिलेगा जब पंडित जी ने कहा तो सब्र का बांध टूट पड़ा । पंडित जी कृपया कोई ऐसा भी पोथी-पतरा है तो देखिए, वैकुंठ जाने वाले का दर्शन कैसे होगा?।*

**"क्या कहूं"** में एक ऐसी भी सास बहू का चित्रण है- *अब क्या कहूं मेरी सास ने मेरे हंसकर बात करने पर इतना मारा था मुझे ,कि मेरी हंसी और बोली दोनों बंद हो गई कि वह तो मेरे मुंह में जलती लकड़ी तक डाल देती अगर मैं पैर पर सास के नहीं लोट जाती।*

**"सच्चाई"** में बच्चों के छलकपट से विलग व्यवहार की बानगी है—*मम्मा आप ही आंटी को बता दो कि पापा कहते हैं,*

*पारुल की मां चुड़ैल है।*

**"वसीयतनामा"** में लोगों की सोच पर जबरदस्त तंज कसा है लेखिका ने- "*शान आप चाचा से वसीयत में बदलाव करवा लो ,लेकिन व्यवहार नहीं बदले मुझे ऐसा धन भी नहीं चाहिए । मैं चाचा की सेवा निस्सहाय पिता समझ कर कर रही हूं । वसीयतनामा बदलवा लें व्यवहार नहीं दीदी"।*

लेखिका की कलम के जबरदस्त पकड़ और उसकी चित्रकारी की एक बानगी **"ओवरटाइम"** में देखिए- "*नहीं-नहीं , सर, बस मेरे बच्चे पड़ोसी के घर आई साइकिल को फेल कर पीछे पीछे दौड़ते हैं और चूने के इंतजार में घंटों प्रतीक्षा करते हैं। बच्चों की साइकिल लेना चाहता था" अफजल धीरे से सिर झुका कर बोला।*

दकियानूसी परम्परा और सोच पर जबरदस्त प्रहार करती है लघुकथा**-" स्वर्ग-नरक"** —"*कुछ ऐसे भी थे जिनका कहना था स्वर्ग नरक के भी डर से लोगों में अच्छे वाले का ज्ञान नहीं है। लेकिन लोगों में सत्कार्य करने की होड़ बहुत है । वह क्यों अच्छा कर्म कर रहे हैं ऐसे भी विचार रखने वाले थे। बहस जोर से चल रही थी तभी इस भरी भीड़ में एक व्यक्ति ने कहा शास्त्र के अनुसार अभी शरीर त्यागने वाले सीधे स्वर्ग जाएंगे कोई है जाने वाला।*

पुरुष वर्ग की कुंठित मानसिकता को दर्शाती है**"तोहफा"** "*बेचारे इसी पैसे की खातिर बड़े घराने की अध कच्ची दिमाग की लड़की से ब्याह रचाया और संतान खातिर सबीना से। बस इस बार तो दो बच्चे सलीम के साथ चले जाएंगे और बदले में एक तोहफे का अंकुरण दे जाएगा। यह सोचते ही सबीना को चक्कर आ गया। वह गिर पड़ी, होश आने पर एक ही रट लगा रखी थी मुझे अब तोहफा मत दो।*

डा पूनम आनंद की इन लघुकथाओं में जहां मां की ममता ,और मां के त्याग समर्पण की अद्भुत झलकियां पढ़ने को मिलती हैं, वहीं आज के बच्चों ,बहू-बेटियों की पूंजीवादी सोच की झलक मिलती हैं। देश समाज के बदलते परिवेश को लेखिका ने अपनी लघुकथाओं में बेहतरीन तरीके से पिरोया है और पाठकों के लिए एक प्रश्नचिन्ह छोड़ दिया है,कि आप होते तो ऐसी परिस्थिति में क्या करते। लेखिका ने कोरोना,लाकडाउन, वृद्धाश्रम,व्रत तीज-त्यौहार आदि पर अपनी कलम बखूबी से चलायी है।

**"पतिव्रता"** में बच्चे के सुलभ भाव और मां की विवशता से ज्यादा दकियानूसी परम्परा झलकती है—"*करना तो पड़ेगा ही।"मां व्रत नहीं करने से क्या सत्यवान मर जाते? वह फिर लौट कर नहीं आते?" " हां ऐसा ही होता शायद।" फिर तो मां तुम यह छोड़ दो या व्रत तोड़ दो।" संजू निशा का मुंह देखने लगी, "हां मां रोज-रोज की मार, गाली खाने से यह उपाय बेहतर है।"*

सास भी मां जैसी हो सकती है। **"मां का दर्द"** लघुकथा में लेखिका ने इसी भाव को संजीदगी से दर्शाया है—*"देखिए डॉक्टर साहिबा हमारी बहू ठीक रहेगी तो फिर से बच्चे पैदा हो जाएंगे। डॉक्टर साहब मैंने बहू को भी देखा है, अजन्मे बच्चे को नहीं ,इस कारण आप बहू की जान को पहले बचाने का प्रयास करें।"*

लेखिका के सूक्ष्म अवलोकन की एक झलक **"पैसा"** लघुकथा में दिखती है—*लो जी, लो। पैरों में प्याज की पायल से लेकर चुनरी के गोटे खोइछें सभी प्याज से भरे पड़े थे और तुम अभी भी पूछ रही हो प्याज की कीमत।"*

नारी सशक्तिकरण पर एक व्यंग्य लघुकथा **"सशक्तिकरण"** में लेखिका ने नारी की आधुनिक सोच पर चोट की है—*"तुम्हें सिर्फ अपनी जिद है, एक माहौल कैसे हैं ? अंदर सिगरेट का धुआं कहां होगा ? जाओ अंदर ही बैठो, रेल आते ही मैं बता दूंगा , यहां तुम तुम्हें धोने से परेशानी होगी।" जया ने पुनः धीरे से कहा, " अब क्या कह कर समझाऊं तुम्हें , नारी सशक्तिकरण की लहर धुए में भी बदल गई है।"*

एक और चोट डाक्टरों की लूट और उनके तरीके पर,**"लोन"** लघुकथा में— "*नहीं मैम अभी आपको सूचना दी है।" फिर सुनो मूर्ख , बच्चे को आई.सी.यू. में डाल दो, मां को नींद का इंजेक्शन दे देना, फिर परिवार को खबर देना कि थोड़ी गड़बड़ थी। हैवी ब्लीडिंग के कारण ऐसी स्थिति हो गई है।"*

लघुकथा **"सांस के कान"** भी सास की चालबाजियों पर बेहतरीन तंज़ है—*बहू की इस बात ने जानकी को कटघरे में खड़ा कर दिया, क्योंकि आज ही अपनी बेटी स्नेहा से कह रही थी, बेटी .. मैं तुम्हारी सास की तरह ऊंचा थोड़े ही सुनती हूं, जो तुम इतना जोर से बोल रही हो। मैं तो रमा की फुसफुसाहट तक सुन लेती हूं परंतु, सास हूं, इसलिए न सुनने का बहाना कर उसे डांटने का मौका खोजती रहती हूं। "*

डॉ पूनम आनंद की लघुकथाएँ सही मायने में समाज और विशेषकर घर के हर स्थिति, परिस्थिति का सूक्ष्मवलोकनात्मक दस्तावेज है। जिनसे गुजरने के बाद हर पाठक को यही लगता है कि - ,
अरे हाँ ऐसा ही तो होता है आजकल घरों में समाज में ।

लेखिका अपनी लघुकथाओं के माध्यम से पाठकों से जुडने में सफल रहीं है ,और यही एक कलम की सार्थकता है और लेखक की सफलता भी । काफी टाइम्स यकीनन पढ़ने योग्य एवं सहजने योग्य पुस्तक है। मेरा विश्वास है पाठकगण इसे पड़कर एक नए एहसास से भर उठेंगें । इसकी हर लघुकथा अपने आप में एक नया संदेश देती है , पाठकों को जागरूक करती है । उनके अंदर एक नया भाव और संवेदनशीलता का नया नजरिया पैदा करती है।

राजेश सिंह
(समीक्षक)
अहमदाबाद

पुस्तक : सगुना चिरैया
लेखिका : सगुना चिरैया
पृष्ठ संख्या : 191
प्रकाशक : शुभदा बुक्स , साहिबाबाद
मूल्य : 250/-

# "स्त्री मन की कविताएँ: सगुन चिरैया"

उत्तर प्रदेश के बिजनौर जिले की युवा लेखिका एवं कवियत्री सुरभि डागर की 52 कविताओं का संग्रह है "सगुना चिरैया"। संग्रह के बजाय इसको विभिन्न रंगों आकारों चमक दमक वालें फूलों का गुलदस्ता कहना ज्यादा उचित होगा।सुरभि जी की काव्य रचनाओं में एक तेज धार है समाज की विद्रूपताओं के प्रति और कहीं कहीं एक आक्रोश भी दिखता है समाज की दकियानूसी मानसिकता के विरुद्ध। कुछ काव्य रचनाओं में साफगोई झलकती है, कुछ रचनाएं प्रेम से ओतप्रोत है । कुछ में प्रकृति का वर्णन है तो कुछेक रचनाओं में कान्हा के प्रति प्रेम और समर्पण दिखता है।

सुरभि जी अपनी काव्य रचनाओं का विषय चयन भी अपने आस पास से ही करती है , वो आसमानी बातें बिल्कुल भी नहीं करती बल्कि रोजमर्रा के जीवन से , अपने इर्द गिर्द घिरे लोगों से बड़ी ही खूबसूरती से प्रतीक चुन लेती हैं,और बड़ी ही ईमानदारी से उसे गुलदस्ते में टांक देती हैं।

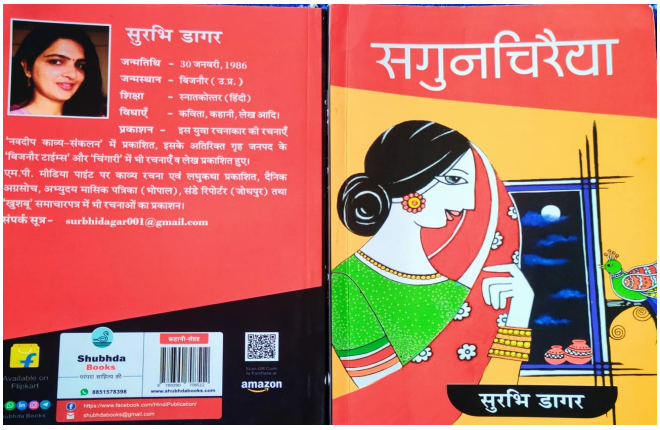


यह सुरभि डागर का प्रथम काव्य संग्रह है जिसमें बहुत ही बेबाकी से उन्होंने समाज के हर एक पहलू पर अपनी रचनात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त की है। कवियत्री अपने आसपास घट रही घटनाओं से अंजान नहीं है वरन् उसकी पैनी नजर है इन बदलते परिवेशों पर, जिसकी बानगी हमें उनकी रचनाओं में देखने को मिलती है।

इस काव्य संग्रह की प्रथम रचना में ही वो मानव से आह्वान करती दिखती है।

*धन-दौलत का नशा चढ़ा है*
*क्यों धृतराष्ट्र तू बना है?*
*महल-दुहमलों का अहंकार हुआ है*
*तू चरित्रवान हो जा!*
*छोड़ अहंकार, तू कमल पुष्प हो जा*
*हैं वक्त का आवाहन, से मानव!*

सुरभि जी अपनी रचना "तुम न देर लगाना" में स्त्री मन के कोमल प्रेमभरे भावों को बड़ी सुंदरता से सहेजते हुए चांद से बातें करती दिखती हैं।

*चांद जब मैं आऊंगी*
*लाल चुनरिया ओढ़े*
*सजे हाथ में कंगन*
*ले पूजा थाली*
*तुम न देर लगाना*
*चांद जब मैं आऊंगी*

उल्टे दशहरे रचना में राम, रावण और दशहरे इस त्रिकोण को प्रतीकात्मक रूप में रखकर कवियत्री छद्म वेशधारी मानव के कृत्यों पर चोट करती दिखायी देती है। आप भी देखिए-

*छल-कपट लिए हम कितने गहरे हैं*
*पर उल्टे करते हम दशहरे हैं*
*मुखौटे कोई हटा न पाये*
*हर मुखौटे पर पहरे हैं*
*अपने अंदर का रावण जला नहीं*
*पर करते हम दशहरे हैं*

सुरभि बाबुल से ऐसा घर बनाने की मांग करती है

*आंगन में लहराती तुलसी हो*
*हर शाम दिया-बाती हो*
*सत्कार की थाली हो*
*बाबुल तुम ऐसा घर बनाना।*

स्त्रियों पर समाज के मलिन और दंभी विचारों को एक सिरे से नकारते हुए सुरभि जी बड़ी स्पष्टता से अपनी आवाज रखती है,और साफ साफ स्पष्टीकरण भी देती हैं। इसकी झलक "स्त्री हूं, उपवस्त्र नहीं" में दिखाई देती है। वो कहती हैं

*त्याग , प्रेम, दया, ममता का सागर*
*इतिहास बनाकर सराहा जायेगा*
*स्त्री हूं उपवस्त्र नहीं*
*जो मुझे पहना उतारा जायेगा*

प्रकृति पर चिंता व्यक्त करते हुए सुरभि जी कहती हैं-

*कान लगा, ध्यान लगा*
*सुन प्रकृति की पीड़ा को*
*हृदय तेरा कांप उठेगा*
*तू भी मानव सोता जाग उठेगा।*

लोगों की दकियानूसी मानसिकता और पुरातन मान्यताओं पर जबरदस्त प्रहार करते हुए सुरभि जी बेबाकी और हिम्मत से कहती हैं-

*रजस्वला के नाम पर*
*संकुचित क्यों हो जाते हो*
*क्या ये चरस गांजा है*
*क्यों इतना शरमाते हो*

"एक अबला" रचना समाज में अकेली स्त्री और लोगों की लोलुपता भरी नजर से आशंकित स्त्री के मनोभावों की दशा है।

*भरी हुई थी अनेक प्रश्नों से*
*सरपट-सरपट दौड़ रही थी*
*गुज़र रही थी एक अबला*
*संध्या में गलियारे से*

कवियत्री कहीं रिश्तों की तुरपाई करती है तो कहीं नदी होकर बंधनहीन हो प्रिय में समाना चाहती है,तो कहीं कान्हा की मुरली का गीत होना चाहती है। कवियत्री ने नारी की विभिन्न दशाओं ,नारी की अभिलाषाओं को अपनी रचनाओं में पिरोया है। सुरभि जी पूछतीं है जब मैं मर्यादित हूं तो "क्यूं करुं घूंघट में" और यह प्रश्न उनका जायज लगता है। कवियत्री पत्नी और प्रेमिका में अंतर स्पष्ट करतीं हैं।

कवियत्री में संवेदनशीलता गहरी है, समाज की वंचित स्त्री का दर्द कविता में समाहित करते हुए कहती हैं।

*नहीं मिला अन्न का दाना*
*कई दिनों से भूखी है*
*नयन नक्ष है उज्जवल उसके*
*काया में रुधिर की बूंद नहीं*
*फटेहाल उसकी साड़ी है*
*वो भी एक नारी है।*

सरहद पर देशभक्ति से ओतप्रोत सैनिक का अपनी मां के नाम पत्र रचना भावुकता और देशप्रेम को जगाती हैं।

*अमरत्व का रस पीकर*
*गोद में मातृभूमि की सोना है*
*है विनती तुझसे से जननी!*
*वीरगति पर मत रोना*

पेड़ों की अंधाधुंध कटाई और प्राकृतिक असुंतलन पर गौरैया के रोष को दर्शाते हुए सुरभि जी कहती हैं।

*आज गौरैया ने बैठ मुंडेर पर*
*कैसा शोर मचाया है*
*ये जो कहलाता मानव है*
*काट पेड़ों को घर बनाया है*

हरे कांच की चूड़ियां रचना पाठक के चित्त में एक पुराने दृश्य को उभार देती हैं। जहां मनिहारिनें गली गली मोहल्ला मोहल्ला घूम घूम कर भर दुपहरिया कांच की रंग बिरंगी चूड़ियां बेचा करती थी। और उनकी आवाज़ पर बच्चे, बुढ़िया पतोहू बहुरिया सब आंगन में बैठ चूड़ियों की खनखन में प्रफुल्लित हो जाते थें।

*दादी ने मुस्करा कर पूछा बिटिया*
*पहनेंगी क्या चूड़ियां*
*सुन कर उछल पड़ी*
*हां, पहनूंगी मैं हरे कांच की चूड़ियां*
*पहन चूड़ियाँ सखियों को*
*जा कलाई दिखाई*
*देखो मौनी , नीलू, दीप्ति*
*खान-खान बजती मेरी चूड़ियाँ*

पुस्तक की अंतिम रचना "सगुन चिरैया" इस काव्य संग्रह की बेहतरीन रचनाओं में से एक हैं। जिसमें कवियत्री दादी नानी की कहानी को प्रतीक बनाकर स्त्री मन को नीले अम्बर में उड़ने के लिए आशाओं का पंख देतीं हैं।

*सुनो चिरैया!*
*तुम सुंदर सजीले पंख अपने*
*जब-जब अम्बर में फैलाती हो*
*हर स्त्री की छुपी आंकाक्षाओं में*
*आशाओं के पंख लगातीं हो।*
*चहचहा कर गगन में*
*जब गुंजन राग भरती हो*
*चित में उत्साह के मोती*
*असंख्य टाँक जाती हो*
*मैं भी उड़ान भरती हूं*
*अपने शब्द भाव विचारों में*
*प्रेम – साहस और विश्वास के*
*पंख लगा जीवन के विस्तारों में*

यह काव्य संग्रह शुभदा बुक्स , साहिबाबाद ने प्रकाशित किया है और पुस्तक की कीमत मात्र 250/- रुपये है।

सुरभि जी का यह प्रथम काव्य संग्रह है पुस्तक में कवियत्री के मेहनत की झलक कविताओं में साफ साफ दृष्टिगोचर होती है। नि:संदेह विषय चयन उत्कृष्ट है पर कहीं कहीं रचनाएं सपाट दिखाई देती हैं।कुल मिलाजुला कर यह पाठकों के लिए पठनीय संग्रह है और मेरा मानना है पाठकों को यह संग्रह एक नये अनुभव का स्वाद देगा।

**मुक्तेश्वर मुकेश**
सृजन गृह, शिवपुरी, वार्ड संख्या – 13
सहरसा- 852201 ,मोबाइल- 9431440661

# "मास्टरबा"

पुस्तक -- मास्टरबा
लेखक : कुमार विक्रमादित्य
पृष्ठ संख्या : 191
प्रकाशक : अंजुमन प्रकाशन, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश
मूल्य –200.00

शिक्षा जो अब मौलिक अधिकार में शामिलहै, निहायत जरूरी, एक सामान्य इंसान को विशिष्ट बनाने के लिए । बिना शिक्षा के इंसान उस दंतहीन मांसाहारी पशु के समान है जो चाहकर भी अपना शिकार नहीं कर पाता है । आप उसे शिक्षा देने वाले की विशिष्टता का सहज अंदाजा लगा सकते हैं कि कैसे वह दूधिया दांत को तोड़ते, फिर उगाते और उसमें धार बनाते हें कि एक दिन वह अपने पैर पर खड़ा होगा और अपना शिकार खुद करेगा ।यह उपन्यास है शिक्षा के उस परिपेक्ष्य का जिसमें शिक्षा के सम्पूर्ण कालक्रम को सुन्दर तरीके से दर्शाया गया है कि कैसे शिष्यों के जीवन में प्रकाश लाने वाले गुरु जी, शिक्षक, मास्टर और अंततः मास्टरबा बन गए । कौन इसके लिए जिम्मेवार ? समाज, सरकार स्वयं शिक्षक या छात्र ।

सच ही किसी ने कहा है कि अगर आपको किसी तंत्र को अच्छे से जानना है तो आपको उसमें डूबना पड़ेगा । लेखक ने खुद को डूबकर इस उपन्यास में विद्यालय के गुरु जी, फिर "शिक्षक" तत्पश्चात "मास्टर" फिर मास्टरबा के क्रमबद्ध नामकरण, समाज में उनकी उपेक्षा और समाज की अपेक्षा पर आधारित है को बताया है जो विद्यालय के यथार्थ परिदृश्य का उत्कृष्ट प्रतिबिम्ब है ।

उपन्यास एक शिशु छात्र की जिज्ञासा से शुरू होता है । धीरे धीरे इसके घटनाक्रम आगे बढ़ते हैं जिसमें पठन-पाठन के माहौल, आपसी प्रतिस्पर्द्धा, प्रधान शिक्षक के व्यवहार, समाज में मास्टर की प्रतिष्ठा आदि अनेकानेक पहलुओं को वार्तालाप के माध्यम से चित्रित किया गया है । नियोजित शिक्षक हो या नवका शिक्षक सभी में पढ़ाने के गुण होते हैं । कुछ शिक्षक तो विलक्षण प्रतिभा के होते हैं फिर भी सामाजिक स्तर पर उनके मान-अपमान बहस का मुद्दा बनता रहता है ।योग्यता और कौशल के वनिस्पत पैसे से शिक्षक के काबिलियत को आँका जाता है ।

इस उपन्यास के एक पात्र छात्र आनंद जिसने "मास्टर क्या होता है" प्रश्न पूछकर विनय बाबू से मार खायी थी उसके मन में विज्ञान शिक्षक कुंदन बाबू और संस्कृत शिक्षक रघुबंश बाबू के कर्तव्यनिष्ठता और शिक्षा के कारण आदरभाव असीमित रूप से प्रस्फुटित हो जाता है । आपसी ईर्ष्या, द्वेष और प्रतिस्पर्द्धा समकक्ष नियोजित शिक्षकों के बीच भी उपन्यास में मिलता है । समकक्षों और खासकर उच्च वेतनभोगी के बीच बैर पनपना मानव मनोवृत्तियाँ है जिसे इस उपन्यास में जिस तरीके से दर्शाया गया है वह एक नायाब उदाहरण है और इसलिए तो गुरूजी मास्टरबा हो जाते हैं ।

विज्ञान शिक्षक कुंदन और संस्कृत शिक्षक रघुबंश बाबू के बीच आपसी समझ एवं समन्वय का वर्णन कर विज्ञान और भाषा विषय के बीच बढ़िया तालमेल इस पुस्तक में दिखाया गया है । प्रतियोगी परीक्षा से बने शिक्षक अथवा "सर्टिफिकेट लाओ नौकरी पाओ" से बहाल नियोजित शिक्षक दोनों के किरानीगिरी की मानसिकता और गैर शैक्षणिक कार्यों में रुचि रखनेवाले शिक्षकों का विद्यालयों से पलायन कर प्रतिनियोजन की जुगाड़ और सरकारी कार्यालयों की संचिका पर बैठ जाने की प्रक्रिया का बेजोड़ वर्णन इस पुस्तक में देखने को मिलता है । यह प्रतिनियोजित शिक्षक विद्यालयों में शैक्षणिक कार्य में लगे अपने ही साथियों पर किस कदर धौंस जमाते हैं इसका प्रदर्शन "पाठक जी" नामक शिक्षक के माध्यम से यहाँ किया गया है जो यथार्थ बोध करता है ।

अनियोजित यानी बेरोजगार को नियोजन यानी रोजगार देने को नियोजित कहा जाता है । नियोजित शिक्षक अर्थात प्रशिक्षित या अप्रशिक्षित को एक नियत वेतन पर बहाल करना होता है जो वर्तमान समय में सभी राज्यों में हो रहा है । शिक्षक कोई हो वास्तव में उनका क्या दोष ? दोष तो नियुक्ति प्रक्रिया का है । चूंकि यह पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था के तहत मुखिया, प्रमुख, और जिला परिषद् अध्यक्ष के नियुक्ति बोर्ड द्वारा बहाल किये जाते हैं जिनका आधार अंक होता है न कि प्रतियोगिता परीक्षा ।

परीक्षा में अंक कैसे आते हैं यह बात किसी से छुपी नहीं है, इस बात को लेखक ने बहुत सहज तरीके से दर्शाने का प्रयास किया है । कुंदन और रघुबंश बाबू जैसे योग्य और उच्च योग्यताधारी शिक्षक और नकली व् फर्जी अंक पत्रों पे बहाल शिक्षक दोनों का नियोजन इन्ही कमेटियों के द्वारा की जाती है । इसलिए पढ़ाने और नहीं पढ़ानेवाले एक ही पद के शिक्षकों के बीच बराबर विवाद होना रोजमर्रा का दृश्य विद्यालयों में दिख जाता है । शिक्षक दिवस जैसे पवित्र दिन पर आनंद और अन्य छात्रों के समक्ष ही शिक्षकों की मारामारी इसी का परिणाम था । फर्जी मास्टर की परिभाषा भी उपन्यास में बखूबी गढ़ा गया है ।

लेखक ने संतोष सर के बोलने, भोलापन और हज़िरजवाबी अंदाज से ना सिर्फ छात्र बल्कि शिक्षकगण एवं पदाधिकारी भी खूब मज़ा लेते हैं । इस उपन्यास में संतोष सर द्वारा मनोरंजन का भरपूर तत्त्व परोसा गया है । प्रधान शिक्षक जो नियमित है, अच्छी पगार पाते हैं फिर भी विविध रूपों में कमाने का स्रोत ढूँढा जाना और निम्न स्तर तक चला जाना शिक्षक की नैतिकता के पतन का द्योतक है ।

बस में नवका शिक्षक, नियोजित शिक्षक के अस्तित्व पर जैसे ही कोई चर्चा होती है, सबके सब एक साथ होकर मास्टरबा को कोसना शरू कर देते हैं जिसकी जड़ नियोजन प्रक्रिया में जमी हुई है । हालांकि यह भी यहाँ ध्यान देने योग्य है कि संतोष बाबू अपनी शैक्षिक मजबूरी को सबके सामने रखने में नहीं हिचकते हैं वहीं मीनू मैडम, श्रुति मैडम, प्रभाकर जैसे शिक्षक पढ़ाने से कतराते हैं । प्रधान शिक्षक के द्वारा कक्षा में नहीं पढ़ाने का फायदा ये कामचोर शिक्षक खूब उठाते हैं । संतोष बाबू द्वारा एक निरिक्षी पदाधिकारी को प्रधान शिक्षक समझकर "पैर भारी" या "भारी-पैर" की परिभाषा देते हुए जो कुछ बताया गया वह भोलेपन में ही सही लेकिन विद्यालय के गैर-शैक्षणिक वातावरण का कच्चा चिट्ठा है ।

कुछ शब्दों का प्रयोग जैसे पिपियाना, ऑनर्स मजबूत, फरियाबाजी, तीन जिस्ता आदि शब्द आपको मुस्कुराने के लिए वाध्य करता है । हाँ पदाधिकारी अर्थात साहब और सर अर्थात शिक्षक का घालमेल भी दिख जाता है ।सामान्य पाठक को समझने में परेशानी हो सकती क्योंकि वे सर और साहब को एक ही मानते हैं । खैर यहाँ साहब हैं कार्यक्रम पदाधिकारी और सर हैं शिक्षक ।

एक प्रसंग में कार्यक्रम पदाधिकारी कार्यालय के करतूतों और दोहन तथा राशि की बंदरबांट का खुलकर बखान श्रुति मैडम एवं संतोष जी द्वारा किया गया है । एम् डी एम् मतलब मध्याह्न भोजन की राशि और प्राप्त खाद्यान की लूट-खसोट की चर्चा पुस्तक में की गयी है जिसमें पदाधिकारी, शिक्षक, पत्रकार और शिक्षा समिति सभी हिस्सेदार हैं । प्रायोगिक परीक्षाओं में अंक देने का राज भी खोला गया है । प्रायोगिक परीक्षा में कैसे अंक प्रदान किये जाते हैं, इसका पूरा हिसाब किताब प्रधान शिक्षक से लेकर चपरासी तक को उपन्यास में जगह दी गई है । प्रधान शिक्षक अंकों के बदले उगाही किये गए रकम को आपस में नहीं बांटते जबकि मुखबिलास मॉडल को मीनू मैडम ने सराहना की है जो "सबका पाप सबका साथ" पर आधारित था । कुंदन और रघुबंश बाबू ईमानदार शिक्षक हैं उन्हें किसी तरह का प्रलोभन डिगा नहीं सका लेकिन वैसे शिक्षक जिन्हें लालच था वो इन दोनों से खफा हो गए । हद तो यह हो जाती है जब वे सेवानिवृति के अवसर पर विदाई खर्च हेतु रखे रूपये भी रख लेते हैं और हिसाब बराबर के देते हैं ।

निक्कमें शिक्षकों के बारे में छात्रों द्वारा बोर्ड पर लिख दिया जाता है – तीन शिक्षक, एक मैडम और तीन गदही इस विद्यालय में है, यह शैक्षणिक गिरावट की पराकाष्ठा है । कुंदन जी का सामना अपने विद्यालय के बेईमान प्रधान शिक्षक से तो रोज होता है पर जब इंटर और मैट्रिक परीक्षा के वीक्षक बनकर दूसरे विद्यालय में जाते हैं तो वहाँ के प्रधान शिक्षक सह केन्द्राधीक्षक भी एक खुर्राट बेईमान के रूप में सामने मिलते हैं जिनकी हरकत बेमिशाल थी क्योंकि वे नाश्ते के पैसे भी काटकर जेब में रख लेते हैं ।

उपन्यास के उत्तरार्द्ध में विधायक/ आर. डी. डी. ई/ नियोजित शिक्षकों की वेतनादि की न्यायिक लड़ाई को समेटने का प्रयास किया गया है परन्तु व्यवस्था से हारकर न्यूनतम वेतन पर अपने भविष्य की असुरक्षा पर जीवन की बलि चढाने वाले नियोजित शिक्षकों में कुछ तो सेवा निवृत्त हो गए और उन्हें कुछ भी नहीं हासिल हुआ । सरकार ने ऐसा ताना बाना बुना कि न्यायलय से भी उन्हें निराशा ही हाथ लगी । उन अवकाश प्राप्त शिक्षक के सामने एकतरफ भूखमरी तो होगी ही दूसरी तरफ पारिवारिक बोझ जो उन्हें जल्दी ही समाज से उस एकांत के तरफ ले जाएगा जहां वह अपना मुंह छुपा सके ।एक मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करके लेखक ने बहुत बड़ी बात को सामने लाने का प्रयास किया है ।

उपन्यास के अंत में जब कुंदन सर प्रधान शिक्षक पद पर अन्य विद्यालय में पदस्थापित होते हैं तो घटनाएं द्रुत गति से बदलती है । विद्यालय के शैक्षणिक माहौल को सँभालने, ईमानदारी से काम करने की सजा पदाधिकारी और अभिभावकों के धरना, प्रदर्शन और निलंबन के रूप में मिलता है । "मास्टरबा" संबोधन को शब्दवाणों से बींधना पड़ता है । कर्मठता और योग्यता सभी नाकाफी होते हैं शिक्षातंत्र और छात्रवृत्ति भोगी जनसमुदाय के समक्ष जो पढ़ाई से ज्यादा, लाभ मिल रहे योजनाओं को समझते हैं ।अचानक कुंदन सर के सामने आनंद नामक वही आज्ञाकारी छात्र जो प्रधान सचिव के रूप में प्रकट होते हैं और तंत्र के सभी घटक उनके अनुकूल हो जाते हैं ।अब सारे गिले शिकवे गौण हो जाते हैं और सभी कर्मचारी और पदाधिकारी उनका गुणगान करने लगते हैं जो बताता है कि अफसरशाही तंत्र पर कितना हावी है । समय तुरंत करवट लेता है आनंद ने कुंदन सर को पुनः प्रतिष्ठा दिलाने में जो भी किया वह बताता है कि अभी भी शिक्षकों के लिए कुछ आश बची है, पर शिक्षक को भी कुंदन सर बनना होगा और छात्र को भी आनंद जैसे जिज्ञासु और समर्पण दिखाना होगा ।

"कुमार विक्रमादित्य" ने मास्टर की स्मिता और आदर्श को ऊँचा उठाने का भरसक प्रयास किया है, परन्तु उनके द्वारा

शिक्षकों की प्रतिस्पर्द्धा, बेईमानी, शिक्षकोवृत्ति से पलायन पर सत्यता से आघात किया गया है । उपन्यासकार ने अपने आत्मपरिचय में स्वयं को शिक्षक बताया है इसलिए "मास्टरबा" के विभिन्न स्वरुप को अतिनिकट तक अनुभव किया है । भोगा हुआ यथार्थ के कारण जिस दंश को उसने झेला है इसलिए यह उपन्यास सही उद्देश्य की और बढ़ता चला गया है ।
मास्टरबा उपन्यास में कुछ प्रसंगों को मनोरंजक बनाने का प्रयास भी है, परन्तु कुछ चीजें खटकती भी है जैसे आनंद के फौजी पिता द्वारा अपने साथियों के साथ पीने/ पिलाने चखना और पैग उपन्यास के कथा के नजरिये से प्रसंगहीन है क्योंकि कुछ राज्यों में शराबबंदी कानून लागू है । साथ ही प्रधान शिक्षक और उनके सहयोगी शिक्षकों के बीच प्रधान के क्रियाकलाप पर कई बार गरमागरम वाद विवाद और मारपीट की नौबत का आना घटना की पुनरावृत्ति है जो उपन्यास के प्रवाह को रोकने का प्रयास करता है । इन बातों को अगर छोड़ दिया जाय तो उपन्यास पठनीय है और शिक्षा के कई आयामों को समेटता है जहां समाज के सभी घटक और सरकार को ध्यान देने की आवश्यकता है वरन शिक्षक संवर्ग इस उपन्यास को कहाँ तक समेट पाता है यह तो समय बातएगा ।
आशा है लेखक की कलम सतत चलती रहे और कई अन्य कथानक पर भी पाठक का प्यार इन्हें मिलता रहेगा । कुमार विक्रमादित्य ने कम उम्र में अपनी लेखनी के माध्यम से अपनी लेखकीय क्षमता को सबके सामने रखा है जो एक सराहनीय प्रयास है ।

## काव्य

**शलभ गुप्ता**
प्रोडक्शन मैनेजर/लेखक/कवि
पृथा थियेटर ग्रुप, मुंबई

**नागेन्द्र नाथ गुप्ता**
ठाणे (मुंबई)

### "तुम्हारी बातें"

जब भी कभी तन्हा महसूस करता हूँ मैं,
अपनी कविताओं से बातें करता हूँ मैं।
बातों में फिर तेरा ज़िक्र करता हूँ मैं।
ज़िक्र तेरा आते ही मेरी कविताओ के,
खामोश शब्द बोलने लगते हैं।
फिर घंटों मुझसे तेरी बातें करते हैं।
मेरी कविताओं के शब्द तुमने ही तो रचे हैं,
तुम्हारी ही तरह "शब्द" बहुत भावुक है।
बातें मुझसे करते है और नैनों से बरसते रहते हैं।

जब भी कभी तन्हा महसूस करता हूँ मैं,
अपनी कविताओं से बातें करता हूँ मैं।
अर्ध - विराम सहारा देतें है शब्दों को ,
मात्राएँ शब्दों के सर पर हाथ रखती हैं।
हिचकियाँ लेते शब्दों को पंक्तियाँ दिलासा देतीं हैं,
फिर सिसकियाँ लेते हुए शब्दों को ,
मैं सीने से लगाकर बाहों में भर लेता हूँ,
शब्द मुझमे समां जाते है मुझको रुला जाते हैं।

### "सम्भावना"

प्रेम साधन नहीं, है सम्भावना,
प्रेम मंजिल नहीं है इक कामना।

पनपता प्रेम का बीज है प्यार से,
करिएगा अनुभव भली प्रकार से।

बीज रुकेगा न अंकुरित होने से,
वृक्ष निकलेगा इक बीज बोने से।

जरुरी मिले नर्मी गर्मी पानी हवा,
धीरे धीरे प्यार अपना होगा जवां।

है उम्मीद पूरी कल खिलेंगी कली,
फिर महक फैल जाएगी हर गली।

फूल भी खिलेंगे और लगेंगे फल,
प्यार तब हो जाएगा जरुर सफल।

प्रेम की होती प्रायः है मंजिल नहीं,
प्यार होता है दिल से सतही नहीं।

प्रेम साधन नहीं है, प्रेम आराधना,
प्यार में छिपी है अपार सम्भावना।

**प्रीति शर्मा असीम**
प्रिंसिपल -बी.एम.जैन पब्लिक स्कूल,
नालागढ़,हिमाचल प्रदेश

**पुस्तक समीक्षा**

लेखक: एस.एस.डोगरा,
प्रकाशक: दी बुक लाइन-106, 4787/23 प्रथम तल,
अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
पृष्ठ संख्या : 144, पेपरबैक-पुस्तक की कीमत 295 रूपये ISBN 978-93-90838-16-5

# "मेरे हमसफ़र (बहुरंगी साक्षात्कार)"

श्री एस.एस डोगरा जी की" मेरे हमसफ़र "पुस्तक विलक्षण प्रतिभाओं को एक सूत्र में पिरोती प्रेरणा देती ।अपने आप में अमूल्य कृति है जिसमें उन्होंने भारत भूमि के कोने-कोने से महान विभूतियों को चुन -चुन कर उनसे जुड़ी बातें साक्षात्कार के माध्यम से पहली बार हमारे समक्ष प्रस्तुत की हैं । यह बहुत ही रोचक पुस्तक है क्योंकि हमें एक साथ अनगिनत प्रतिभाओं के बारे में जानने का अवसर प्राप्त होता है। पत्रकार-लेखक-असिस्टेंट प्रोफ़ेसर एस.एस.डोगरा की यह तीसरी पुस्तक ("मेरे हमसफ़र") है जिसमें शिक्षा, साहित्य, राजनीति, खेल, मीडिया, सिनेमा, आध्यात्म, समाजसेवी क्षेत्र की नामचीन हस्तियों के कुल ४७ साक्षात्कार हैं। इसका प्राक्कथन हिंदुस्तान के हिंदी पत्रकारिता के पुरोधा परम आदरणीय डॉ वेद प्रताप वैदिक जी तथा भारतीय जन संचार संस्थान के महानिदेशक प्रो.संजय द्विवेदी जी ने लिखा है।

एस.एस डोगरा जी की नवीनतम पुस्तक - मेरे हमसफ़र (बहुरंगी साक्षात्कार) - का लोकार्पण हाल ही में (23 नवम्बर,2021) को राष्ट्रीय हास्य कवि व पद्मश्री से सम्मानित श्री सुरेन्द्र शर्मा द्वारा दिल्ली के केन्द्रीय संस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र - संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार, द्वारका में संपन्न हुआ। श्री डोगरा पिछले 25 वर्षों से मिडिया एवं पत्रकारिता क्षेत्र में सक्रिय हैं। इस यात्रा के दौरान उन्होंने अनेकानेक हस्तियों के साक्षात्कार किए, डॉक्यूमेंट्री तथा लघु फिल्मों का निर्माण किया, मिडिया से संबंधित दो पुस्तकें लिखी जिन्हें महामहिम राष्ट्रपति जी द्वारा भारत के तीन विश्वविद्यालय अम्बेडकर यूनिवर्सिटी, नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी तथा आई पी यूनिवर्सिटी में के पाठ्यक्रम में शामिल किया गया ।

साथ ही वे पिछले 10 वर्षों में देश भर में स्कूल तथा मिडिया विद्यार्थियों के लिए 250 से अधिक कार्यशाला आयोजित कर चुके हैं ।

पत्रकारिता में अपनी निष्ठा, मेहनत व लगन से आज वह उस मुकाम पर पहुंच गये है जहां उन्हें ' मिडिया वर्कशॉप गुरु' के नाम से पहचाना जाता है।

मेरे हमसफ़र - उनके द्वारा लिखी एक प्रेरणादायक पुस्तक है। जिसमें देश भर से विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत 47 शख्सियतों के साक्षात्कार के आधार पर आदर्श व अनुकरणीय जीवन शैली का दर्शन प्रस्तुत किया गया है। जहां एक ओर विश्वविख्यात पर्वतारोही सुश्री बछेंद्री पाल सिंह जी का जो खिलाड़ी है , फिल्म जगत के जाने-माने कलाकार प्रेम चोपड़ा जी का, स्टेंड अप कमेडियन श्री राजू श्रीवास्तव जी का, राजनीतिक नेता श्री अनुराग ठाकुर जी, भारतीय फुटबाल टीम के कप्तान सुनील छेत्री, प्रेरक वक्ता बी.के.शिवानी, वरिष्ठ पत्रकार, लेखक - साहित्यकार, फ़िल्मकार, शिक्षाविद्, गीतकार, खिलाड़ी, समाजसेवी आदि शामिल है ।वहीं इन हस्तियों के बीच मेरा परिचय इस पुस्तक में शामिल करना मेरे लिए असीम गौरव की बात है । श्री डोगरा, इस ' साक्षात्कार - संकलन' के लिए साधुवाद के पात्र है । वह स्वयं छात्रों और समाज के लिए एक प्रेरणा स्रोत है। मेरा सौभाग्य रहा कि उनसे मिलकर मुझे बहुत कुछ सीखने समझने को मिला। क्योंकि पुस्तक के लेखक श्री एस.एस डोगरा जी व्यक्तित्व परखने की अद्भुत समझ रखते हैं लेखक का यही गुण और अनुभव पुस्तक को और सशक्त बना देता है

इस पुस्तक की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इन साक्षात्कारों की सबसे बड़ी खूबी इनकी विविधता है। जन- जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों के प्रतिष्ठित सज्जनों के साक्षात्कार पाठकों को उनके जीवन में आगे बढ़ने का मार्ग सुझाते हैं। जिन व्यक्तित्व के साथ लेखक ने साक्षात्कार किए, वे सभी चाहे विख्यात न हो लेकिन वे बहुत प्रमाणिक लोग है। किस प्रकार के छोटे -छोटे सरल सवाल पूछते हुए

शख्सियत का पता लगाया जा सकता है। यह पत्रकारिता के छात्रों के लिए आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करती है। निःसंदेह इन साक्षात्कारों से पाठकों को रोचक जानकारी तो मिलती ही है, पर दूसरी तरफ़ प्रेरणा भी मिलती है।"

यह पुस्तक न केवल मिडिया जगत से जुड़े नवोदित विधार्थियों अपितु सभी वर्गों के लिए एक सकारात्मक खजाना है। एक कुम्हार की तरह डोगरा जी ने साक्षात्कारों के व्यक्तित्व को नया स्वरूप प्रदान किया है। यह जीवन के यथार्थ को बखूबी उजागर करता है। पुस्तक स्कूल, कालेज व अन्य शैक्षणिक संस्थानों के पुस्तकालयों के लिए लाभदायिक धरोहर साबित होगी।

डोगरा जी द्वारा साक्षात्कार किए गए व्यक्तियों के गूगल से लिए गए कुछ चित्र यहां दर्शाएं गये है जो पुस्तक की प्रमाणिकता दर्शाते है। साक्षात्कार अपने-अपने फील्ड में कार्य करते हुए एक आधार स्तंभ प्रस्तुत करते हैं जो जानकारी उन्होंने अपने कार्य क्षेत्र और जीवन क्षेत्र की दी है वह आने वाली पीढ़ी के लिए मार्गदर्शिका का कार्य करती है और अपने कार्य की जो बारीकियां बताई है वह बहुत ही अनुकरणीय है और जो भी उस कार्य में अपनी पहचान बनाना चाहेगा वह इस पुस्तक से प्रेरणा लेकर उसे अधिक बेहतरीन तरीके से कर पाएगा।

पुस्तक द बुक लाइन की वेबसाइट डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू .बुक लाइन. कॉम. इन www.bookline.co. और ऐमेज़ॉन पर ₹295 में घर बैठे ही ऑर्डर भेज कर आप घर बैठे ही प्राप्त कर सकते हैं।

क्योंकि अच्छी जानकारी का कोई मूल्य नहीं होता जब विभिन्न कार्यों की जानकारी और उन में सफलता हासिल करने वालों के साक्षात्कार एक पुस्तक में प्राप्त हो तो यह अगली पीढ़ी को मील के पत्थर सिद्ध होती पुस्तक उन्हें और भी अच्छे तरीके से अपने कार्य को करने की प्रेरणा देने में सक्षम सिद्ध हो सकती है। पुस्तक के पेज न.143 पर प्रकाशित कविता "वही तो शिक्षक कहलाता है" लेखक एस.एस.डोगरा के अपने विद्यार्थियों के प्रति विशाल हृदयता प्रकट करता है | इस पुस्तक को दरिया गंज -दिल्ली के प्रतिष्ठित प्रकाशक दी बुक लाइन ने प्रकाशित किया है। यह अमेजन पर ऑनलाइन उपलब्ध है |

**********

## ग़ज़ल

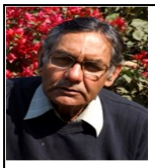

### विज्ञान व्रत
नोएडा

***(एक)***

जिस्म जिसका है बयाँ मुझमें
कौन है ये बेज़बाँ मुझमें

जो रहा होकर कभी मेरा
वो मिलेगा अब कहाँ मुझमें

था सितारों से कभी रौशन
क्या हुआ वो आसमाँ मुझमें

जो बनाया था कभी तूने
अब नहीं वो आशियाँ मुझमें

डूबने का शौक़ था तुमको
लो हुआ दरिया रवाँ मुझमें

***(दो)***

ख़ामुशी ने आपकी
क्यों मुझे आवाज़ दी

थी ग़ज़ब दीवानगी
उम्र वो कुछ और थी

आप मुझको हुक्म दें
मैं मिलूँ आकर अभी

मार डालेगी मुझे
आपकी ये बेरुख़ी

'हो चुके हम आपके'
काश कहते आप भी

## काव्य

### सोनिया सैनी
जयपुर।

**"सपना"**

सपना देखा कल उम्मीदों भरा,
जिसमे देखा कल सुनहरा
नींद खुली तो देखा,
था रोशन सवेरा।

सोच नयी,कमान नयी
जीवन की पहचान नई
गम के बदलो में निकला
पूर्णिमा का चांद नया,
उदास गमगीन जीवन
को मिला, जैसे प्रभात नया।

सपना मेने देखा,या सपने ने
मुझे देखा ,यह तो पता नहीं
पर सफर मिला ,राह मिली
जीवन को नया दृष्टिकोण मिला।

तड़पती तरसती राहो को
आनंद से भरता जहां मिला।
सपने से ही कल उम्मीदों
का सारा जहां मिला।

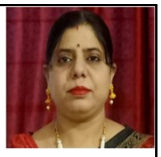

### मनीषा 'सुमन'

**"मनहरण घनाक्षरी"**

आई ऋतु मतवाली
बागों की छँटा निराली
हर्षित फूलों की डाली
आओ झूमें रे आली।

पवन झकोरे गाएं,
भंवरे भी अब बौराएं
मन चंचल हर्षाए
छायी रे हरियाली।

गेहूँ पर आई बाली
पलाश फूलों पे लाली
सरसों फूली सजीली,
फैली रे खुशहाली।

फैली प्रभा सुनहली
अंबर आभा है नीली
विहँसे धरा गर्वीली
माटी महके गीली।

बासंती बहार झांकी
अवनी फूलों की थाली
निहार रहे ये नयना
ऋतु आई गुलाली।

रवि शंकर सिंह
आरा



# "मानवीय संवेदना को बचाने में सफल रहे रंगकर्मी"

जब किसी भी पात्र को कोई रंगकर्मी आत्मसात करता है तो वह उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व में घुल -मिल जाता है।उस किरदार के विचार ,भावना,भाषा और शारीरिक हाव -भाव उसमें रच बस जाते हैं।उसमें कोई बनावटी स्वरूप मंच पर नहीं उभरता है।यदि वास्तव में रंगकर्मी इन चीजों को आत्मसात ना कर सकेगा तो जाहिर है कि उसे असफलता प्राप्त होगी।मेरी नजर में कलाकार का सबसे बड़ा गुण उसकी प्रामाणिकता है ।कभी -कभी अत्यधिक उत्साह के कारण कुछ भूल हो जाती है तो उसे नजरअंदाज करना चाहिए ,इस शर्त पर कि उसे दोहराया ना जाये ।रंगकर्मी को यह मानना पड़ेगा कि नाटक एक सामाजिक क्रिया है ।जिस तरह हम समाज से कट कर नहीं रह सकते उसी तरह रंगमंच की जिम्मेदारी से भी अलग नहीं रह सकते है।उसके दशा -दिशा और गम्भीर पक्षों को दर्शकों के सामने रखना पड़ेगा।

आरा शहर में 'भूमिका ' की ओर से 24 दिसम्बर से 27 दिसम्बर को प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. असग़र वजाहत के नाटक ***'जिस लाहौर नहीं देख्या ओ जम्याइ नइ*** 'के चार दिवसीय नाट्य मंचन किया गया।नाट्य मंच आरा के नागरी प्रचारिणी सभागार में किया गया।भारत और पाकिस्तान के विभाजन पर आधारित कहानी से निर्देशक श्रीधर ने आरा के रंगप्रेमियों को विभाजन की त्रासदी से रूबरू करवाया। रंगमंच रतन की माँ का घर ,चाय की दुकान और मस्जिद में बंटा हुआ था।पहले दृश्य की शुरुआत रतन की माँ के घर से होती है ।पाकिस्तान के लाहौर के एक मोहल्ले में स्थित एक ऐसा घर जिसमें रहने वाला हिन्दू परिवार बुजूर्ग महिला को छोड़कर भारत चला जाता है।भारत के लखनऊ शहर से आये मुसलमान परिवार को घर एलॉट कर दिया जाता है।सरकारी मुलाजिमों की गलतियों के कारण एक महिला के रहते हुए भी दूसरे को घर दे दिया जाता है।

'जिस लाहौर नहीं देख्या ओ जाम्याइ नइ 'में रतन की माँ (माई)एक महत्वपूर्ण पात्र है।माई की भूमिका के लिए खुशबू स्पृहा ने एक बुजुर्ग महिला की वेशभूषा धारण की।इस वेशभूषा में वे इतनी सहज लगती हैं कि नाटक देखते हुए यह एहसास ही नहीं होता कि यह बुजुर्ग महिला खुशबू स्पृहा हैं।हालांकि कलाकारों के वेशभूषा को पात्र के अनुकूल बनाने में चित्रकार राकेश कुमार दिवाकर और संजीव सिन्हा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।संवाद की विशिष्टता को अपने उच्चारण से उम्दा तरीके से मंच पर दर्शाया ।पंजाब की खालिस बोली को प्रमाणिकता का विशेष ध्यान रखी।दूसरे शब्दों में कहें तो विभाजन की त्रासदी को बयान करने वाली कहानी की संवेदनशीलता और भावनात्मकता को बचाने में खुश्बू सफल रहीं। उन लाखों परिवारों की तरह सिकन्दर मिर्जा का परिवार है।जो दूसरे मुल्क से आकर लाहौर में अपना जीवन सूख -शान्ति से बिताना चाहता है।सिकन्दर मिर्जा की भूमिका लोकेश कुमार दिवाकर ने निभाई।उन्होंने पात्र के व्यक्तित्व की सहजता और सरलता को बरकरार रखें।नाटक में इस तरह से गढ़ा गया है वह उनके अभिव्यक्ति से मेल खा रहा था।सिकन्दर मिर्जा की पत्नी हमीदा बेगम की भूमिका पूजा कुमारी ने निभाई ।पूजा को पिछले कई नाटकों में भूमिका करते हुए देखने को मिला है।अभिनय में जितनी परिपक्वता दिखाई देनी चाहिए थी।वह नजर नहीं आई ।उन्हें रंगमंच की बारीकियों को समझने की जरूरत है।विशेषकर भाषा पर काम करने की जरूरत है।सिकन्दर मिर्जा के परिवार में दो और सदस्य हैं एक उनकी लड़की तन्नो और दूसरा उनका पुत्र जावेद मिर्जा ।एक चंचल बच्ची की भूमिका के साथ अनि सुप्रिया ने इंसाफ की।अनि सुप्रिया को कहीं भी अतिरंजित और नाटकीय अभिव्यक्ति करने की आवश्यकता नहीं पड़ी।सहज तरीकें से तन्नो की भूमिका को अपने आप मे समेट ली थी।जावेद मिर्जा के पुत्र सन्तोष कुमार सिंह अपने पात्र को संभालने का भरकस प्रयास किये ,अपने चेहरे के भाव को बनाये रखें।हालांकि मेरा मानना है कि पात्र के लिए इससे भी बेहतर चुनाव किया जा सकता था।

मंच के दूसरे भाग में चाय की दुकान को देखते हैं।अलीमुद्दीन चायवाले की भूमिका को आजाद भारती ने बेहतरीन तरीके से निभाया।लाहौर की एक छोटी -सी चाय

की दुकान जहाँ आम नागरिक ,बुद्धिजीवी वर्ग चाय पीने आते हैं।लेकिन चाय वाले के पात्र में उर्दू भाषा को लेकर निराशा झलक रहा था।हामिद के किरदार को दीपक सिंह ने उम्दा तरीके से निभाई ।दीपक सिंह मंच की बारीकियों को ध्यान में रखकर पात्र का निर्वाह करते हैं।

निर्देशक श्रीधर ने प्रसिद्ध शायर नासिर काजमी के पात्र की भूमिका बेहतरीन तरीके से निभाई।नासिर साहब की गजलों को अपने अंदाज में लयबद्ध कर समाज की भयावह स्थिति, साम्प्रदायिकता ,नफरत ,व्यक्तिगत लिप्सा,अशान्ति आदि के प्रभावों से उत्पन्न समाजिक विघटन से दर्शकों को स्पर्श कराने में सफल रहें।दृश्यों में कहीं -कहीं कमजोरी नजर आई किंतु उन्होंने नाट्यानुभव से इसे सम्भल लिया।पहलवान (पहलवान मोहल्ले के मुस्लिम लीगी नेता )की भूमिका रंजन यादव ने निभाई ।पहलवान नाटक के राजनीतिक घटना चक्र के खिलाड़ी और मोहरा है।समुदाय में नफरत के शिकार बनाने में असफल हो जाता है तो मौलवी की हत्या कर देता है।रंजन यादव रंगमंच पर नफरत ,अशान्ति और आतंक फैलाने में सफल रहे।लेकिन पहलवान की भूमिका को अपने तरीके से निभाया।पहलवान का जो पात्र था उसको समझने में इनसे चूक हो गई।अभिनय में अपरिपक्वता और अतिरंजिता साफ झलक रहा था।पहलवान के साथी अनवर की भूमिका कुणाल ने अपने अलग -तरह की अभिनय शैली से दर्शकों को प्रभावित किया।हालांकि कुणाल ने भी अपने पात्र को समझने चूक गये ।

पहलवान के साथ मंच पर समन्वय स्थापित ना करना ,कई बार पहलवान के अभिनय को दबाते हुए आगे निकल जाना ,ये सब अतिउत्साह का परिणाम था।

मंच के तीसरे भाग में मस्जिद है जहाँ मौलवी नवाज अदा करते हैं और उनकी हत्या भी वहीं हो जाती है।मौलवी इकरामनुद्दीन की भूमिका सुधीर सुमन ने सहजता से मंच पर रखे।अपने किरदार से यथार्थपरक,संवेदनशीलता,और मानवीयता का परिचय दिया। हालांकि उन्होंने संवाद में उतार-चढ़ाव के खटास के कारण पात्र के कुशल भाव को उकेरने में चूक गये।हामिद बेगम की भूमिका उत्तम मिश्रा ने निभाई ।उनके अभिनय में नाट्य अभ्यास की कमी उनके संवाद से झलक रही थी।नाटक के दो ऐसे पात्र हैं उन्होंने छोटी भूमिका निभाई ।क्लर्क -1की भूमिका में सुभाष चन्द्र वशु और क्लर्क -2 की भूमिका में ओम प्रकाश पाठक ने अपनी भूमिका से दर्शकों के जेहन पर छाप छोड़ने में सफल रहें।इन दोनों रंगकर्मियों में अद्भुत ऊर्जा भरा हुआ है।जो रंगमंच पर बेहतरीन जोड़ी के रूप में नजर आईं।

आज धर्म,जाति, भाषा आदि के नाम पर एक समुदाय से दूसरे समुदाय से लड़ाया जा रहा है।धर्म के नकली ठेकेदारों द्वारा धार्मिक भावना को भड़काया जाता है। रंगकर्मी उनके वास्तविक राजनैतिक और व्यक्तिगत मकसद को दर्शकों से रूबरू कराते हैं।यह कहानी पाकिस्तान के लाहौर की नहीं है बल्कि पूरे विश्व की भी कहानी है।अपने फायदे के लिए राजनैतिक माहौल बनाया जाता है।अंततः हमारे सामने मानवीय त्रासदी के रूप में उभर कर आती है।ज्यादातर असहाय ,गरीब कमजोर वर्ग के लोग मारे जाते हैं।

## काव्य

सरिता सिंह
गोरखपुर

### "पवन बसंती आती है"

पवन बसंती आती है जब याद तुम्हारी आती है
मीठे-मीठे पवन के झोंके मिलन की याद दिलाती है

चांद के संग चंचल चंदनिया चादर चकोर लुभाती है
कलियां प्यारी खिलकर सारी मधुबन को महकाती हैं
.....पवन बसंती आती है याद तुम्हारी आती है

पहन के पीली चुनरी तन पर प्रियतम मन को लुभाती है
एक नशा सा छा जाता मन पे जादू कोई कर जाती है
.....पवन बसंती आती है याद तुम्हारी आती है

माथे पर चंदन बनके सोना चम चम ये चमकाती है
यह प्यारा मधुमास यौवन का रोम-रोम मुस्काती है
.....पवन बसंती आती है याद तुम्हारी आती है

प्रेम तुम्हारा मधुरस जैसा अंग अंग रस ये जगाती है
एक नजर जो देखे प्रीतम आंखें यह झुक जाती हैं
.....पवन बसंती आती है याद तुम्हारी आती है

शुष्क धरा को पुलकित पुष्पित मधुमित ये कर जाती है।
हरित खेत में प्रमुदित मौसम,शुभ अरूणित यह कर जाती है
.....पवन बसंती आती है याद तुम्हारी आती है

विविध रंग खिल गुल उपवन, में,खग गुंजित ये कर जाती है
खिल के कुमुदिनी ,रजनीगन्धा,उपवन सुरभित कर जाती है
.....पवन बसंती आती है याद तुम्हारी आती है

**सुनीता धीमान**

सह आचार्य, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला



# प्रख्यात लेखक एस आर हरनोट के रचनाकर्म पर दो पत्रिकाओं के विशेषांक लोकार्पित.

प्रख्यात कथाकार उपन्यासकार एस.आर. हरनोट के अबतक के साहित्यिक व सांस्कृतिक योगदान पर दो साहित्यिक पत्रिकाओं- सेतु और कविकुम्भ केविशेषांक प्रकाशित हुए हैं और शिमला में उनके लोकार्पण और परिचर्चाएं भी दो भव्यआयोजनों में सम्पन्न हुई है।हिमाचल शिमला के एक पिछड़े गांव के निवासी एस आर हरनोट अपने चौथे कहानीसंग्रह दरोश तथा अन्य कहानियां पुस्तक के प्रकाशन के बाद उस समय चर्चा में आए जब इससंग्रह पर हिंदी के शीर्ष सिद्धहस्त आलोचक डॉ. नामवर सिंह ने दिल्ली दूरदर्शन परप्रख्यात कवि मदन कश्यप के साथ चर्चा की और उसके बाद इस संग्रह को अंतरराष्ट्रीयइंदु शर्मा कथा सम्मान और हिमाचल अकादमी पुरस्कार से नवाजा गया। शायद ही उसके बाददेश की कोई ऐसी पत्रिका रही होगी जिसने इस संग्रह का नोटिस न लिया हो। उसके बादउनकी कभी न रचनात्मक यात्रा रुकी और न ही उन पर की जा रही चर्चा रुकी। वे आज भीपूर्व की तरह सक्रिय, ऊर्जावान और रचनात्मक है. अपने लेखन के साथ साथ उन्होंने अपनी संस्था हिमालय साहित्य संस्कृति एवं पर्यावरण मंच के माध्यम से शिमला में एक ऐसा साहित्यिक माहौल तैयार किया है जिसकी धमक न केवल प्रदेश में बल्कि देश भर में सुनाई दे रही है.

पॉल, सेतु पत्रिका के संपादक डॉ.देवेंद्र गुप्ता, डॉ. विद्या निधि छाबड़ा और ख्यात कवि आलोचक आत्मा रंजन द्वाराहरनोट के रचनाकर्म और साहित्य तथा मीडिया की भूमिका पर अपने अपने वक्तव्य दिए। इस विशेषांकमें हरनोट पर केंद्रित शब्द शिखर खंड के अंतर्गत चालीस पृष्ठों की महत्वपूर्णसामग्री मेंप्रो.सूरजपालीवाल, डॉ.विनोदशाही, डॉ.उमाशंकर सिंह परमार, डॉ.चेतालीसिन्हा के महत्वपूर्णआलेख और हरनोट के साक्षात्कार सहित उनके कई सामायिक विषयों पर आलेखों के साथ साथ उनकीपहली बार कुछ कविताएं भी प्रकाशित की हैं।

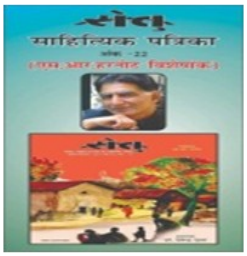

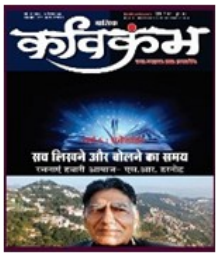

दूसरा दो सौ पच्चास पृष्ठों कामहत्वपूर्ण विशेषांक सेतु पत्रिका नेडॉ.देवेंद्रगुप्ता के संपादन में प्रकाशित किया है। गुप्ता जी प्रशासनिक सेवा में रहते हुए कईसालों से सेतु का प्रकाशन कर रहे हैं जिसका यह 22 वां अंक है। वे हिमाचल प्रदेशक्रिएटिव राइटर्स फोरम के अध्यक्ष भी हैं और उन्होंने उपरोक्त साहित्योत्सव मेंहिमाचल अकादमी और ओकार्ड इंडिया के संयुक्त संयोजन में 1 जनवरी, 2022के दिन शिमला के रोटरी क्लब सभागार में हिमाचल प्रदेशविश्वविद्यालय के कुलपति आचार्य सिकंदर कुमार के कर कमलों से संपन्न करवाया। मंचपर उनके













पहला विशेषांक देहरादून से डॉ.रंजिता सिंह तथा जय प्रकाश त्रिपाठी के संपादन में प्रकाशित होने वाली पत्रिका कविकुंभ नेहरनोट पर केंद्रित किया और प्रशंसनीय तथा महत्वपूर्ण कार्य यह हुआ कि इसकालोकार्पण शिमला में 28 दिसंबर, 2021को रंजिता सिंह औरत्रिपाठी जी ने वहां हिमाचल अकादमी और देश भर में पुस्तक मेलों के आयोजक ओकार्डइंडिया द्वारा आयोजित साहित्य उत्सव व पुस्तक मेले में किया गया। इस आयोजन कीअध्यक्षता हिमाचल प्रदेश भाषा विभाग के निदेशकडॉ.पंकजललित ने की और रंजिता सिंह ने विस्तार से हरनोटपर केंद्रित विशेषांक के बारे में चर्चा की। जानीमानी लेखिका और अनुवादकप्रो.मीनाक्षीएफ

अतिरिक्तप्रो.मीनाक्षीएफ पॉल, डॉ.कर्म सिंह, सचिव हिमाचल अकादमी विराजमान थे।अध्यक्षता प्रख्यात आलोचक डॉ. हेमराज कौशिक ने की। अपने स्वागत वक्तव्य में डॉ.गुप्ता ने कहा कि यह विशेषांक हरनोट के रचनाकार विशेष और कृतित्व को समक्ष रखते हुएविवेचित और विश्लेषित किया गया है। हरनोट के लेखन की शुरुआत अस्सी के दशक में हुईथी और उनका पहला कहानी संग्रह वर्ष1987में आया और उसकेबाद उनके लेखन की निरंतरता आज तक बनी हुई है। आज उनके खाते में बीस के करीबपुस्तकें हैं और उनका नया उपन्यास जल्दी ही प्रकाशित हो रहा है। वे लेखक के साथ साथएक सामाजिक

एक्टिविस्ट भी है। मुख्य अतिथि आचार्य सिकंदर कुमार ने इस विशेषांक केलिए बधाई देते हुए उनके साहित्य योगदान और निरंतर लेखन के लिए भूरी भूरी प्रशंसाकी।

मुख्य वक्ता के रूप में हिमाचल विश्वविद्यालय की डीन जानीमानी लेखिकाऔर अनुवादक प्रो. मीनाक्षी एफ पॉल, युवा कवि आलोचकडॉ.सत्यनारायणस्नेही, युवा कवि आलोचकडॉ.प्रशांतरमन रवि ने हरनोट के साहित्य अवदान औरसेतु पत्रिका के विशेषांक पर विस्तार से अपनी बात रखी। सभी का मानना था कि हिंदीकहानी और उपन्यास पर वर्तमान समय में चर्चा हरनोट के बिना अधूरी होगी। उनकीकहानियों के विषय अत्यंत गंभीर और दुर्लभ हैं और ये कहानियां स्थानीय होते हुए भीवैश्विक हो जाती हैं। हरनोट जीवन में, व्यवहार में जितने सच्चे हैं लेखन में उतनेही ईमानदार और निष्पक्ष भी। बहुत कम लेखक हैं जिनकी कथनी और करनी में अंतर नहींहोता और हरनोट वैसे ही हैं। सभी वक्ताओं ने इस विशेषांक के लिए देवेंद्र गुप्ता कोसाधुवाद दिया।

अन्य वक्ताओं में कविकुंभ की संपादिका व गजलकार रंजिता सिंहफलक और शिक्षक लेखक जगदीश बाली ने भी संक्षिप्त रूप में अपनी बात रखी। हरनोट जी केगांव व पंचायत चनावग से पधारे दूरदर्शन व आकाशवाणी शिमला के एंकर तथा लोक कलाकारजगदीश गौतम ने हरनोट के ग्रामीण सरोकारों पर अपना वक्तव्य दिया। इस आयोजन में हरनोटपर पहली शोध छात्रा और वर्तमान में हिंदी की सहायक प्रोफेसरडॉ.सुनीताधीमान और हरनोट पर पीएचडी कर रही रीनाकुमारी ने भी अपने अनुभव साझा किए और उनके साहित्य पर चर्चा की।दूरदराज गाँव से ही आये ८६ वर्षीय शिक्षक तथा साहित्य के गंभीर पाठक जगत प्रसाद शास्त्री ने इस विशेषांक के लिए जहाँ संपादक देवेन्द्र गुप्ता का आभार व्यक्त किया वहीँ उन्होंने प्रख्यात कवि आलोचक डॉ.कुमार कृषण द्वारा अपनी कविता पुस्तक 'उम्मीद का पेड़' में संकलित हरनोट पर लिखी एक सुंदर कविता 'चुनरी में पहाड़' का उल्लेख किया जिसका पाठ डॉ. स्नेही पहले ही कर चुके थे. हिमाचल विश्वविद्यालय में अंग्रेजी की सह आचार्य कवि कथाकार प्रियंका वैद्य ने हरनोट की बहुचर्चित कहानी 'आभी' का पाठ अपने सुंदर अंदाज में किया।

सेतु का यह विशेषांक डॉ. देवेंद्र गुप्ता ने विशेष तौर पर हरनोट की दिवंगत मां की स्मृतियों को समर्पित किया है। नौ खंडों में विभाजित इस विशेषांक में पांच चर्चित कहानियां फ्लाई किलर, आभी, जीनकाठी, बिल्लियां बतियाती हैं और बेजुबानदोस्त ली गईं हैं। इसके अतिरिक्त उन पर देश के कई बड़े आलोचकों के पत्र पत्रिकाओं और आलोचना पुस्तकों में संग्रहित आलेख और टिप्पणियां, हिडिंब उपन्यास पर आलेख, हरनोट प्रियजनों की नजर में, पत्र और उनका संक्षिप्त परिचय शामिल है।

कहानियों और उपन्यास पर विशेष टिप्पणियां और आलेख नामवर सिंह, चित्रामुद्गल, बच्चन सिंह, कमलेश्वर, ज्ञानरंजन, सूरज पालीवाल, रोहिणी अग्रवाल, गौतमसान्याल, खगेंद्र ठाकुर, रमेश उपाध्याय, पुष्पपाल सिंह, स्मृति शुक्ल विद्यासागरनौटियाल और श्रीनिवास श्रीकांत की हैं जिनसे हरनोट के साहित्यकार और रचनाकर्म कीरेंज को गहराई से समझा जा सकता है. "परिजनों की नजर में हरनोट" खंड में कैलाशअहलूवालिया, कुमार कृष्ण, मीनाक्षी एफ पॉल, सत्यनारायण स्नेही, गणेश गनी, गुप्तेश्वरनाथ उपाध्याय, मुरारी शर्मा, दिनेश शर्मा और सीताराम सिद्धार्थ ने बहुतही विनम्र अंदाज में उनके कृतित्व व व्यक्तित्व पर अपनी बात कही है। हरनोट से सेतुके संपादक ने लंबी बातचीत भी की है। कुल मिलाकर यह अंक हमारे समय के जरूरी औरचर्चित रचनाकार पर एक दस्तावेज हैं जिसका हिंदी जगत अवश्य स्वागत और चर्चा करेगा। अंक काविशेष आकर्षण हरनोट की पंचायत तथा उनके ग्रामीण क्षेत्र से आये उनके प्रशंसक थे जिन्होंने हिमाचली शाल और टोपी देकर हरनोट का सम्मान किया. दूसरा आकर्षण दस पौंड का सुंदर केक रहा जिसे हिमालय साहित्य मंच के सदस्यों डॉक्टर मधु शर्मा कात्यायनी, सीताराम शर्मा, गुल्पल वर्मा और दीप्ति सारस्वत ने बतौर बधाई लाया था जिसे हरनोट और उनकी धर्मपत्नी ने काटा.

खचाखच भरे रोटरीक्लब के सभागार में शिमला और आसपास के युवा और वरिष्ठ लेखक तथा विद्यार्थियों सहितउनके गांव के लोग व परिजन उपस्थित रहे। यह पहलीबार था जब बहुत से प्रशंसक साहित्यप्रेमी देर तक जगह न मिलने की वजह से खड़े भी रहे। हिमाचल के किसी लेखक पर किसीसाहित्यिक पत्रिका का वहीँ की पत्रिका द्वारा प्रकाशित अब तक का यह एकमात्र समग्र विशेषांक है।

संपर्क: डॉ. देवेंद्रगुप्ता, संपादक सेतु, मो.+917018951598
डॉ.रंजितासिंह, संपादक, कविकुंभमो.+919548181083

## कबीर

**सोना, सज्जन, साधु जन ,टूट जुडै सौ बार**
**दुर्जन कुम्भ कुम्हार के , ऐके धक्का दरार**

**एक ते अनंत अंत एक हो जाय**
**एक से परचे भया एक मोह समाय**

**आवत गारी एक है , उलटन होय अनेक**
**कह कबीर नहिं उलटिए वहीं एक की एक**

## चित्रकार— तेजसी सिंह

### रचनाकारों से.....

1 -मानवी त्रैमासिक ई पत्रिका सभी लेखकों/ कवियों/ कथाकारों/ व्यंग्यकारों.....से हिंदी साहित्य की सभी विधाओं यथा लेख/ आलेख/ निबंध/ संस्मरण/ कथा/ कहानी/गीत/नवगीत/ग़ज़ल/कविता/समीक्षा इत्यादि पर स्वलिखित, मौलिक, अप्रकाशित एवं अप्रसारित रचनाएं आमंत्रित करती हैं।

2 -कृपया कविता /गीत /ग़ज़ल आदि रचनाएं दो से अधिक न भेजें। भेजने से पहले वर्तनी त्रुटि सुधार कर उत्कृष्ट रचनाएं manvipatrika@gmail.com पर ही भेजें।

3-रचनाऐं वर्ड फाइल /यूनीकोड में भेंजे। पीडीएफ फाइल स्वीकार्य नहीं है।

4-कृपया माह में पड़ने वाले दिवसों /त्योहारों को ध्यान में रखते हुए अपनी रचनाएं भेजें।

5-कृपया रचना के साथ अपना संक्षिप्त परिचय, पता, कान्टैक्ट नंबर , एवं छाया चित्र भी भेजें।

6-कृपया रचना के साथ साथ , स्वप्रमाणित भी करें कि प्रेषित रचना , मौलिक, स्वलिखित , अप्रकाशित एवं अप्रसारित हैं, अन्यथा रचनाओं पर विचार संभव नहीं है।

7- एक बार में अपनी एक या दो ही उत्कृष्ट रचनाएं भेजे,और पत्रिका के प्रकाशन का इंतजार करें लगातार रचना भेजने का कोई तात्पर्य नहीं है।

8 -यह एक अव्यवसायिक नि: शुल्क ई पत्रिका है, रचनाकारों को पारिश्रमिक देने का कोई प्रावधान नहीं है।

9-समीक्षा के लिए, पुस्तकों की दो प्रतियां सम्पादकीय पते (बी-701,स्वाति फ्लोरेंस, निकट सोबो सेंटर, साउथ बोपल, अहमदाबाद-380058,गुजरात ,मोबाइल-9833775798) पर भेजें। स्वयं समीक्षा भेजने पर पुस्तक की एक ही प्रति भेजें।

10-रचना प्रकाशन और रचना संशोधन का अधिकार संपादक मंडल का होगा ।संपादक मंडल का निर्णय मान्य अन्तिम एवं बाध्यकर होगा।

# "मतिराम"

**प्रान पियारो मिल्यो सपने मैं, परी जब नैंसुक नींद निहोरैं।**
**कंत को आगम ज्यों ही जगाय, कह्यो सखी बोल पियूष निचोरैं॥**

**यों 'मतिराम भयो हिय मैं सुख, बाल के बालम सों दृग जोरैं।**
**जैसे मिहीं पट मैं चटकीलो, चढै रंग तीसरी बार के बोरैं॥**

(मतिराम, हिंदी के प्रसिद्ध ब्रजभाषा कवि थे। इनके द्वारा रचित "रसराज" और "ललित ललाम" नामक दो ग्रंथ हैं; परंतु इधर कुछ अधिक खोजबीन के उपरांत मतिराम के नाम से मिलने वाले आठ ग्रंथ प्राप्त हुए हैं। इन आठों ग्रंथों की रचना शैली तथा उनमें आए और उनसे सम्बंधित विवरणों के आधार पर स्पष्ट ज्ञात होता है कि मतिराम नाम के दो कवि थे। प्रसिद्ध मतिराम फूलमंजरी, रसराज, ललित ललाम और सतसई के रचयिता थे और संभवत: दूसरे मतिराम के द्वारा रचित ग्रंथ अलंकार पंचासिका, छंदसार (पिंगल) संग्रह या वृत्तकौमुदी, साहित्यसार और लक्षण शृंगार हैं।)

श्रोत-विकिपीडिया